RNI-UPBIL/2011/38102

ISSN-2231-5837

Indian Journal of Social Concerns

इण्डियन जर्नल ऑफ सोशल कन्सर्न्स

(कला–मानविकी–समाजविज्ञान–जनसंचार–विधि–वाणिज्य–विज्ञान, वैचारिकी की अंतरराष्ट्रीय द्विमासिक शोध पत्रिका)

Volume -13: Issue - 57 Jan. - Feb. 2024 Ghaziabad

A RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND SOCIAL SCIENCES

(An International Peer-Reviewed & Refereed Journal)

Journal Impact Factor No. : 7.841

Editor
Dr. RAJ NARAYAN SHUKHLA

Asstt. Editor
Dr. MUKTA SONI

Art Editor
Dr. MANISHA VERMA

Legal Advisor
Dr. JASWANT SAINI
SHRI BHAGWAN VERMA

Office Assistant
JITENDER GIRDHAR

Editor in Chief
Dr. HARI SHARAN VERMA

Sub Editor
Dr. PUSHPA
Dr. BEENA PANDEY (SHUKLA)

Managing Editor
Dr. SANGEETA VERMA

Joint Editor
Dr. PRIYANKA SINGH
Dr. SUBHASH SAINI

Computer Operator
MS. NEHA VERMA

- The responsibility of the originality of the articles/papers shall be of the author.
- The editor does not owe any kind of responsibility in this regard

Dr. Hari Sharan Verma
D.Litt
Editor in Chief

Dr. Raj Narayan Shukhla
Editor

Dr. Sangeeta Verma
Managing Editor

मानविकी शोध पीठ प्रारम्भ सोसायटी,
गाज़ियाबाद द्वारा संचालित

LIFE MEMBERS OF INDIAN JOURNAL OF SOCIAL CONCERNS

1. **Dr. Praveen Kumar Verma**
Associate Professor, Hindi Department, GGD Sanatan Dharam Post Graduate College, Palwal.

2. **Smt. Veena Pandey (Shukla)**
Hindi Teacher, Jawahar Navodya Vidyalya, Dhoom Dadri, Distt. Gautambudhnagar - 203207 (U.P.)

3. **Dr. Suman**
H.No. 1001, Radha Swami Colony, Rohtak Road, Bhiwani (Haryana)

4. **Dr. Subhash Chand Saini** (Hindi Department, Dyal Singh College, Karnal, Haryana

5. **Dr. Vimla Devi,** Associat Professor (History), Swami Vivekanand Govt. (PG) College, Lohaghat, Champawat (Uttrakhand)

6. **Princepal,** Associat Professor (Hindi), Aggarwal College, Ballabhgarh (Haryana)

7. **Dr. Dinesh Mani Tirpathi (Principal)** L-P=-K Inter College sardar Nagar, Basdila Gorkhpur

8. **Dr. Govind Prakash Acharya** F--63, Chandra Vardai Nagar, UIT, Colony, Shaheed Bhagat Singh Marg, Opposite Ramganj Thana, Taragarh Road, Ajmer (Rajasthan) Pincode--305003.

9. **Amardeep Singh** Mcf C -21, Near Deep Vatika, Bhagat Singh Colony, Ballabgarh121004, Mob. 9873814066

प्रकाशक : डॉ० राजनारायण शुक्ला, सम्पादक
SH, A-5, कविनगर, गाजियाबाद (उ० प्र०)
दूरभाष : 9910777969
E-mail : *harisharanverma1@gmail.com*
WWW.IJSCJOURNAL.COM

सहयोग राशि (भारत में)
(व्यक्तिगत) (आजीवन 5100 रुपये)
(संस्थागत) (आजीवन 7100 रुपये)

कृपया सहयोग राशि बैंक ड्राफ्ट से ही भेजें।
बैंक ड्राफ्ट, संपादक "इण्डियन जर्नल ऑफ सोशन कन्सर्न्स" के पक्ष में देय होगा। आजीवन सदस्यता केवल दस वर्षों के लिए मान्य होगी। यदि किसी कारणवश पत्रिका का प्रकाशन बन्द हो जाता है तो आजीवन सदस्यता स्वतः ही समाप्त हो जायेगी।

संपादकीय कार्यालय :

1. **डॉ० हरिशरण वर्मा, प्रधान सम्पादक**
F-120, सेक्टर–10, DLF, फरीदाबाद (हरियाणा)121006
harisharanverma1@gmail.com 09355676460
WWW.IJSCJOURNAL.COM
2. **डॉ० राजनारायण शुक्ला, सम्पादक**
SH, A-5, कविनगर, गाजियाबाद (उ०प्र०)

क्षेत्रीय सम्पादक

1. डॉ० वाई.आर. शर्मा, A-24, रेजिडेंसल कैम्पस, न्यू कैम्पस, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू–180001, फोन : 09419145967
2. डॉ0 सलमा असलम, ओल्ड टाउन बारामुला, कश्मीर पिन – 193101, मौ0 9682162934
3. डॉ0 आरती लोकेश P.o.Box 99846, Dubai, UAE 97150-4270752
4. श्री मोहनलाल, 11 अशोक विहार, संजय नगर, पो. इज्जत नगर बरेली (उ०प्र०) फोन : 09456045552
5. श्री जितेन्द्र गिरधर, कार्यालय सहायक 105/26 जवाहर नगर,कॉपरेटिव बैंक के पीछे, रोहतक 09896126686
6. डॉ0 विमला देवी, सहायक प्रोफेसर (इतिहास) (उत्तराखण्ड)–262524 – 9411900411
7. डॉ0 प्रिया कपूर, सहायक प्रोफेसर, डी0 ए0 वी शताब्दी कालेज, फरीदाबाद मौ0 9711196954
8. डॉ0 ऊषा रानी, हिन्दी – विभाग हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला – 5
9. विमला टोप्पो, एस0 आर0 इंटरप्राइसेस म्युनिसिपल काम्पलेक्स सोप न0 4, डेरी फार्म, पोर्ट बलेयर, पी0 ओ0 जंगली घाट – 744103 साउथ अंडमान
10. डॉ0 राजपाल, सहायक प्रो0 राजकिय स्नातकोत्रर महाविद्यालय, हिसार
11. डॉ0 प्रवेश कुमारी, सहायक प्रो0 (हिन्दी – विभाग), बाबा मस्तराथ, विश्वविद्यालय, रोहतक, (हरियाणा)

संरक्षक मण्डल :

1. **प्रो0 डॉ0 चकधार त्रिपाठी कुलपति,** उड़ीसा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, कोरापुट, 763004, चलभाषाः 9437568809
2. **डॉ0 दिनेश मणी त्रिपाठी**, प्रधानाचार्य एन0 पी0 के0 आई कालेज, सरदार नगर बसडीला (गोरखपूर) उ0प्र0
3. **डॉ० नरेश मिश्रा** (पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
4. **डॉ० वाई.आर.शर्मा,** (राजनीति शास्त्र विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू)
5. **डॉ0 सुंधांशु कुमार शुक्ल** चेयर हिन्दी, आई. सी. सी. वार्सा विश्वविद्यालय, वार्सा (पोलैन्ड) मौ0 48579125129
6. **डॉ0 तपन कुमार शण्डिल्य, कुलपति,** डॉ0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय राँची, (झारखण्ड) 9431049871
7. **डॉ0 जंगबहादुर पाण्डेय** (पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग) रांची विश्वविद्यालय, रांची – 834008
फोन : 09431595318
8. **सुदेश रावत** प्रांचार्या एस. एन. आर. जयराम महिला कॉलेज, लोहार माजरा, कुरूक्षेत्र हरियाणा 36119 (सेठ नारंग राय लोहिया जय राम महिला कॉलेज)
9. Sh. Butta Singh gill, PPS, Dy Superintendent of Police. # No 409 ,Street no 7 Ghuman Nagar , Sarhind Road, Patiala Punjab -147001.

परामर्शदात्री समिति :

1. **डॉ0 विजयदत्त शर्मा, पूर्व निदेशक, हरियाणा ग्रन्थ अकादमी पंचकूला(हरियाणा)**
2. **डॉ० सुधेश** (पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली)
3. **डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल** (पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर)
4. **डॉ० राजकुमारी सिंह,** प्रोफेसर एफ.टी.एम. विश्वविद्यालय लोधीपुर राजपूत मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश 9760187147
5. **डॉ० माया मलिक,**पूर्वप्रोफेसर हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
6. **डॉ० ममता सिहल,** (प्रोफेसर एवं अध्यक्षा अंग्रेजी विभाग) जे०वी० जैन कॉलेज सहारनपुर
7. **डॉ० विनीत बाला,** सहायक प्रो. भूगोल विभाग, वैश्य पी.जी. कॉलेज, रोहतक

संपादकीय विशेषज्ञ समिति :
हिन्दी विभाग:

1. **डॉ० राजेश पाण्डे** (डी.वी. कॉलेज, उरई, जिला जालौन, उ०प्र०)
2. **डॉ0 अनिता, सहायक प्रोफेसर**, (हिन्दी), श्री अरबिन्दो कालिज दिल्ली (सांध्य) मौ0 :8595718895
3. **डॉ० सुशील कुमार शर्मा** (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय शिलांग, मेघालय)
4. **डॉ० शशि मंगला,** पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पलवल
5. **डॉ0 के0डी0 शर्मा,** पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त, सनातन धर्म स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पलवल
7. **मुकेश चन्द्र गुप्ता** (हिन्दी विभाग, एम.एच.पी.जी. कॉलेज, मुरादाबाद)
8. **डॉ० गीता पाण्डेय** (रीडर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, एस.डी.

9. **डॉ0 प्रवीण कुमार वर्मा** (सह प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग) गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म महाविद्यालय, पलवल
10. **डॉ0 सुधा चौहान,** पूर्व अध्यक्षा हिन्दी विभाग, वैश्य कालिज, भिवानी
11. **डॉ० रूबी,** (सीनियर सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग कश्मीर
12. **डॉ0 सुमन राठी,** सहायक प्रो0 हिन्दी विभाग, मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर रोहतक
13. **डॉ0 सुधा कुमारी** (हिन्दी विभाग) एन0जी0एफ0 डिग्री कालिज, उडदू, अध्ययन केन्द्र मथूरा रोड, पलवल 982719456
14. **डॉ० एम. के. कलशेट्टी,** हिन्दी विभाग, श्री माधवराव पाटिल महाविद्यालय, मुरूम तह० अमरगा, जिला उस्मानाबाद (महाराष्ट्र)–413605
15. **डॉ० मनोज पंड्या,** व्याख्याता हिन्दी विभाग, श्री गोविन्द गुरु, राजस्थान महाविद्यालय, बांसवाड़ा–327001, मो० 09414308404
16. **डॉ. कृष्णा जून,** प्रो० हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
17. **डॉ. विपिन गुप्ता,** सहायक प्रोफेसर, वैश्य कॉलेज भिवानी
18. **प्रो0 (डॉ0) वन्दना शर्मा, म. न. 2, प्रोफेसर लोंज, किचम सी. डी. एम.,मोदीनगर (उ.प्र.) 201204, मो0 2760411251**
19. **डॉ० जाहिदा जबीन,** (प्रो0 एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर–६)
20. **डॉ० टी०डी० दिनकर,** पूर्व प्रो0 एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग अग्रवाल कॉलेज, बल्लभगढ़)
21. **डॉ० सुभाष सैनी,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग दयालसिंह कॉलेज, करनाल, हरियाणा
22. **डॉ० उर्विजा शर्मा,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग शम्भु दयाल स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, गाजियाबाद
23. **डॉ० कामना कौशिक,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग एम.के. स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, सिरसा 09896796006
24. **डॉ० मधुकान्त,** (वरिष्ठ साहित्यकार) 211- L मॉडल टाऊन, रोहतक
25. **डॉ0 कंचन पुरी, विभागध्यक्ष,** रघुनाथ गर्ल्स पी0 जी0 कालेज मेरठ
26. **डॉ0 प्रवेश कुमारी ,** सहायक प्रो0 हिन्दी बाबा मस्तराथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर रोहतक
27. **डॉ0 राजपाल ,** सहायक प्रो0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हिसार
28. **डॉ0 प्रवेश कुमारी ,** सहायक प्रो0 टिकाराम कन्या कॉलेज, सोनीपत, हरियाणा
29. **प्रो. प्रणव शास्त्री,** प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष–हिन्दी विभाग, उपाधि महाविद्यालय, पीलीभीत – 262 001 उ. प्र. मो.98379 60530 drpranav&pbt23@rediffmail-com
30. **प्रो. राखी उपाध्याय,** प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष – हिन्दी विभाग, डी. ए .वी. कॉलेज, देहरादून – 248 001 (उत्तराखंड) मो. 94111 90099 drrakhi-418@gmail-com
31. **डॉ0 सुनीता जसवाल,** असिस्टेंट प्रोफेसर – हिन्दी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला (हिमाचल प्रदेश) मो.70186 21542

अंग्रेजी विभाग:

1. **डॉ. ममता सिहल, अध्यक्षा,** अंग्रेजी विभाग, जे.वी. जैन कॉलिज, सहारनपुर, उ.प्र.
2. **डॉ. रणदीप राणा, प्रोफेसर,** अंग्रेजी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
3. **डॉ. जयबीर सिंह हुड्डा, प्रोफेसर,** अंग्रेजी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
4. **डॉ० रविन्द्र कुमार,** एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष अंग्रेजी विभाग, चौ० चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ
5. **डॉ. अनिल वर्मा** (पूर्व रीडर, अंग्रेजी विभाग, जे.वी. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सहारनपुर)
6. **डॉ0 जे. के. शर्मा,** प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक
8. **डॉ. पी.के. शर्मा,** (प्रो., अंग्रेजी–विभाग, राजकीय के.आर.जी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर)
9. **डॉ. गीता रानी शर्मा,** (सहायक प्रोफेसर) गो.ग.दत्त सनातन धर्म कॉलेज, पलवल
10. **डॉ. किरण शर्मा,** (एसोसिएट प्रोफेसर) राजकीय स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय रोहतक
11. **डॉ0 राजाराम,** सहायक प्रोफेसर (अंगेजी) ओम स्ट्रलिंग ग्लोबल, विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

वाणिज्य विभाग:

1. **डॉ० नवीन कुमार गर्ग** (वाणिज्य विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० ए.के. जैन,** पूर्व रीडर (वाणिज्य विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर)
3. **डॉ० दिनेश जून,** एसोसिएट प्रोफेसर, वाणिज्य विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, फरीदाबाद
4. **डॉ० एम.एल. गुप्ता,** (पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, वाणिज्य एवं व्यवसायिक प्रशासन संकाय, एस.एस.वी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हापुड़ एवं संयोजक–शोध उपाधि समिति एवं संयोजक बोर्ड ऑफ स्टीडिज चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ)
5. **डॉ० वजीर सिंह नेहरा,** प्रोफेसर वाणिज्य विभाग, म.द.वि. रोहतक
6. **डॉ० संजीव कुमार,** प्रोफेसर वाणिज्य विभाग, म.द.वि. रोहतक
7. **डॉ. गीता गुप्ता,** (सहायक प्रोफेसर) वाणिज्य विभाग, वैश्य महिला महाविद्यालय, रोहतक)
7. **डॉ. नरेन्द्रपाल सिंह,** (एसोसिएट प्रोफेसर) वाणिज्य विभाग, साहू जैन कॉलेज, नजीबाबाद, उ.प्र.)

राजनीति शास्त्र विभाग:

1. **साकेत सिसोदिया,** (राजनीति शास्त्र विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद)
2. **डॉ० रोचना मित्तल** (रीडर एवं अध्यक्षा, राजनीति शास्त्र–विभाग, शम्भु दयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
3. **डॉ० कौशल गुप्ता,** एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, देशबन्धु महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली **Mob.: 09810938437**
4. **डॉ०पी.के. वार्ष्णेय**, पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, जे.वी.जैन कॉलेज, सहारनुपुर
5. **डॉ० सुदीप कुमार,** सहायक प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, पेहवा (कुरुक्षेत्र) **Mob.: 9416293686**
6. **डॉ० वाई०आर० शर्मा,** एसो० प्रो०, राजनीति शास्त्र विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू (कश्मीर)
7. **डॉ. रेनू राणा,** (सहायक प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, पं. नेकीराम शर्मा राजकीय महाविद्यालय रोहतक 124001
8. **डॉ. ममता देवी,** (सहायक प्रोफेसर, राजनीतिक शास्त्र विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

इतिहास विभाग:

1. **डॉ० भूकन सिंह** (प्रवक्ता, इतिहास विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० मनीष सिन्हा,** पी.जी. विभाग, इतिहास, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया, बिहार–824231
3. **डॉ० राजीव जून,** सहायक प्रो० इतिहास, सी.आर इन्स्टीट्यूट ऑफ ला, रोहतक
4. **डॉ० मीनाक्षी** (सहायक प्रोफेसर इतिहास विभाग) सी.आर. किसान कॉलेज, जीन्द

भूगोल विभाग:

1. **डॉ० पी.के शर्मा,** पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, भूगोल विभाग, जे.वी. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सहारनपुर
2. **रश्मि गोयल** (भूगोल विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद)
3. **डॉ० भूपेन्द्र सिंह,** एसोसिएट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, राजकीय पी.जी. कॉलेज, हिसार
4. **डॉ० विनीत बाला,** सहायक प्रो. भूगोल विभाग, वैश्य पी.जी. कॉलेज, रोहतक
5. **डॉ0 प्रदीप कुमार शर्मा**, एसोसिएट प्रोफेसर, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक

शिक्षा विभाग:

1. **डॉ० उमेन्द्र मलिक,** एसिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, म.द.वि. , रोहतक
2. **डॉ० संदीप कुमार,** सहायक प्रो० शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्लीएसोसिएट
3. **डॉ० तपन कुमार बसन्तिया,** एसोसिएट प्रोफेस, सैंटर फॉर एजुकेशन, सैंट्रल यूनिवर्सिटी ऑफ साउथ विहार, गया कैम्या, विनोभा नगर, वार्ड नं. **29**, **Behind ANMCH** मगध कालोनी, गया–**823001**बिहार**Mob.: 09435724964**
4. **डॉ० (प्रो०) अनामिका शर्मा,** प्राचार्या, एम.आर. कॉलिज ऑफ एजुकेशन, फरीदाबाद
5. **डॉ० मनोज रानी,** सहायक प्रोफेसर (अंग्रेजी) एम.एल.आर.एस. कॉलिज ऑफ एजुकेशन, चरखी दादरी (भिवानी)
6. **डॉ० अनीता ढाका,** (प्राचार्या, आर.जी.सी.ई. कॉलेज, ग्रेटर, नोएडा।)
7. **डॉ० ममता देवी,** (सहा. प्रो. बी.आई.एम.टी. कॉलेज कमालपुर गढ़ रोड़, मेरठ)

गृह विज्ञान

1. **डॉ0 श्रीमती पंकज शर्मा,** (सहायक प्राफेसर), गृह विज्ञान (प्रसार शिक्षा) राजकिय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रोहतक

शारीरिक शिक्षा विभाग:

1. **डॉ० सरिता चौधरी,** सहायक प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा विभाग, आर्य गर्ल्ज कॉलेज, अम्बाला कैंट, हरियाणा
2. **डॉ० वरुण मलिक,** सहायक प्रोफेसर, म.द.वि., रोहतक
3. **डॉ० सुनील डबास,** (पद्मश्री व द्रोणाचार्य अवार्ड) HOD in physical education"DGC Gurugram

समाज शास्त्र विभाग:

1. **प्रवीण कुमार** (समाजशास्त्र विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० कमलेश भारद्वाज,** समाज शास्त्र विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद

मनोविज्ञान विभाग:

1. **डॉ० चन्द्रशेखर,** सहायक प्रोफेसर साईक्लोजी विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू
2. **डॉ. रश्मि रावत,** (मनोविज्ञान विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, देहरादून)
3. **अनिल कुमार लाल** (प्रवक्ता, मनोविज्ञान विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)

अर्थशास्त्र विभाग:

1. **डॉ० जसवीर सिंह** (पूर्व रीडर अर्थशास्त्र विभाग, किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मवाना)
2. **डॉ० सुशील कुमार** (एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद, उ०प्र०)
3. **डॉ० अखिलेश मिश्रा** (प्राध्यापक, अर्थशास्त्र–विभाग, एस.डी.पी.जी. कॉलेज, गाजियाबाद)
4. **डॉ० सत्यवीर सिंह सैनी,** एसो०प्रो० (अर्थ०वि०, गो०ग० सनातन धर्म पी०जी० कॉलेज, पलवल)

विधि विभाग:

1. **डॉ० नरेश कुमार,** (प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
2. **डॉ० विमल जोशी,** (प्रोफेसर, विधि–विभाग भगत फूलसिंह महिला विश्वविद्यालय खानपुर, सोनीपत)
3. **डॉ० जसवन्त सैनी,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
4. **डॉ० वेदपाल देशवाल,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
5. **डॉ. अशोक कुमार शर्मा,** एसो. प्रोफेसर, विधि विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर
6. **डॉ. राजेश हुड्डा,** सहायक प्रो०, विधि विभाग, बी.पी.एस. महिला विश्वविद्यालय, खानपुर कलां, सोनीपत
7. **डॉ० सत्यपाल सिंह,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
8. **डॉ० सोनू,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
9. **डॉ० अर्चना वशिष्ठ,** (सहायक प्रोफेसर, के०आर० मंगलम विश्वविद्यालय, सोहना रोड, गुरुग्राम)
10. **डॉ० आनन्द सिंह देशवाल,** (सहायक प्रोफेसर, सी०आर० कॉलेज ऑफ लॉ रोहतक)
11. **अनसुईया यादव,** (सहायक प्रोफेसर, विधि विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा)

गणित विभाग:

1. **डॉ० विनोद कुमार,** रीडर एवं अध्यक्ष गणित विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर
2. **डॉ० विरेश शर्मा,** लेक्चरर्रार गणित विभाग, एन.ए.एस. कॉलेज, मेरठ
3. **डॉ0 सलौनी श्रीवास्तव** सहायक प्रो0, गणित विभाग आर0 बी0 एस0 कालेज आगरा
4. **Dr. Dhrub Kumar Singh.**HOD, Department of Mathematics, YBN University, Rajaulatu, Namkum, Ranchi, Jharkhand, India. Pin-834010
5. **डॉ रश्मि मिश्रा** प्रोफेसर (एप्लाइड साइंस एंड हमनीटीएस), मैथमेटिक्स गनेशी लाल बजाज इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी एंड मैनेजमेंट ग्रेटर नॉएडा

कम्प्यूटर विभाग:

1. **प्रो० एस.एस. भाटिया** (अध्यक्ष, स्कूल ऑफ मैथमेटिक्स एण्ड कम्प्यूटर एप्लीकेशन, थापर विवि, पटियाला)
2. **सर्वजीत सिंह भाटिया** (प्रवक्ता, कम्प्यूटर साईंस, खालसा कॉलेज, पटियाला)
3. **डॉ० बालकिशन सिंहल,** सहायक प्रोफेसर, कम्पयूटर विभाग, म०द०विश्वविद्यालय, रोहतक

संस्कृत विभाग:

1. **डॉ० रामकरण भारद्वाज** पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, लाजपत राय कॉलेज, साहिबाबाद (गाजियाबाद)
2. **डॉ० सुनीता सैनी,**एसो० प्रोफेसर संस्कृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
3. **डॉ० सुमन,** (सहायक प्रोफेसर, संस्कृत–विभाग, आदर्श महिला महाविद्यालय, भिवानी।)
4. **डॉ0 दिनेश मणि त्रिपाठी {प्रधानाचार्य}** एल ०पी ०के ०इंटर कॉलेज सरदार नगर बसडिला {गोरखपुर}
5. **डॉ0 दानपति तिवारी,** प्रोफेसर, एवं अध्यक्ष, महात्मा गांधी काशी विद्यापिठ, वाराणसी, उत्तर–प्रदेश
6. **डॉ0 दिनेशचन्द्र शुक्ल,** सहायक प्रोफेसर, महात्मा गांधी काशी विद्यापिठ, वाराणसी, उत्तर–प्रदेश

रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग:

1. **डॉ० आर०एस० सिवाच,** प्रो० एवं अध्यक्ष, रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग, म०द०वि०, रोहतक

दृश्यकला विभाग:

1. **डॉ० सुषमा सिंह,** एसोसिएट प्रोफेसर, दृश्यकला विभाग, म०द० विश्वविद्यालय, रोहतक

पंजाबी विभाग:

1. **डॉ० सिमरजीत कौर,** सहायक प्रो० (पंजाबी), ईश्वरजोत डिग्री कालेज, पेहवा (कुरूक्षेत्र)

संगीत विभाग:

1. **डॉ० संध्या रानी,** अध्यक्षा, संगीत विभाग, यूआरएलए, राजकीय पीजी कॉलेज, बरेली
2. **डॉ० हुकमचन्द,** एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष तथा डीन, संगीत विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा
3. **डॉ. अनीता शर्मा,** (संगीत–गायन प्राध्यापिका, जयराम महिला महाविद्यालय लोहारमाजरा (कुरुक्षेत्र)
4. **डॉ. वन्दना जोशी,** (सहायक प्राध्यापक, विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग, एस.एस.जे. परिसर, अल्मोड़ा)

पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग:

1. **डॉ० सरोजनी नंदल,** प्रोफेसर (पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग) महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

उर्दू विभाग:

1. **डॉ० मो. नूरूल हक,** (एसोसिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष, उर्दू, बरेली कॉलेज, बरेली)

कृषि विभाग

1. **डॉ0 गोविन्द प्रकाश आचार्य** सह–आचार्य (कृषि–प्रसार) श्री गोविन्द गुरू राजकीय महाविद्यालय, बांसवाड़ा राजस्थान मो. 9460545836

दर्शनशास्त्र

1. Prof, Dr, Asha Devi department of Philosophy Govt P G college kotdwar pauri Garhwal Uttarakhand 246149

An update on UGC - List Journals

The UGC List of Journals is a dynamic list which is revised periodically. Initially the list contained only journals included in Scopus, Web of Science and Indian Citation Index. The list was expanded to include recommendations from the academic community. The UGC portal wasa opended twice in 2017 to universities to upload their recommendations based on filtering criteria available at https://www.ugc.ac.in/journallist/methodology.pdf. The UGC approved list of Journals is considered for recruitment, promotion and career advancement not only in universities and colloges but also other institutions of higher education in India. As such, it is the responsibillity of UGC to curate its list of approved journals and to ensure the it contains only high-quality journals.

To this end, the Standing Committee on Notification on Journals removed many poor quality/predatory/questionable journals from the list between 25th May 2017 and 19th Septemeber 2017. This is an ongoing process and since then the Committee has screened all the journals recommended by universities and also those listed in the ICI, which were re-evaluated and rescored on filtering criteria defined by the Standing Committee. Based on careful and analysis, 4,305 journals were removed from the current UGC-Approved list of Journals on 2nd May, 2018 because of poor quality/incorrect or insufficient information/false claims.

The Standing Committee reiterates that removal/non-inciusion of a journal does not necessarily indicate that it is of poor quality, but it may also be due to non-availability of information such as details of editorial board, indexing information, year of its commencement, frequency and regularity of its publication schedule, etc. It may be noted that a dedicated web site for journals is once of the primary criteria for inclusion of journals. The websites should provide full postal addresses, e-mail addresses of chief editor and editors, and at least some of these addresses ought to be verifiable official addresses. Some of the established journals recommended by universities that did not have didicated websites, or websites that have not been updated, might have bee dropped from the approved list as of now. However, they may be considered for re-inclusion once they fulfil these basic criteria and are re-recommended by universities.

The UGC's Standing Committee on Notification on Journals has also decided that the recommendation portal will be opened once every year for universites to recommend journals. However, from this year onwards, every recommendation submitted by the universities will be reviewed under the supervision of Standing Committee on Notification of Journals to ascertain that only good-quality journals, with correct publication details, are included in the UGC approved list.

The UGC would also like to clarity that 4,305 journals which have been removed on 2nd May, 2018 were UGC-approved journals till that date and, as such, articles published/accepted in them prior to 2nd May 2018 by applicants for recruitment/promotion may be considered and given points accordingly by universities.

The academic community will appreciate that in its endeavour to curate its list of approved journals, UGC will enrich it with high-quality, peer-reviewed journals. Such a dynamic list is to the benefit of all.

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ स.
1.	सुधा अरोड़ा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व	अकसाना कादिर, डॉ0 जाहिदा जबीन	9–13
2.	संताली भाशा का महत्त्व और विशेशताएं	शम्भुनाथ सोरेन	14–16
3.	गिजूभाई की बाल–शिक्षा और जीवन कौशलों का विकास	चित्रलेखा शर्मा, डॉ0 प्रताप सिंह राणा	17–19
4.	मालती जोशी के उपन्यास में नारी पात्र	नेहा	20–21
5.	स्वामी दयानन्द : एक युग पुरुष	डॉ0 सुरेन्द्र सिंह	22–24
6.	हरियाणा के उभारदार शिल्पों का परिचय व परंपरा के विशेष के संदर्भ में	Dr. Pawan	25–27
7.	शुष्क कटिबंधीय कृषि : समस्याएं एवं सम्भावनाएं	पूजा	28–30
8.	भारत में आपदा प्रबंधन : केन्द्र एवं राज्य सरकारों की भूमिका	डॉ0 प्रवीन कुमार	31–35
9.	गगन गिल के काव्य में मानवीय संवेदना	सुमन यादव	36–37
10.	इस्लाम धर्म में बालिकाओं की शैक्षणिक स्थिति की वैधानिकता का समाजशास्त्रीय अध्ययन	गजराज सिंह, डॉ0 जाकिया रफत	38–40
11.	मानव–पर्यावरण सम्बन्ध	डॉ0 शीबा फ़रीदी	41–44
12.	भारतीय समाज में लैंगिक असमानता	डॉ0 नाहीद परवीन	45–48
13.	**जल संसाधनों का कृषि विकास व सिंचाई नियोजन का भौगोलिक विश्लेषण**	डॉ0 अरविन्द कुमार सिंह	49–51
14.	''झारखण्ड में विज्ञान एंव तकनीकी के क्षेत्र में अनुसंधानः पहल, चुनौतियाँ एवं सम्भावनाएँ''	प्रो0 (डॉ0) तपन कुमार शांडिल्य कुलपति	52–54
15.	आधुनिक समय में सम्बन्धों के बदलते मानदण्ड	मधु सिंगला	55–57
16.	मन्नू भण्डारी की कहानियों में वैवाहिक समस्या	डॉ0 सुधा कुमारी	58–60
17.	ऐतरेय उपनिषद में मूल्य : एक अंतर्दृष्टि	डॉ0 सुमन	61–63
18.	हिन्दी साहित्य में नारी विमर्ष तथा इसकी महत्ता	रेनू	64–66
19.	बदलते भूमि उपयोग प्रतिरूप का कृषि पर प्रभावः रेवाड़ी जिले का एक भौगोलिक अध्ययन	अंजु, डॉ दीपा	67–69
20.	विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन में नारी सशक्तिकरण की आधारशिलाः सीता– एक समीक्षात्मक अध्ययन	रीतू रानी, प्रो० एस.के.वर्मा	70–74
21.	मॉरीशस में हिंदी और भारतीय संस्कृति	डॉ0 उमेश कुमार सिंह	75–78
22.	बौद्ध प्रतीत्यसमुत्पाद का स्परूप : एक विश्लेषण	डॉ0 धन्नजय कुमार सिंह	79–81
23.	महाशिवरात्रि का तात्पर्य और माहात्म्य	डॉ0 जंग बहादुर पाण्डेय	82–83
24.	Social Adjustment And Emotional Maturity of B.ED., Trainees	Ms. Sonia Dahiya	84–88
25.	High society's multi faced woman in Shobha de's novel 'Socialite Evenings'	Poonam	89–92
26.	Bharat Constitutional Aspects One Nation One Election of Bharat Need It And Challenges For Implementing One Nation One Election In Bharat.	Dr. Santosh Kumar Sharma	93–96
27	The Struggle for Justice and Institutional racism in "If Beale Street Could Talk" by James Baldwin.	Ravi Kachhap	97–100
28.	Critical Analysis of An Essay of Dramatic Poesy Summary by John Dryden	Sahil Patil	101–104
29.	Organizational Behavior: Structure And Design	Ajay Kumar	105–107
30.	Challenges and Sustainability: A Study of Solid Waste Management in Kaithal City	Dr. Sudhir Malik, Sanket Mitharwal	108–111
31.	Rural Ponds Encountering a Complex Crisis - Examining the Situation in Sonipat District, Haryana	Vivek Malik, Dr. Sudhir Malik	112–116
32.	Insights into Learning: Correlation with Psychology and Education	Dr. Reena Rai	117–119
33.	The Impact of E-business	MS. Arti Rani	120–122
34.	Digital Wallets: Shaping the Future of Financial Interactions	Kareena Saini	123–126
35.	A Comparative Study of Quality of Life Among Working And Non-working Women	Dr. Parul Patel	127–130
36.	How Is Sexual Harassment Dealt With Under The Indian Statutes: A Analysis	Ms. Tanu Arora	131–135
37.	Importance of Ethics In Organisation	Dr. Arti Chauhan	136–137
38.	A Study of Online Transactions in Banking Sector during Covid-19	Dr. Mamta Arora, Dr. Shailia Kumari	138–141
39.	A Study Of Consumer Actions Concerning The Online Purchase Of Ayurvedic Skin Care Products	Sweety Rani	142–146
40.	Critical appreciation of Et to Brute: William Shakespeareet To Brute	Dr Arti Sharma	147–148
41.	Sports Vs. Screen Time: Effects On Mental Health And Well-being Among College Students	Dr. Dinesh Kumar	149–150
42.	हिन्दी में आँचलिक उपन्यासों की परम्परा	डॉ0 मेल्टिना टोप्पो	151–155
43.	Rethinking Good Governance: Features, Development and Challenges	Ashish Alok	156–159
44.	एकता एवं समता के पोषकः संत रविदास	डॉ0 संजय कुमार	160–161
45.	जयशंकर प्रसाद की कालजयिता	डॉ0 चंद्र मणि किशोर	162–163

अनुक्रमणिका

1

सुधा अरोड़ा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

अकसाना कादिर, डॉ0 जाहिदा जबीन

सारांश

किसी भी रचनाकार की गतिविधियों अथवा रचना संसार को जानने से पूर्व आवश्यक है कि उसके जीवन एवं व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं से परिचित हुआ जाए। कोई भी रचनाकार कितना भी तटस्थ क्यों न हो फिर भी उसके साहित्य में निजी सुख–दुःख या भोगे हुए यथार्थ की अभिव्यक्ति अवश्य देखने को मिलती है। प्रत्येक व्यक्ति में कुछ ऐसी विशेषताएँ विद्यमान होती है, जिनके आधार पर वह परिस्थिति के प्रति विभिन्न प्रतिक्रियाएँ करता है ।

साहित्यकार जिन सन्दर्भों एवं स्थितियों को महसूस करता है, उन्हें वह अपनी रचनाओं के माध्यम से पाठकों तक पहुंचाने का प्रयास करता ह। अन्य लेखकों की तरह सुधा अरोड़ा ने भी अपने रचना–कर्म के दौरान सुख–दुःख, पारम्पारिक मानिताओं, पारिवारिक संकट एवं रूढ संस्कारों और जीवन में छोटी–बड़ी घटनाओं को विषय बनाया है।

जन्म :– मध्यवर्गीय पंजाबी परिवार में जन्मी सुप्रसिद्ध लेखिका सुधा अरोड़ा का जन्म देश विभाजन से पूर्व लाहौर के मोची दरवाजे इलाके में 4 ब्जवइमत 1946 को हुआ, वर्तमान समय में जो अब पश्चिमी पाकिस्तान का हिस्सा बन गया है।

माता–पिता :– सुधा अरोड़ा के पिता का नाम राम लुभाया अरोड़ा है अपने परिवार में स्नातक स्तर तक शिक्षा प्राप्त करने वाले वे प्रथम व्यक्ति थे स कला और साहित्य के प्रति उनका गहरा लगाव है स इन्होंने कई सरकारी आयोजनों में पश्चिम बंगाल का प्रतिनिधित्व भी किया और साथ ही 'स्माल स्केल इंडस्ट्रीज एस्सोसिएशन'(Small scale association) की पश्चिम बंगाल शाखा के अध्यक्ष भी थे स रामलुभाय को कई भाषाओं पर अधिकार था जैसे– उर्दू, अंग्रेजी,हिंदी और बंगाली।

माँ का नाम वीणा देवी था स वीणा देवी सरदार परिवार से थी स विवाह से पहले इनका नाम वाहेगुरु था किन्तु, विवाह के उपरांत वाहेगुरु नाम बदल कर वीणा देवी रखा। विवाह से पहले वीणा देवी को साहित्य के प्रति गहरा रुझान था किन्तु, विवाह के उपरांत इन्होंने अपने सारा समय घर–गृहस्थी में लगा दिया ।

पालन–पोषण :– देश– विभाजन के उपरांत सुधा–अरोड़ा लाहौर से कोलकाता आयी यहाँ वह एक कमरे वाले मकान में अपने परिवार दादी, माता–पिता और पांच भाई–बहनों के साथ रही। अपने परिवार में पहली संतान होने के कारण सुधा अरोड़ा घर में सबकी लाडली थीं स बचपन में सुधा का स्वस्थ अधिक खराब ही रहता था जिस कारण उनके दादा कभी हकीमों तो कभी वैद्य के पास ले जाया करते थे। सदा स्वस्थ खराब होने के कारण सुधा जी बहुत दुबली–पतली एवं कमज़ोर रहती थी। हर पाँच दस दिनों के बाद सुधा जी को खांसी–सर्दी, बुखार और खांसी की तकलीफ से गुज़रना पड़ता था। 13 साल की आयु के बाद इस तकलीफ से निजात मिल तो गई अपितु, उनको एक और अजीब सी बिमारी ने झकड़ लिया स उनकी बाएं हाथ की कोहनी सूज कर गुबार हो जाती जिस कारण उसका हाथ एक ही अवस्था में रहता था,न ही वह ठीक तरह से कपडे बदलती न ही ठीक तरह से सौ–पाती स पांच छः दिन यही स्थिति रहती छः दिन के बाद खुद ही ठीख हो जाती स अतः उस दर्द से वह काफी बेचौन रहती। माता–पिता ने सुधा जी के पालन–पोषण में कोई भी कमी नहीं रखी। बीमारी लगने के कारण सुधा जी की माँ ने कभी सुधा जी को घर के कामों के लिए नहीं कहा स अतः सुधा जी का पालन–पोषण सादगी से हुआ।

परिवार :– सुधा अरोड़ा के पाँच भाई और एक बहन है। जिनमें वह सबसे बड़ी संतान है। बहन का नाम इन्दू अरोड़ा है। स्वभाव से इन्दू शालीन और आत्मकेंद्रत रही। पढ़ाई में भी काफी ज़हीन और होनहार छात्र रही। चित्रकला और संगीन में वह पारंगत थी ।

सुधा अरोड़ा के पाँच भाई– प्रदीप, प्रशांत, प्रमोद, प्रवीण और प्रताप है स सभी भाई आज अपने–अपने कार्यों में निहित है स अतः सुधा अरोड़ा का परिवार एक भरपूरा परिवार है।

शिक्षा :– सुधा अरोड़ा की पूरी पढ़ाई कलकाता में हुई। 1962 में शिक्षायतन विद्यालय से बारहवीं कक्षा की परीक्षा उत्तीरण की। सन् 1965 में शिक्षायतन कॉलेज में एम,ए की उपाधि प्राप्त की। पढ़ाई में अधिक ज़हीन होने के कारण यू–जी–सी की स्कॉलरशिप भी मिली स इसी विश्वविद्यालय के दो कॉलेजों में सन् 1969 से 1971 तक अध्यापन कार्य किया स सुधा अरोड़ा ने बी–ए और एम–ए दोनों परीक्षाओं में गोल्ड मैडल भी अर्जित किया।

वैवाहिक–जीवन :– सुधा अरोड़ा का विवाह सन् 1971 में एक कथाकार डॉक्टर जितेन्द्र भाटिया से हुआ स विवाह से पूर्व वह दोनों एक दूसरे को जानते थे और परिवार की सहमति से दोनों ने विवाह किया स जीतेंद्र भाटिया पेशे से केमिकल इजीनियर और विज्ञानिक है। और इन्होंने एम,टेक एवं पी–एच–डी की उपाधि भी प्राप्त की। इसके अतिरिक्त वह साहित्य में भी रुचि रखते थे। डाक्टर जीतेंद्र भाटिया ने भी कुछ कहानियों की रचना की। इन्होंने छः कहानी–संग्रह, तीन उपन्यास और तीन नाटकों की भी रचना की है।

पारिवारिक जीवन :– सुधा अरोड़ा के लिए वैवाहिक जीवन अधिक दुःख भरा सिद्ध हुआ स विवाह के उपरांत वे मुंबई शहर में रहने लगे स मुंबई शहर में बार–बार निवास बदलने के कारण उन्हें कई सारी कठिनाइयों को झेलना पड़ा स उस्सी दौरान उन की दो संतान(बेटियाँ) हुई स पहली गुंजन और दूसरी का नाम गरिमा स संतान होने के बाद सुधा अरोड़ा लेखन–कार्य से लगभग तेरह साल दूर रही लेखिका के

शब्दों में–"1971 में मेरी शादी हो गई स शादी होते ही एक लड़की के सारे सपने झर जाते है और शाब्दिक अर्थ में नून–तेल–लकडी (यहाँ दाल–चावल भी जोड़ देना चाहिए) का भाव उसे मालूम हो जाता है। गिरस्ती के इस हुजूम में कहानियों के पात्रों के कुनबे बदहवासी में लापता हो गए स एक साल में दस बारह कहानियाँ लिख लेने वाली मैं साल में एक या दो कहानियों पर स्मट गयी।"[1]

विवाह के बाद भी सुधा अरोड़ा ने अपने वैवाहिक जीवन में अधिक कष्ट झेले अपने पति जीतेंद्र जी के बीच कभी अच्छे संबंध नहीं रह पाए जिस कारण दोनों ने सदा के लिए अलग रहने का निर्णय लिया–"जितेन्द्र और सुधा की निरंतर बढती दूरियां अंततःसन् 2006 में उन्हें अलगाव तक ले ही गई। जितेन्द्र जयपुर के अपने पुश्तैनी घर में रहने लगे स इस पूर्ण अलगाव के मूल में इस बार ज़रूर एक थर्ड पर्सन की उपस्थिति भी जुड़ गयी, जिससे स्थिति को बहुत जटिल बना दिया।"[2]

साहित्य के प्रति प्रेरणा :– सुधा अरोड़ा के माता–पिता दोनों ही साहित्य प्रेमी थे। दोनों अपनी बेटी को सदैव कहानियाँ लिखने के लिए प्रोत्साहित करते थे। घर में रचनाकार राजेन्द्र यादव का आना–जाना था। राजेन्द्र यादव उनके पिता के मित्र थे। राजेन्द्र यादव की पुस्तकों को पढ़ना उन्हें अधिक प्रिय था स बचपन में अधिक बिमार रहने के कारण माँ उन्हें सदा डायरी लिखने के लिए प्रोत्साहित करती थी।

अभिरूची :– साहित्य के अतिरिक्त सुधा अरोड़ा को संगीत से भी लगाव है उन्हें अधिक प्रिय शास्त्रय संगीत है। पंडित जसराज, भीमसेन जोशी, कुमार गंधर्व, किशोरी अमानकर इनके गीतों को सुनना उन्हें अच्छा लगता है स सुधा अरोड़ा को कौन्सिलिंग करना अधिक पसंद है साथ ही पीड़ित नारियों का दुःख समस्याओं को सुलझाने का प्रयास करती है। महिलाओं के सहयोग के लिए सुधा ने वसुंधरा में एक कौन्सिलिंग सेंटर खोला जँहा वह हेल्प की तरह पीड़ित, प्रताडित महिलाओं की मदद करती थी–" हेल्प हर वर्ग की प्रताडित महिलाओं के लिए एक कोंसिलिंग सेंटर था। यहाँ जया, यास्मीन, कृष्णा, प्रेमिला और कुमकुम गुप्ता थीं और थीं ढेर सारी महिलाएँ अपनी–अपनी समस्याओं के साथ। यहाँ जिस तरह का काम किया जाता था, मुझे लगने लगा था कि वह लिखने से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण है। लेखन शायद किसी को मानसिक संतोष या राहत देता होगा, शायद कभी अपनी समस्याओं से जूझने–निकलने का रास्ता भी दिखाता होगा लेकिन यहाँ आत्महंता मनः स्थिति की कगार पर पहुंची हुई वे महिलाएँ ही आती थीं, जो ज़िन्दगी के सारे दरवाजे बंद देख कर आखिरी छटपटाहट में या जीने की आखिरी उम्मीद लिए अपनी बरसों से बंद ज़बान को खोलती थीं और हम अनजान महिलाओं के सामने अपने आपको उड़ेल देती थीं। उन्हें समस्याओं के चक्र्व्यूह से बाहर निकालना एक चिनौती भरा काम था ।"[3]

कृतित्व सुधा अरोड़ा एक चर्चित कथाकार है। इस कथाकार ने अपने लेखन–कर्म से समकालीन कथा–संसार में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। कहानी,उपन्यास,आलोचना आदि साहित्य की विभिन्न विधाओं में सृजनरत सुधा अरोड़ा ने कहानी लेखन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण सफलता हासिल की है ।

कहानी–संग्रह

1.	बगैर तराशे हुए	(1967)
2.	युद्दविराम	(1977)
3.	महानगर की मैथिलि	(1987)
4.	कला शुक्रवार	(2004)
5.	कांसे का ग्लास	(2004)
6.	मेरी तेरह कहानियाँ	(2005)
7.	रहोगी तुम वही	(2007)
8.	21 श्रेष्ठ कहानियाँ	(2009)
9.	एक औरत रू तीन बटा चार	(2011)
10.	मेरी प्रिय कथाएँ	(2012)
11.	10 प्रतिनिधि कहानियाँ	(2013)
12.	अन्नपूर्ण मंडल की आखरी चिट्ठी	(2014)
13.	बुत जब बोलते है	(2015)
14.	चुनी हुई कहानियाँ	(2016)

1.बगैर तराशे हुए (1967) :–

सन् 1967 में प्रकाशित बगैर तराशे हुए सुधा अरोड़ा का प्रथम कहानी– संग्रह है जिसमें दस कहानी–संग्रह है– 1.मरी हुई चीज़, एक सेंटिमेंटल डायरी की मौत, डर, स्टैपलर, अविवाहित पृष्ठ, निर्मम, आग, घर, चरित्रहीन और बगैर तराशे हुए। यह सभी कहानियाँ स्त्री जीवन के विविध पडाओं को अभिव्यक्त करती है। यह कहानी–संग्रह नारी विषयक समस्याओं को उद्घाटित करती है और साथ ही उसे जागरूक बनाने की प्रेरणा भी देती है। इन कहानियों का केंद्रीय संवेदना स्त्री मन से जुडी हर स्थिति का सामान करना रहा है।

सुधा अरोड़ा ने प्रस्तुत कहानी–संग्रह में नारी जीवन को नई दिशा प्रदान करने का प्रयास किया है। मरी हुई चीज़, एक सेंटिमेंटल डायरी की मौत, निर्मम, डर और स्अेपलर इन सभी कहानियों में स्त्री मन की भावनाओं को कागज़ पर उतारने का प्रयास किया है।

2. युद्धविराम (1977):–

युद्धविराम सुधा अरोड़ा का दूसरा कहानी–संग्रह है जो सन् 1977 में प्रकाशित हुआ। युद्धविराम कहानी–संग्रह में कुल छः कहानियाँ है– युद्धविराम, तानाशाही, झुलसा हुआ शहर, दमनचक्र, पति–परमेश्वर तथा बलवा स इस कहानी–संग्रह में आर्थिक संघर्ष परम्पराओं में जकडे मनुष्य का दर्द तथा नई पीढ़ी की मानसिकता का सशक्त चित्रण है स सुधा अरोड़ा ने इन कहानियों में बदलती सामाजिक, राजनितिक व्यवस्था का चित्रण किया है।

युद्धविराम कहानी में बुढापे में एकांकी और बेसहारा हो रहे लोगों की दास्तां है जो हमारे ही बीच से उपेक्षित छोड़ दिए जाते

है।

3. महानगर की मैथिली (1987):–

महानगर की मैथिली आपका तीसरा कहानी–संग्रह है जिस में कुल नौ कहानियाँ है – बोलो भ्रष्टाचार की जय, सात सौ का कोट, तेरावें माले से जिंदगी, स्वपन जीवी, इस्पात, विरुद्ध, देहलीज़ पर संवाद, युद्दरत और महानगर की मैथिली है। महानगर की मैथिलि सुधा–अरोड़ा की चर्चित कहानियों में से एक है जिसमें लेखिका ने महानगरों में स्त्री जीवन से संबंधित समस्या मध्यवर्गीय जीवन की दुर्दशा, कामकाजी महिलाओं की व्यस्तताएं और अनेक बच्चों का जीवन सभी कुछ चित्रित है स संग्रह की सभी कहानियों में मशीनी जीवन,अर्थ का अभाव,भ्रष्टाचार, दाम्पति जीवन की समस्याओं कामकाजी महिलाओं की पीड़ा आदि विषयों की यथार्थ अभिव्यक्ति की है स महानार की मैथिलि इस कहानी में लेखिका ने पति–पत्नी और बच्चों के अन्तर संबंधों का चित्रण किया स कहानी की नायका चित्रा को ममता और अर्थ संघर्ष में जुझुना पड़ा स अपने बच्चे की देखभाल के लिए अच्छी आया न मिलने के कारण वह अपनी नौकरी को छोड़ने के लिए तैयार है –" बेटी की खातिर उसके भीतर कई बार नौकरी न करने का विचार भी उठा स वह महसूस करती रही कि आया उसका पेट तो भर सकती है, पर माँ के हाथों का स्पर्श और दुलार उसे नहीं दे सकती। लेकिन हर बार महानार का अर्थ शास्त्र उसकी भावनाओं पर भारी साबित हुआ।"[4]

काला शुक्रवार (2004):–

काला शुक्रवार सुधा अरोड़ा का चौथा कहानी–संग्रह है जो सन् 2004 में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में 15 कहानियाँ है – कला शुक्रवार, ऑड मैन आउट उर्फ़ बिरादरी बाहर, बोलो भ्रष्टाचार की जय, जानकिनामा, दमनचक्र, तानाशाही, देहलीज़ पर संवाद, रहो गी तुम वही, सता संवाद, वर्चस्व, यथास्थिति, ताराबाई चाल–कमरा नम्बर एक सौ पैंतीस, आधी आबादी, अन्नपूर्ण मंडल की आखिरी चिट्ठी, तीसरी बेटी के नाम–ये ठंडे सूखे बेजान शब्द। कला शक्रवार कहानी में मुंबई के दंगों के बीच साम्प्रदायिक सद्भाव की अनूठी मिसाल बने एक पात्र मीराज़ की कथा है। जो अपने बेटे नवाब तक को इस दावानल में खो देता है लेकिन आपसी भाई–चार व विशवास में अस्वस्थ नहीं होता। इस कहानी में लेखिका ने मुंबई बम विस्फोर्ट का भाखूबी से प्रस्तुत किया है। मुंबई का वह हादसा जो उन्होंने अपनी आँखों से देखा था "6 दिसम्बर 1992 का वाक्य हुआ स बाबरी मस्जिद ढह दी गयी थी। मुंबई में बांद्रा के माउंट मेरी रोड के जिस इलाके में हम रहते थे, वहाँ से बाहर माउंट मेरी की विख्यात सीढ़ियों से नीचे आते ही दाउदी वोहरा मुस्लिम समुदाय का जमातखाना और उनकी सात बहुमंजिला इमारतें 'युवान अपार्टमेन्टस' थीं। टी.वी. पर खबर आने और दुकानों के शटर धडाधड बंद होने के साथ मैं और मेरी बेटी गुंजन सड़क का जायजा लेने सीढ़ियों से नीचे उतर। वहाँ जगह–जगह झुंड बनाकर जवान लड़के, आदमी खड़े थे। पूरे इलाके में जानलेवा तनाव था। कहीं एक भी महिला नहीं थीं। जवान लड़कों के आँखों में खून उतर आया था"[5]

कांसे का ग्लास (2004):–

इस कहानी–संग्रह में 7 कहानियाँ है पहली चार कहानियाँ–सात सौ का कोट, बलवा, स्वप्नजीवी, इस्पात अन्य संग्रह में आ चुकी है स बाकी तीन कहानियाँ इस प्रकार है – कांसे का ग्लास, यह रास्ता उसी अस्पताल को जाता है, और सुजाता तनेजा की ज़िन्दगी का आखिरी दिन।

कांसे का ग्लास कहानी के भीतर की कहानी है, जो दांपत्य जीवन के तनाव और उसका बच्चों पर पडने वाले विपरीत प्रभाव की व्यंजना एक दूसरे स्तर पर करती है स यहाँ पति–पत्नी के बीच के टकराव एवं दरार को पुरानी पीढ़ी के बरक्स रखकर उभारा गया है। यह कहानी पुरानी पीढ़ी की एक बुढ़िया के चरित्र को उद्घाटित करती है जिसे उसके मायके से कांसे का ग्लास मिला था और जिसे वह जी–जान से संभालती रहती है। क्योंकि उस ग्लास में उसे अपना मायका, अपना लाहौर, अपने मायके का प्यार दिखता है।

रहो गी तुम वहीँ (2007):–

इस कहानी–संग्रह में कुल 16 कहानियाँ है– महानगर की मैथिलि, युद्दविराम, तेरहवें माले से ज़िन्दगी, कांसे का ग्लास, सात सौ का कोट, काला शुक्रवार, जानकीनामा, दमनचक्र, तानाशाही, यह रास्ता उसी अस्पताल को जाता है, देहलीज़ पर संवाद, सत्ता संवाद, ताराबाई चाल–कमरा नम्बर एक सौ पैंतीस, आधी आबादी, अन्नपूर्ण मंडल की आखिरी चिट्ठी, तथा रहो गी तुम वही। ये सभी कहानियाँ अन्य संग्रह में प्रकाशित हो चुकी है स रहो गी तुम वही कहानी में मध्वर्गीया नारी की मूक पीड़ा को दर्शाया गया है। कहानी में पति को अपनी पत्नी से हज़ारों शिकायतें है जिसे वह हर समय अपनी पत्नी के सामने खड़ा करता है। छोटी–छोटी बातों पर हर समय झगड़ना रोज़मर्रा का काम बन चुका था स पत्नी जब अपने पति के अनुसार अपने–आप में परिवर्तन लाती है तब भी पति को शिकायत ही रहती है–" पति के पास,पत्नी से शिकायतों का अन्तहीन भन्डार है, जिन्हें वह मुखर हो कर पत्नी पर ज़ाहिर कर रहा है। रोज़मर्रा की आम बातें हैं स उसे पत्नी के हर रूप से शिकायत है, और ये रूप अनेक हैं स वह उन्हें स्वीकारना नहीं चाहती; इसीलिए कहे चले जा रहा है कि रहोगी तुम वहीँ, यानी हर हाल, मेरे अयोग्य। निहितार्थ, न मैं बदल सकता हूँ, न तुम्हारे बदलते स्वरूप को सहन कर सकता हूँ, इसीलिए रहो गी तुम वहीँस"[6]

21 श्रेष्ठ कहानियाँ (2009):–

इस संग्रह में 21 कहानियाँ है। जिनमें 16 कहानियाँ अन्य संग्रह में आ चुकी है। 5 कहानियाँ इस प्रकार है – डेजर्ट फोबिया उर्फ़ समुद्र में रेगिस्तान, करवाचौथी औरत, बड़ी हत्या–छोटी हत्या, सुरक्षा का पाठ, बेटियाँ बड़ी नियामत है।

एक औरत : तीन बटा चार (2011):–

इस कहानी–संग्रह में चौदह कहानियाँ है जो इस प्रकार है– एक

औरतरूतीन बटा चार, अन्नपूर्ण मंडल की आखिरी चिट्ठी, रहो गी तुम वही, सत्ता संवाद, करवाचौथी औरत, ताराबाई कमरा नम्बर एक सौ पैंतीस, डेजर्ट फोबिया उर्फ़ समुद्र में रेगिस्तान, डर, नमक, तीसरी बेटी के नाम –ये ठंडे सूखे शब्द, बड़ी हत्या–छोटी हत्या , सुरक्षा का पाठ, देहलीज़ पर संवाद, और पीले पत्ते। इनमें केवल दो कहानियाँ नई है– नमक और पीले पत्ते। बाकी कहानियाँ अन्य संग्रह में आचुकी है।

एक औरतः तीन बटा चार कहानी यह कहानी किसी भी वर्ग की त्रासदी झेलती स्त्री की गाथा है, घर की चार दीवारियों में किस्तों में बटी अपने बच्चों में घर के कोने– कोने से लिपटी खुद के वजूद से बेखबर है, घर से बाहर है तो भी उसका, उसका एक हिस्सा घर में ही रह जाता है। जीवन भर घर को संभालती, बच्चों की देखभाल करती । अन्तः छड़ी बनने में ही अपने जीवन की सार्थकता समझती है–" हर कोने कोने की धूल साफ़ करती हुई इसी दिनचर्या में से समय निकाल कर वह बाहर भी जाती बच्चों की किताबें लेने, साहब की पसंद की सब्जियां लेने जाती स हर महीने की एक निश्चित तारीख को सखी सहेलियों के साथ चाय पार्टी में भी हिस्सा लेती पर हर बार घर से बाहर निकलते समय वह अपना एक हिस्सा घर में ही छोड़ आती स"[7]

मेरी प्रय कथाएँ ?(2012):–

इस संग्रह में 13 कहानियाँ है स 12 कहानियाँ अन्य संग्रह में आ चुकी है केवल एक मात्र नई है वह है– कांचे का इधर उधर ।

दस प्रतिनिधि कहानियाँ (2013):–

यह कहानी–संग्रह सुधा अरोड़ा की चुनिंदा कहानियों का संकलन है स जिसमें महानगर की मैथीली, सात सौ का कोट, दमनचक्र, देहलीज़ पर संवाद, रहोगी तुम वही, ऑड मैन आउट उर्फ़ बिरादरी बाहर, जानकीनामा, यह रास्ता उसी अस्पताल को जाता है, कांसे का ग्लास, और कांचे के उधर– इधर।

बुत जब बोलते है (2015):–

इस कहानी–संग्रह में 10 कहानियाँ है– उधडा हुआ स्वेटर, बुत जब बोलते है, कांसे का ग्लास, कांचे के इधर–उधर, खिड़की, एक माँ का हल्फनामा, पीले–पत्ते, भागमती पड़ाईन का उपवास, राग देह मल्हार और कत्लगाह यानी माटी कहे कुम्हार से । बुत जब बोलते है कहानी में महानगरों में उच्च– मध्यम वर्गियों का जो तबका बढ़ रहा है, उसमें अर्थ के प्रति अतिअधिक मोह बढ़ता जा रहा है, इस कारण उनका पारिवारिक जीवन विखंडित हो रहा है, वह किसी की भावनात्मक, वैदिक आवश यकताओं को ध्यान में नहीं लेना चाहते। ऐसे परिवारों में जो संवेदनशील स्त्री होती है, उसकी असहायता को, उसकी छटपटाहट को ये कहानी व्यक्त करती है।

चुनी हुई कहानियाँ (2016):–

इस कहानी–संग्रह में 11 कहानियाँ है जो इस प्रकार है दृ महानगर की मैथिली, दमनचक्र, देह घरे का दंड, काला शुक्रवार, उधडा हुआ स्वेटर, कांचे के इधर–उधर, रहोगी तुम वही, एक औरतरू तीन बटा चार, करवाचौथी औरत, अन्नपूर्ण मंडल की आखिरी चिट्ठी, सभी कहानियाँ अन्य संग्रह में आ चुकी है।

उपन्यास

1. यहीं कहीं था घर (2010):–

सुधा अरोड़ा ने अभी तक केवल एक ही उपन्यास की रचना की यहीं कहीं था घर जो सन् 2010 में प्रकाशित हुआ स यहीं कहीं था घर उपन्यास को लेखिका ने दो खण्डों में विभाजित किया – पहला यहीं कहीं था घर दूसरा यह रास्ता उस्सी अस्पताल को जाता है।

यहीं कहीं था घर उपन्यास को छः भागों में विभक्त किया है – मोहले की लड़की जब बड़ी होती है, देह धरे का दंड, तीजी की मातमपुर्सी पर, लाहौर का वह ज़माना, हम भी लडके वाले है, सुजाता तनेजा की ज़िन्दगी का आखरी दिन।

उपन्यास यहीं कहीं था घर में पारिवारिक जीवन की स्वभाविक, यथार्थ व खूबसूरत झांकी इस उपन्यास में देखने को मिलती है। इस उपन्यास में सुधा अरोड़ा ने स्त्री के सामाजिक बोध के साथ मोनोविज्ञान को भी बडे ही विश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत किया स साथ ही इस उपन्यास के माध्यम से लेखिका ने परिवार को धनी बुनावट में तरह–तरह की त्रासदी झेलती लड़कियों और घुटती हुई स्त्री के जीवन को उजागर करते हुए स्त्री जीवन से जुडे तथ्यों को रोचक और विचारणीय शैली में प्रस्तुत किया ।

लेखिका सुधा अरोड़ा ने कहानी, उपन्यास के साथ अन्य रचनाओं की भी रचना की है जिसमें कविता, आत्मकथा, स्त्री–विमर्श, संस्मरण, आलोचनात्मक, निबंध, डायरी–लेखन, संपादन, अनुवाद, स्तंब–लेखन आते है

निष्कर्ष

सुधा–अरोड़ा को बचपन से ही साहित्य के प्रति लगाव था स माता–पिता दोनों साहित्य प्रेमी थे स साहित्य में माँ और पिता के साहितिक सुझाव के अलावा लेखन के दो कारण थे– एक राजन्द्र यादव, जिनकी किताबें पिता ज़बरदस्ती पढ़ने को कहते और दूसरा बिमारी। सुधा अरोड़ का मानना है कि किसी भी रचनात्मक विधा के लिए एक कोशिश या चोट का होना बहुत ज़रूरी है। आज वह जिस मकाम पे है इसका श्रेय वह अपने परिवार को देती है और साथ ही 'हेल्प' को हेल्प संस्था से जुडने के बाद साहित्य लेखन में उन्हें काफी सफलता मिली।

सुधा–अरोड़ा उन सजग महिला कथाकारों में से हैं जिन्होंने न सिर्फ नारी जीवन की विशेषताओं–विडंबनाओं के लिए ज़िम्मेदार वर्चस्ववादी एवं क्रूर पित्रस्तात्मा व्यस्था की अस्लियत उद्घटित की है बल्कि वे मानवी संकट उत्पन्न करने वाले प्रश्नों और उनके कारक तत्वों से रचनात्मक स्तर पर लगातार जूझती टकराती रही है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :

1. रणसुभय, डॉ, सूर्यनारायण. स्त्री पक्षधरता का मुखर स्वरः सुधा अरोड़ा, अमन प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2021. पृ.21
2. वही, पृ.37

3. अरोड़ा,सुधा. काला शुक्रवार, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2004. पृ.12
4. रणसुभय, डॉ, सूर्यनारायण. स्त्री पक्षधरता का मुखर स्वरः सुधा अरोड़ा, अमन प्रकाशन,प्रथम संस्करण 2021.पृ.252
5. अरोड़ा,सुधा. काला शुक्रवार, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2004,पृ.11
6. रणसुभय, डॉ, सूर्यनारायण. स्त्री पक्षधरता का मुखर स्वरः सुधा अरोड़ा, अमन प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2021.पृ.231
7. वही, पृ. 166

अकसाना कादिर
शोधार्थी (हिन्दी विभाग)
कश्मीर विश्वविद्यालय कश्मीर
दरगाह हजरत बल
श्रीनगर (कश्मीर)
डॉ0 जाहिदा जबीन
प्रो0 एवं अध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
कश्मीर विश्वविद्यालय कश्मीर
श्रीनगर (कश्मीर)
पिन0 190006
मौ0 6006078853

2

संताली भाषा का महत्त्व और विशेषताएं

शम्भुनाथ सोरेन

सारांश – संताली आग्नेय परिवार की भाषा है। यह संतालों की मातृभाषा है। यह भाषा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हमारी मान एवं गौरव प्रदान करवाती है। संताली भाषा कई देशों में बोली जाती है। इससे हम कह सकते हैं कि संताली भाषा का महत्व बढ़ने लगा है। चुंकि मातृभाषा में लिखा साहित्य अपनी धरती, समाज एवं परिवेश के प्रति आत्मीयता उत्पन्न करता है।

मानव समाज में मातृभाषा से साहित्य लिखन में अपनी संस्कृति का ज्ञान कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। साहित्य लिखन से किसी भी काल का अध्ययन से हमारे तत्कालीन सामाजिक जीवन के रहन–सहन एवं अन्य गतिविधियों की आसानी से जान सकते हैं। साहित्य के माध्यम से हम अपने विरासत के बारे में समझ सकते हैं। इस तरह सन्ताली भाषा अपना समाज एवं संस्कृति साहित्य में सुरक्षित रहता है। साहित्यकारों द्वारा भाषा एवं साहित्य का महत्व वर्तमान में भी बना हुआ है।

मुख्य शब्द – भाषा, साहित्य, सामाजिक, महत्त्व और विशेषताएँ।

विषय – साहित्य के संबंध में डॉ. धीरेन्द्र शुक्ल अपनी लेख हिन्दी नाटक और रंगमंच में लिखा है ''साहित्य के क्षेत्र में नये की खोज के लिए या अपने तथ्य को अधिक प्रभावी बनाने के लिए प्रयोग किए जाते हैं और प्रयोग की यह प्रक्रिया हर युग में चलती है।''[1] आज की शैक्षिक प्रगति के प्रकाश में कई भाषाओं के शब्दों का आदान–प्रदान एक स्वाभाविक प्रक्रिया से संताली के विकास को बल प्राप्त होता है। इसे सामाजिक, साहित्यिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, और व्यापारिक आदि मान्यता प्राप्त होती है।

सामाजिक दृष्टि से – किसी भी भाषा के विकास में उस भाषा के सामाजिक कृत्य का भी अहम भूमिका रहता है। सामाजिक क्षेत्र में भाशा का उपयोग और महत्व क्या है, आदि। ''साहित्यकार भावना के धरातल पर समाज से जुड़ता है और इस संबंध से ही वह समाज के यथार्थ चित्र को साहित्य में प्रस्तुत करता है।''[2]

कुछ साहित्यक संस्थाओं द्वारा साहित्यिक पत्रिकाएँ प्रकाशित की गई। इसके अलावे राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के कुछ साहित्यिक संस्थाओं का भी गठन किया गया है। भाषा और साहित्य के विकास पर संताली लेखकों ने तीन दर्जन से ज्यादा अखिल भारतीय सम्मेलन कर चुके हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी कई बार सम्मेलन का आयोजन किया जा चुका है। हरेक सम्मेलन में भाषा और साहित्य के विकास पर विस्तृत चर्चा के अलावे संताली को राज्य भाषा के रूप में मान्यता प्रस्ताव पारित किये गये हैं।

राजनीतिक दृष्टि से – संताली भाषा अब राजनैतिक दृश्टि से महत्व को प्राप्त हुआ है। अब देश के संताली लेखक भी अन्य भाशाओं के लेखकों जैसे भूमिका हाशिल कर चुके हैं। संताली भाषा का व्यवहार विदेश में भी बहुत से लोग ग्रहण कर रहे हैं। आज कल बहुत सारे लोग इस भाषा के महत्व से अवगत हो चुके हैं। अब संताली भाषा में भी बहुत सारे कार्य होते जा रहे हैं, दिनों–दिन इस भाशा की अन्य विकसित भाशाओं जैसे मानक रूप प्राप्त कर सके है। संताली भाषा मानक होने के साथ– साथ देश के अन्य कई राज्यों में भी द्वितीय राज्य भाषा के रूप में सम्मान प्राप्त कर चुका है। संताली भाषा के माध्यम से लोगों में मध्यकाल के अनुरूप लिखित साहित्य का सृजन हो रहा है। मध्यकाल से ही संताली में कहानी, गीत, संगीत काव्य, उपन्यास, नाटक आदि सृजित हो रहा है।

साहित्य के दृष्टि से – ''साहित्य के आरंभ का निर्णय भाषा के आधार पर तो किया ही जा सकता है, इसके अतिरिक्त एक दूसरा तत्व भी है, जिसे हम साहित्य की चेतना कह सकते हैं।''[3] होड़ होपोन रेन पेड़ा अतिथि नामक मासिक पत्रिका 1890 साल से बेनागाड़िया मिशन प्रेस से रोमन लिपि में प्रकाशित होने लगा। इसके सम्पादक थे–पी0ओ0 बोडिंग। यह पत्रिका 1904 ई0 में प्रकाशन बंद होने के बाद 1922 ई0 से 'पेड़ा होड़' नामक पत्रिका के नाम से प्रकाशित शुरू हुआ। भतृहरि ने भी लिखा है कि ''साहित्य, संगीत और कला के बिना मनुश्य पशु के ही समान है।''[4]

प्रथम संताली साहित्यिक नाटक का लेखन पंडित रघुनाथ मुर्मू ने किया जो मयूरगभंज के रहने वाले थे। इस नाटक का शीर्शक था 'विदू–चांदन'। इसका प्रथम प्रकाशन 1942 ई० में उड़िया लिपि में हुआ तथा दूसरी बार 1947 ई० में इसे बांग्ला लिपि में प्रकाशित किया गया। इसे संताली भाषा की अमूल्य निधि कहा जाता है।

सांस्कृतिक दृष्टि से – किसी भी भाषा के विकास में उस भाषा की सांस्कृतिक क्षेत्र में भाषा का उपयोग और महत्व क्या है? देश स्वाधीन होने के बाद से संताली भाषा का एक महत्वपूर्ण स्थान है। चूँकि 8 दशक में संताली भाषा में ऑडियो और विडियो फिल्म का निर्माण भी हुआ और अब तक तो कई ऑडियो और पर्दा फिल्में भी तैयार हो चुकीं हैं। झारखण्ड, पश्चिम बंगाल और उड़िसा राज्यों में संतालों की आबादी बहुतायत है। संतालों द्वारा अनेक सामाजिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक संस्थाएँ संचालित है। अनेक सांस्कृतिक संस्थाओं द्वारा नाटकों का मंचन होना आरम्भ हुआ। ऑडियो और विडियो कैसेटों का निर्माण होने लगा। चालिस दशक से ही कई व्यवसायिक नाट्य संस्थाओं द्वारा बिहार, बंगाल, उड़िसा और झारखण्ड के संताली सांस्कृतिक क्षेत्र में नाटकों का मंचन होता रहा है। ''संस्कृति और सभ्यता का संरक्षण करना भी मातृ भाषा का एक महत्वपूर्ण कार्य है। समाज की उपलध्यिों का मूल्यांकन भी इन दोनों

तत्वों के द्वारा ही होता है। समाज अपने द्वारा स्थापित एवं पोषित परम्पराओं, रीति रिवाजों, कला एवं धर्म को नष्ट नहीं होने देना चाहता है। समाज आगे निरन्तर विकास के लिए इनको सुरक्षित रखता है। आगे आने वाली पीढ़ी को हस्तांतरित करता है तथा उनमें नवीनता लाता है।''[5]

शिक्षा के क्षेत्र महत्व – मानव जीवन में शिक्षा एक महत्वपूर्ण सम्पत्ति है। संताली भाषा के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने की अति आवश्यकता है। अब संताली भाषा को प्राथमिक विद्यालय से विश्वविद्यालय स्तर तक शिक्षा प्रदान करने की मान्यता दी गई है। शिक्षा का महत्व के संबंध में एरिस्टोटल ने लिखा है ''उनके लिए शिक्षा ही स्पंदन है, शिक्षा ही गति है, शिक्षा ही विकास है, शिक्षा ही जीवनी शक्ति है।''[6]

संताली भाषा की विशेषताएं निम्नलिखित हैं :–

1. उच्चारण –– संताली भाषा का सबसे बड़ा विशेषता यह है कि संताली उच्चारण में गोलोटल चेक साउंड युक्त है। जैसे – क्, च्, त् और प् ये चार वर्णों हलंत के साथ होता है इसका उच्चारण स्पष्ट नहीं होता है। इसका उच्चारण के समय स्वरुप, ध्वनि कंठ तक आते ही रुक जाती है एवं उच्चारण के बाद ही मुंह का ओष्ठ स्पष्ट होती है।

जैसे– दाक् (पानी) – दाग में
माक् (काटना) – माग में
उद् (निगलना) – उद में
तुत् (उखाड़ना) – तद में
हेच् (तोड़ना) – हेज में
उप् (डालना) – उब में
चाहाप् (मुंह खोलना) – चाहाब में आदि ।

2. क्रिया – संताली भाषा में जिस शब्द से किसी काम का होना या करना समझा जाए उसे क्रिया कहते हैं। जैसे – जम, ओल, रोड़, सेन, चालाव आदि। इन क्रियाओं के लिंग वचन आदि में विकार नहीं होता है। (क) संताली भाषा व्याकरण की विशेषता यह है कि सकर्मक क्रिया वा अकर्मक क्रिया धातु में कोई भेद नहीं होता है केवल प्रत्यय में होता है। (ख) संताली भाषा में क्रिया ही प्रधानता माना जाता है क्यों कि वाक्यों में कर्ता और कर्म ही अपनी – अपनी संक्षिप्त रुप में क्रिया के साथ आता है। जैसे – जमाय, जमाम, जमाको, आदि।

3. जैसे हिन्दी व्याकरण में स्त्री या पुरुष के साथ क्रिया का रुप रचनात्मक परिवर्तन होता है लेकिन संताली व्याकरण में लिंग में परिवर्तन होने पर भी क्रिया में कोई परिवर्तन नहीं होता है। संताली भाषा में पुरुष एवं स्त्री दोनों के लिए एक ही क्रिया रुप लागू होता है।

   जैसे– रामदुय चालाः काना। (रामदु जा रहा है), राईमुनीय चालाः काना। (राईमुनी जा रही है) आदि।

4. संताली भाषा में स्त्री एवं पुरुष के लिए अलग–अलग एवं स्वतंत्र शब्द है।

5. संताली भाषा में वचन की संख्या तीन है। (क) एक वचन (ख) द्विवचन (ग) बहु वचन। (क) एक वचन – संताली भाषा में एक वचन से एक ही संख्या का बोध होता है। जैसे – मिदटां दारे (एक पेड़), मिद होड़ (एक आदमी) आदि। (ख) द्विवचन – संताली भाषा में द्विवचन से केवल दो संख्या का बोध होता है। जैसे – दारे कीन (दो पेड़), होड़ कीन (दो आदमी) आदि। (ग) बहु वचन – संताली भाषा में बहु वचन से दो से अधिक संख्या का बोध होता है। जैसे – दारे को (पेड़ों), होड़ को (आदमियों) आदि। संताली व्याकरण में एक वचन से द्विवचन बनाने के लिए किन, बिन, बेन, लिंञ, लांग सम्बन्ध तत्व या प्रत्यय का व्यवहार होता है। जैसे – राम आर लखन किन जम केदा (राम और लखन दोनों खाऐ हैं), अका ते बिन चालाव लेना?(आप दोनों कहां गये थे) उसी तरह संताली व्याकरण में एक वचन से बहु वचन बनाने के लिए विकारी शब्दों के साथ को, सांगे, आडी गान, ले, बन, पे संबंध तत्व या प्रत्यय जोड़कर बहु वचन बनाया जाता है।

6. विशेषण – संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता या गुण प्रकट करने वाले शब्दों को विशेषण कहते हैं। (क) संताली भाषा में विशेषण का विशेषता यह है कि मूल शब्द के लिंग एवं वचन में परिवर्तन होने पर भी विशेषण में कोई परिवर्तन नहीं होता है।

   जैसे– हेंदे गॉय – काली गाय हेंदे डांगरा – काला बैल आदि।

   (ख) संताली भाषा में मूल शब्द का प्रयोग विशेषण के अन्त में आने से प्रत्यय का व्यवहार नहीं होता है यदि विशेषण का प्रयोग मूल शब्द के अन्त में आने से विशेषण में या, आ, वा प्रत्यय का व्यवहार होता है।

   जैसे– लाटु अड़ाः – अड़ाः लाटुवा
   उसुल बुरु – बुरु उसुला
   सारी काथा – काथा सारीया आदि।

7. संताली भाषा में और एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि समस्त निर्जीव पदार्थ ही निर्जीव लिंग (हा़द जानांग) के अन्तर्गत आता है। लेकिन सूर्य, चांद एवं तारे निर्जीव पदार्थ होने के वावजूद संताली भाषा में सजीव या प्राणी वाचक जैसे व्यवहार होता है तथा पेड़ पौधे सजीव होते हुए भी संताली भाषा में निर्जीव पदार्थ रुप में व्यवहार होता है।

   जैसे – बेड़ाय राकाब एना, चांदोय न्रलोक् काना, इपिल को हांसुरोक् काना आदि। मिदटाड० दारे मेनाःआ, बारया दारे ताहें काना आदि।

   संताली भाषा में प्रत्यय से ही सजीव एवं निर्जीव पदार्थ का पता लगाया जा सकता है। सजीव पदार्थ या प्राणी के लिए उय, या, य प्रत्यय एवं निर्जीव वस्तुओं के लिए आ प्रत्यय जोड़कर अलग–अलग व्यवहार किया जाता है।

शम्भुनाथ सोरेन
सहायक प्रोफेसर,
संताली विभाग, मानभुम महाविद्यालय, मानबजार,
पो/थाना – मानबजार, जिला – पुरूलिया, पश्चिम बंगला,
पिन– 723131, मो – 9800432482

स्थायी पता :
ग्राम– मधुपुर, पो. – कालापाथर,
थाना – चाकुलिया, जिला – पूर्वी सिंहभूम, झारखण्ड,
पिन– 832301, मो – 9800432482

8. संताली भाषा में मूल शब्द या संज्ञा शब्दों के पुर्व आयमा, आडिगान,आडिसांगे, सांगे, आडिगटान, आमदा, आडिआमदा, उसता.य, आडी अकज आदि प्रत्ययों को जोड़ कर बहू वचन बनाया जाता है। जैसे – आडिसांगे होड़ (बहुत आदमी), आयमा होड़ (बहुत आदमी), आडिअकज दाक् मेनाक्आ (पानी बहुत ज्यादा है) आदि।
9. संताली एक योगात्मक भाषा है। योगात्मक भाषा होने के कारण पद बनाने के लिए शब्दों में संबंध तत्व या प्रत्यय जोड़ने की आवश्यकता है। जैसे – जम+आक् = जमाक्, आ+सेन = आसेन आदि।
10. संताली भाषा में द्विरुकत (संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण, अव्यय) शब्दों का व्यवहार होता है। जैसे – अड़ाक् – अड़ाक्, इञ+इञ = इञिञ आदि।

निष्कर्ष :–

सच तो यह है कि मातृभाषा के साहित्य लिखन से ही सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक और राष्ट्रीय जीवन का परिचय मिलता है । उसी तरह संताली संतालों का मातृभाषा है और उसी भाषा के माध्यम से वर्तमान काल के अनुरूप लिखित साहित्य का सृजित हो रहा है एवं साहित्यकारों द्वारा समाज को आगे निरन्तर विकास के लिए नवीनता लाता रहा है । दुसरी ओर संताली भाषा का स्पष्ट विशेषताएं सामने आ रहा है। इससे हम कह सकते हैं सन्ताली भाषा कई क्षेत्रों में अपना महत्व रखता है।

संदर्भ सूची –

1. शुक्ल डॉ. धीरेन्द्र – हिन्दी नाट्य परिदृश्य, प्रकाशन संस्थान, 4268–B/3, अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली – 110002 पृष्ठ संख्या – 14
2. शुक्ल डॉ. धीरेन्द्र – हिन्दी नाट्य परिदृश्य, प्रकाशन संस्थान, 4268–B/3, अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली – 110002 पृष्ठ संख्या – 14
3. डॉ. नगेन्द्र एवं डॉ हरदयाल, हिंदी साहित्य का इतिहास – मयूर बुक्स, 4226/1 अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली 110002 । 64 वां संस्करणः अगस्त 2018। पृष्ठ संख्या – 44
4. सिंह बी.एन. – शिक्षा – सिद्धांत, शिक्षा – दर्शन, शिक्षा समाज शास्त्र, नवदीप पब्लिकेशन दीपगंगा कॉम्प्लेक्स, अशोक राजपथ, पटना – 4, पृष्ठ संख्या – 57
5. सोरेन भोगला – संताली भाषा लिपि और साहित्य का विकास – पृष्ठ संख्या–62
6. सिंह बी.एन. – शिक्षा – सिद्धांत, शिक्षा – दर्शन, शिक्षा समाज शास्त्र, नवदीप पब्लिकेशन दीपगंगा कॉम्प्लेक्स, अशोक राजपथ, पटना – 4, पृष्ठ संख्या – 57

3

गिजूभाई की बाल–शिक्षा और जीवन कौशलों का विकास

चित्रलेखा शर्मा, डॉ0 प्रताप सिंह राणा

सारांश

शिक्षा मानवजीवन की प्रगति की प्रथम सीढी है। शिक्षा का उद्देश्य बालकों को भावी जीवन के लिए तैयार करना है। जिससे बालक समाज का एक सक्रिय, योग्य और उत्तरदायी नागरिक बनने में सक्षम हो और जीवन में आने वाली चुनौतियों का सामना कर सकें। आज हम 21वीं शताब्दी के उच्च तकनीक से पूर्ण समाज में रह रहे हैं। जहां सूचना तकनीकी के बढ़ते प्रभाव के कारण शिक्षा की पारम्परिक अवधारणाएं परिवर्तित हो रहीं हैं। आज शिक्षा में जीवन उपागम का महत्व बढ़ गया हैं। ऐसे में यक्ष प्रश्न यह है कि बालक को जीवन उपयोगी शिक्षा किस प्रकार प्रदान की जाए जिससे बालक जीवन में आने वाली समस्याओं से आसानी से निपट सकें। इन्हीं सब प्रश्नों का उत्तर देखने के लिए जीवन कौशलों पर आधारित शिक्षा कैसी हो?इस संदर्भ में हम जीवन कौशलों के बारे में चर्चा करेंगे। इसके साथ ही 15 नवम्बर 1885 में जन्में गिजूभाई (गिरजाशंकर भगवान बधेका) की बाल–शिक्षा सूचना पर आधारित न होकर जीवन कौशलों पर आधारित थी। वह अपनी बाल्यकाल की शिक्षा से बहुत दुखी थे, इसलिए उन्होंने स्वयं लिखा है– ''घोडों के अस्तबलों जैसी शालाओं को बारूद से उड़ा दो'' उन्होनें 1920 में दक्षिणामूर्ति बाल–मंदिर, भावनगर की स्थापना की। वहीं पर उन्होंने बाल–शिक्षा में प्रयोग करते हुए विभिन्न जीवन कौशलों को विकसित किया। लेकिन 23 जून 1939 को मुम्बई में उनका निधन हो गया जिस कारण उनके द्वारा किये गए प्रयोगों से देश लाभान्वित न हो सका लेकिन उनकी रचनाओं का हिन्दी अनुवाद होने के उपरान्त शिक्षाविदो का ध्यान इस ओर गया है। प्रस्तुत शोधपत्र में गिजूभाई की बाल–शिक्षा और जीवन कौशलों पर प्रकाश डाला है।

शब्द संकेत –

गिजूभाई की बाल–शिक्षा (प्राथमिक शिक्षा)

जीवन कौशल (जीवनोपयोगी शिक्षण)

प्रस्तावना

शिक्षा मानव–जीवन की प्रगति पथ की प्रथम सीढ़ी है। शिक्षा के द्वारा बालक जीवन के प्रति एक उचित दृष्टिकोण विकसित करता है। शिक्षा के द्वारा बालक बौद्धिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक समस्याओं का समाधान खोजता है। शिक्षा बालको को न केवल जीवन के फैसले लेना सिखाती है, वरन् उसे उन्नतशील सुसंस्कृत और सभ्य भी बनाती हैं। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य भावी जीवन के तैयार करना है। जिससे बालक एक सक्रिय एवं योग्य नागरिक बन सके।

जीवन कौशल मनोसामाजिक योग्यताओं का एक समूह है जो बालक को निर्णय लेने, समस्याओं का हल करने, सर्जनात्मक एवं आलोचनात्मक ढंग से सोचने, प्रभावशाली ढंग से संवाद करने, स्वस्थ आदतों का निर्माण करने, परानुभूति करने, अपने जीवन को स्वस्थ उत्पादित ढंग से व्यवस्थित करने में सहायता करता है। ये सभी क्षमताएं बालकों को जीवन की कठिन परिस्थितियों का सामना करने, मानसिक और सामाजिक योग्यताएं विकसित करने में सहायक होती हैं। 15 नवम्बर 1885 ई0 में गुजरात में जन्मे गिजूभाई (गिरजाशंकर भगवान बधेका) ने 1920 में दक्षिणामूर्ति बाल–मंदिर, भावनगर की स्थापना की। वहां पर रहकर उन्होंने बालकों की शिक्षा पर नए–नए प्रयोग किए। उनका मानना था कि शिक्षा ज्ञान अर्जन करने और तथ्यों को स्मरण करने की वस्तु नहीं है। उन्होंने समाज के सक्रिय, योग्य और उत्तरदायी सदस्य के निर्माण के लिए शिक्षा में क्रांतिकारी बदलाव किए । उनका मानना था कि शिक्षा जीवनोपयोगी होनी चाहिए। वह सूचना केन्द्रित शिक्षा के विरोधी थे, उनके अनुसार शिक्षा बालक केन्द्रित होनी चाहिए। वह रटने के बजाए करके सीखने पर बल देते थे। वह परम्परागत सूचना देने के बजाय मनो–सामाजिक योग्यताओं और कौशलों के विकास पर बल देते थे और हस्त कौशलों के सिखाने पर बल देते थे। इनकी बाल–शिक्षा का उद्देश्य बालक में जीवन कौशलों का विकास करना आवश्यक है। इसके लिए उनका मानना है कि बालकों को कहानी, कविता, खेल के माध्यम से जीवनोपयोगी शिक्षा देनी चाहिए। जिससे बालक बड़ा होकर जीवन में आने वाली चुनौतियों का सामना कर उनका समाधान कर सकें।

गिजूभाई के अनुसार **'' गिजूभाई बालक की अन्तः शक्तियों के विकास में आने वाले अवरोधों को दूर कर उनके विकास को सकारात्मक गति प्रदान करना ही शिक्षा है।''**

गिजूभाई की बाल–शिक्षा का प्रमुख उददेश्य बालक का सर्वागीण विकास करना है। उनकी बाल–शिक्षा के अग्रलिखित उददेश्य हैं–

- स्वस्थ आदतों का विकास
- आत्मविकास का उददेश्य
- सृजनात्मकता का विकास
- व्यक्तित्व समायोजन का विकास
- जीविका उपार्जन की शक्ति का विकास

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने के लिए विभिन्न प्रकार के जीवन कौशलों को विकसित करके ही बालक को पूर्ण व्यक्ति बनाया जा सकता है। परन्तु वर्तमान शिक्षा पद्धति बालकों में जीवन कौशलों का विकास नहीं कर पा रहीं है। इस कारण बालक जीवन में आने

वाली कठिनाईओं और चुनौतियों का सामना करने में सक्षम नहीं हो पा रहें है। इसी कारण बालकों में चिंता, हताशा और तनाव उत्पन्न हो रहा है।

शिक्षा ही एक ऐसा यन्त्र है जो जीवन कौशलों को विकसित करने में हमारी मदद कर सकती है।

1. जीवन कौशलों का अर्थ और बाल–शिक्षा – अपने जीवन को सरल और सहज बनाना ही जीवन कौशल है। जो बालको को दैनिक जीवन की मांगों और चुनौतियों का प्रभावपूर्ण ढंग से सामना करने में समर्थ बनाती है। यह कौशल विकास एक आजीवन प्रक्रिया है। जो बालकों को बढ़ने और परिपक्व होने में मदद करता है।

2. जीवन कौशल के प्रकार – जीवन कौशल उपागम पारम्परिक शैक्षिक उपागम से भिन्न हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 1997 में जीवन कौशलों को जीवन का अंग बताते हुए व्याख्या की है। जीवन कौशलों की कोई विस्तृत सूची नहीं है लेकिन उत्पादक और संतोषजनक जीवन जीने के लिए नौ–जीवन कौशल आवश्यक बताए गए हैं। इन कौशलों की प्रथमिकता बालकों की जीवन परिस्थितियों पर निर्भर करती है। जिसमें संस्कृति, विश्वास, भौगोलिक स्थिति शामिल है। मुख्य रूप से नौ कौशल इस प्रकार बताए गए हैं–

2.1 समस्या समाधान – जीवन में आने वाली समस्याओं को समझने और उनके समाधान निकालने की प्रक्रिया ही समस्या समाधान है।

2.2 निर्णय निर्माण – समस्या को हल करने के लिए तार्किक निष्कर्ष निकालकर उचित कार्य करना ही निर्णय निर्माण है।

2.3 आलोचनात्मक चिंतन – उचित कारणों और साक्ष्यों के आधार पर वस्तुनिष्ठ निर्णय लेना ही आलोचनात्मक चिंतन हैं।

2.4 सर्जनात्मक चिंतन – किसी कार्य को नए व अलग तरीके से देखने व करने की योग्यता सृजनात्मक चिंतन होती है।

2.5 सम्प्रेषण कौशल – प्रभावी ढंग से पढना, बोलना, लिखना, सुनना की योग्यता ही सम्प्रेषण कौशल है।

2.6 आत्मजागरूकता – स्वयं को जानने की योग्यता ही आत्मजागरूकता है।

2.7 तनाव प्रबन्धन – तनावपूर्ण स्थितियों में स्वयं को स्थिर बनाए रखना ही तनाव प्रबन्धन कहलाता है।

2.8 परानुभूति – दूसरे के स्थान पर स्वयं को रखकर देखना ही परानुभूति है।

2.9 अंतवैयक्तिक संबंध – यह कौशल हमें मैत्रीपूर्ण संबंध बनाए रखने में मदद करता है। इसमें प्रभावी सम्प्रेषण और अच्छी श्रवण क्षमता का गुण होना आवश्यक हैं।

3. शिक्षा में जीवन कौशलो का महत्व – जीवन कौशल शिक्षा आधुनिक परिपेक्ष में बालक को बाल केन्द्रित और शारीरिक और मानसिक क्षमता को विकसित करने में मदद करती हैं राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में भी जोर दिया गया है कि जीवन संबंधी कौशलों का दैनिक जीवन की चुनौतियों और मांगों के संदर्भ में महत्वपूर्ण स्थान है।

4. जीवन कौशल पर आधारित शैक्षणिक गतिविधियां –

सम्भावित कौशल	शैक्षणिक गतिविधि
सम्प्रेषण कौशल	समूह कार्य
परानुभूति	
अंतवैयक्तिक संबंध	
समस्या समाधान	**प्रोजेक्ट**
सृजनात्मक चिंतन	
आलोचनात्मक चिंतन	
अंतवैयक्तिक संबंध	
तनाव प्रबंधन	**खेल, नाट्य, वाद–विवाद**
निर्णय निर्माण	
समस्या समाधान	

शिक्षक का जीवन कौशलों को विकसित करने में योगदान – जीवन कौशल को विकसित करने में शिक्षक का महत्वपूर्ण स्थान है। प्रो0 एस0 के0 दुबे के शब्दों में – **जीवन कौशल का आशय उन दक्षताओं के विकास से हैं जो बालक के सर्वांगीण विकास में योगदान देती हैं। और बालक को कुशल नागरिक और योग्य सामाजिक सदस्य के रूप में विकसित करते हुए उसमें जीवन की विषम परिस्थितियों में समायोजन की योग्यता विकसित करती है।** यह योग्यताएं एक शिक्षक द्वारा ही दी जा सकती हैं।

निष्कर्ष– जीवन कौशल को अच्छी तरह समझने के उपरान्त गिजूभाई की बाल–शिक्षा द्वारा कैसे जीवन कौशलों को प्राप्त किया जा सकता हैं। इस पर चर्चा करेंगें– गिजूभाई के अनुसार शिक्षा प्राप्त करना केवल ज्ञान का अर्जन नहीं वरन् जीवन कौशलों का विकास करना भी हैं। जीवन कौशलों के साथ ही आत्मविकास और जीवनोपयोगी हस्त कौशलों का विकास भी शिक्षा का मुख्य उददेश्य है। जीवन कौशलों का विकास उनकी बाल शिक्षा में देखने के लिए उनकी बाल–शिक्षा में होने वाली शैक्षणिक गतिविधि के माध्यम से इस सारणी में देखा जा सकता है–

गिजूभाई की बाल शिक्षा की शैक्षणिक गतिविधि से होने वाले जीवन कौशलों का विकास

क0 सं0	शैक्षणिक गतिविधियां	सम्भावित जीवन कौशल
1.	समूह कार्य गिजूभाई बाल शिक्षा में बालकों से समूह कार्य करवाते थे जैसे– बागवानी।	सम्प्रेषण कौशल परानुभूति अंतवैयक्तिक संबंध
2.	प्रोजेक्ट गिजूभाई बाल–शिक्षा में बालकों को प्रोजेक्ट के माध्यम से पर्यावरण शिक्षा, भूगोल और इतिहास का अध्ययन करवाते थे।	समस्या समाधान सृजनात्मक चिंतन आलोचनात्मक चिंतन अंतवैयक्तिक संबंध
3.	खेल, नाट्य (भूमिका निर्वाह) गिजूभाई मातृभाषा शिक्षण, गणित, भूगोल, कला, नैतिक शिक्षा में इस विधा का प्रयोग करते थे।	तनाव प्रबंधन अंतवैयक्तिक संबंध परानुभूति
4.	प्रश्नोत्तर इस विधा का प्रयोग व्याकरण, इतिहास, भूगोल और वार्तालाप में देखने को मिलता है।	सम्प्रेषण कौशल सृजनात्मक चिंतन आलोचनात्मक चिंतन अंतवैयक्तिक संबंध
5.	वाद–विवाद एवं विचार–विमर्श गिजूभाई की गीता (दिवास्वप्न) में वाद–विवाद और विचार विमर्श की विभिन्न झलकियां परिलक्षित होती हैं।	निर्णय लेना संप्रेषण कौशल
6.	बुद्धिशीलता या मस्तिष्क झंझावत गिजूभाई कहानी शिक्षण में इस विधा का प्रयोग करते हैं।	समस्या समाधान

निष्कर्ष

इस सारणी को देखने के उपरान्त ज्ञात होता है कि जीवन कौशलों को विकसित करने के लिए पाठ्यक्रम लचीला होना चाहिए जिससे बालक अपनी जरूरत के अनुसार शिक्षा के माध्यम से जीवन कौशलों को भी विकसित कर सकें। यदि प्रारम्भ से ही विभिन्न विषयों को सिखाते समय बालको में जीवन कौशलों को विकसित कर दिया जाए तब बालक में प्रारम्भिक अवस्था में ही जीवनोपयोगी गुणों का विकास हो जाता है। और वह जीवन पर्यन्त समुचित सामंजस्य स्थापित कर आदर्श जीवन व्यतीत कर सकता है। गिजूभाई का मानना हैं कि बालक में जीवन कौशल विकसित करने के लिए किसी विशेष प्रयास की आवश्यकता नहीं है बल्कि यदि नियोजित ढंग से बालक को अवसर प्रदान किए जाएं तब बालक स्वयं आसानी से जीवन कौशलों को आत्मसात कर लेता है। जिससे बालक को एक योग्य, सक्रिय उत्तरदायी नागरिक बनाया जा सकता है।

संदर्भ सूची

- अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा आयोग, 1996. लर्निंग द ट्रेजर विदइन, यूनेस्को, पेरिस.
- राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2006 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा – 2005. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- विश्व स्वास्थ्य संगठन. 1997. विद्यालयों में जीवन कौशल शिक्षा. जेनेवा.
- राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, पूर्व प्राथमिक शिक्षाः एक परिचय, नई दिल्ली :एन.सी.ई.आर.टी., 2003
- राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, शिक्षा बिना बोझ केः राष्ट्रीय सलाहकार समिति की रिपोर्ट :एन.सी.ई.आर.टी., 2004
- राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, कैसे पढ़ाये रिमझिमः शिक्षक संदर्शिका, नई दिल्ली :एन.सी.ई.आर.टी., 200
- लाल, रमन बिहारी, भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्याएं, मेरठः रस्तौगी पब्लिकेशन, 2005–06
- बधेका गिजूभाई, दिवास्वप्न (शिक्षा संबंधी प्रयोगों की कहानी) (गुजराती से अनु0) सूरज प्रकाश, अनु0 नई दिल्लीः गीतांजलि प्रकाशन, 200
- 6बधेका गिजूभाई, प्राथमिक विद्यालय में भाषा शिक्षा (गुजराती से अनुवाद) दीनानाथ दबे, अनु0 जयपुरः गीतांजलि प्रकाशन, 2005

चित्रलेखा शर्मा
शोधार्थिनी
भगवन्त यूनिवर्सिटी, अजमेर, राजस्थान, भारत
मोबाइल नं0 7534089365

डॉ0 प्रताप सिंह राणा
शोधनिदेशंक
भगवन्त यूनिवर्सिटी, अजमेर, राजस्थान, भारत

4

मालती जोशी के उपन्यास में नारी पात्र

नेहा

सारांशः

उपन्यास और कहानी हिंदी साहित्य की पुरानी विधाएं हैं। जिसमें समय की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत होती है। दुनिया में हर चीज परिवर्तनशील है। यह सृष्टि का नियम है। हर आने वाला समय व्यक्ति में कुछ ना कुछ परिवर्तन अवश्य लाता है। समाज में नारी का जीवन पुरुषों की भांति अधिक उतार चढ़ाव से भरा रहता है, ठीक उसी प्रकार मालती जोशी के कथा साहित्य में भी उतार चढ़ाव आते रहते है। मालती जोशी ने अपने साहित्य के जगत में पुरुष के स्थान पर स्त्री को अधिक महत्वता प्रदान की है। कथा साहित्य के माध्यम से मालती जोशी ने नारी में आधुनिक विचारों का संचार करने की कोशिश की है। मालती जी ने यह दर्शाने का प्रयास किया है कि पुरानी और कठोर विचार प्रक्रिया को त्यागने से ही समाज की प्रगति हो सकती है। मालती जोशी ने अपने कथा साहित्य में नारी के विभिन्न प्रकार वर्णित किए हैं। कहीं उन्होंने नारी को बहन के रूप में, कहीं बेटी के रूप में, कहीं पत्नी के रूप में तो कहीं मां के रूप में दर्शाया है। स्वयं मालती जी अपने आप को एक घरेलू महिला ही मानती आ रही है। उनके द्वारा लिखा गया साहित्य आम नारी को भी आधुनिक बनाने की ओर प्रेरित करता है। मालती जोशी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज में नवीन व आधुनिक विचारों का संचार किया है। वैदिक काल में भी नारी के जीवन में नए–नए विचारों का संचार होता था। पुरुषों के समान ही नारी भी समाज के कार्यों में भागीदारी देती थी। नारी की स्थिति का सजीव चित्रण मालती जी ने आधुनिकता बोध के साथ बखूबी किया है।

"महाभारत में भी पत्नी के विषय में कहा गया है कि घर–घर नहीं किंतु ग्रहणी ही घर है। ग्रहणी विहीन घर अरण्य दृष्य है। एक वृक्ष के नीचे भी अगर पत्नी हो तो वह घर है। उसके बिना महल भी बीहड़ जंगल है।"

मूल शब्दः– परिवर्तनशील, आत्मिक संबंध, भावना की अनुभूति।

प्रस्तावनाः–मालती जोशी जी का साहित्य भूतकाल, वर्तमान काल और भविष्य काल को साथ लेकर चलता है। मालती जोशी जी ने समाज के समसामयिक परिवेश में नारी का आधुनिक स्वरूप उकेरा है। समाज की यथास्थिति में नारी की भूमिका कितनी सशक्त है इसका निर्वाह लेखिका ने साहित्य लेखन में किया है। मालती जोशी ने अपने उपन्यास सहचारणी में दर्शाया है कि एक पुरुष सत्तात्मक समाज में औरत के साथ कितनी निर्दयता, क्रूरता और अमानवीयता का व्यवहार करता है। योगेश और नीलम उपन्यास में नायक नायिका है। इस उपन्यास में नीलम का विवाह योगेश के साथ कर दिया जाता है। वह पहले से ही शादीशुदा है और एक बेटी का पिता है। लेकिन नीलम ने भी शादी से पहले कोई छानबीन नहीं की थी, परंतु नीलम तन मन धन से योगेश को चाहती है। योगेश अपनी बुरी हरकतों से बाज नहीं आता है। शादी के 4 वर्ष पूरे भी नहीं हुए कि वह सीमा की ओर आकर्षित हो गया। यह सब जानते हुए भी नीलम सहचारिणी धर्म निभाती है। यह देखकर योगेश सोचता है कि नीलम उसे नीचा दिखाने का प्रयास कर रही है। इस उपन्यास में योगेश अंत तक नीलम की कोई खबर नहीं लेता नीलम कामकाजी स्त्री बनकर अपना जीवन यापन करती है। नीलम कहती है कि सहचारिणी बनना कोई आसान बात नहीं है। पति जब बार–बार एक ही गलती करे तो मजबूर होकर स्त्री को सहचारिणी का निर्णय लेना ही पड़ता है। इस प्रकार मालती जोशी ने अपने उपन्यास में सहचारिणी नीलम की मनोस्थिति को दर्शाया है।

मालती जोशी का एक अन्य उपन्यास पुनरागमनायच जिसका प्रकाशन 1985 में हुआ यह एक लघु उपन्यास है इसमें नायक दीपक विवाह से पहले अपने मंगेतर निधि से प्रेम का परिमान मांगता है। निधि तन मन धन से समर्पित हो जाती है परंतु बाद में दीपक निधि के संस्कारों को गलत बता कर रिश्ता तोड़ देता है। निधि मानसिक रूप से टूट जाती है। इसमें एक ऐसे रिश्ते को दर्शाया गया है जिसकी नीव समझौते पर रखी गई है।

मालती जोशी का उपन्यास राग विराग जिसमें एक स्त्री की स्थिति को दर्शाया गया है। इस उपन्यास की नायिका कल्याणी मनोज को इंजीनियर बनाने के लिए अपनी दुनिया छोड़ देती है। परंतु मनोज अपनी मां की बातों में आकर उसके काले रंग को लेकर उसे छोड़ देता है। शादी नहीं करता और अर्चना से विवाह कर लेता है।श्रीरंग कल्याणी का साथ देते हुए उसे पुनः जीवन जीने की राह दिखाता है और सितारों की दुनिया में ले जाता है। इस प्रकार वह फिर से संगीत की दुनिया को अपना लेती है और जीवन जीने के लिए फिर उम्मीद के साथ आगे बढ़ती है और एक नई दुनिया का बसेरा करती है।

मालती जोशी का उपन्यास शोभायात्रा जिसमें बेमेल विवाह की समस्या को उजागर किया गया है। इस उपन्यास की नायिका वंदना अपने वैवाहिक जीवन से खुश नहीं थी। वंदना वह उसके पति मनोज के वैवाहिक जीवन में तालमेल नहीं बैठता था। वंदना अंग्रेजी साहित्य की उच्च शिक्षित अध्येता संवेदनशील और सुसंस्कृत युवती है। परंतु मनोज शराबी, व्यभिचार, खूब पाखंडी, व्यक्ति है जिस कारण मनोज और वंदना में रोज झगड़े होते थे। यह उपन्यास एक बेमेल विवाह की समस्या को उजागर करता है। मालती जोशी के ऐसे अनेक उपन्यास है जिसमें नारी विभिन्न समस्याओं का सामना करती है।

एक अन्य उपन्यास पाषाण युग के माध्यम से मालती जोशी ने अनमोल विवाह और पुनर्विवाह की समस्या को उजागर किया है। नायिका नीरजा बकुल के पिता की शोध छात्रा थी। पहले बकुल उनको दीदी के रूप में संबोधित करता था लेकिन इसी कुप्रथा के कारण नीरजा को मां का दर्जा दिया लेकिन बकुल ने यह स्वीकार नहीं किया। शादी के बाद प्रोफेसर साहब भी नीरजा पर शक करने लग गए, पुस्तक प्रकाशन में पत्नी की अहम भूमिका होती है लेकिन यह हक

प्रोफेसर साहब ने अपने मृत पत्नी को दिया और नीरज को पराई स्त्री का नाम दे दिया। जिस कारण नीरजा को बहुत दुख हुआ कॉलेज में नौकरी मिलने के बाद नीरजा बिना किसी से कुछ कहे घर छोड़कर चली गई उपन्यास में नायिका नीरजा का समर्पण चरित्र किया है। मालती जोशी ने अपने उपन्यासो में समाज में यथा स्थिति में नारी की भूमिका कितनी सशक्त है इसका निर्वाह लेखिका ने अपने लेखन में किया है उन्होंने अपने उपन्यास में नारी की स्थिति का वर्णन किया है। मालती जोशी ने अपने कथा साहित्य में स्त्री को पुरुष के समान दर्जा मिलने की बात का समर्थन किया है। लेखिका के साहित्य में अधिकांश वर्णन महिला पात्रों का ही रहा है। स्वयं लेखिका का विचार आधुनिकता बोध की ओर रहा है।

निष्कर्ष :–

अंत में कहा जा सकता है कि मालती जोशी का कथा साहित्य वर्तमान में भी नारी की भूमिका को लेकर बहुत ही प्रासंगिक है। नारी पात्रों का मर्मस्पर्शी चरित्र चित्रण करना मालती जोशी जी के कथा साहित्य की विशेषता है। समाज का नारी के साथ संपूर्ण वृतांत अपने कथा साहित्य में जोशी जी ने उकेरा है अपने युगांतकारी लेखन से लेखिका ने नारी पात्रों में जीवटता पैदा की है। सुप्रसिद्ध कहानी लेखिका पदम श्री विजेता मालती जोशी ने संपूर्ण साहित्य में नारी की स्थिति का ही चित्रण किया है। नारी पात्र हमेशा अपने संघर्ष में स्थिति से जूझती है। जीवन को सही दिशा में ले जाने का प्रयास करती है बिना संघर्ष और समस्याओं के जीवन जीना वास्तविक नहीं होता है यही जीवन की वास्तविक स्थिति है। अपनी लेखनी कला से सबको प्रभावित करने वाली लेखिका अपने साहित्य में हमेशा आधुनिक विचारों को ही सम्मिलित करती है। विशेषकर नारी समुदाय के प्रति संपूर्ण लेखन कार्य समर्पित करने वाली मालती जोशी हमेशा सलंग्न रही है। बहुमुखी प्रतिभा की धनी मालती जोशी का साहित्य सृजन अभी अनवरत जारी है।

संदर्भ सूची –

(1)महाभारत ग्रंथ से एक परिभाषा पृष्ठ संख्या
(2)सहचारिणी :– मालती जोशी पृष्ठ संख्या 22
(3)पाषाण युग :– मालती जोशी पृष्ठ संख्या 56
(4)पुनरागमनायच :–मालती जोशी पृष्ठ संख्या 34
(5)राज विराग :– मालती जोशी पृष्ठ संख्या 44
(6)डॉक्टर सुभाष ताल्लेकर, मालती जोशी का कथा साहित्य पृष्ठ संख्या 142

Neha
House No 145
Tarang Residency, Sector 7
Sohna Road, Palwal (Haryana)
Pin 121102
Mobile No:- 8930828220
E-mail:- nehasharma02425@gmail.com

5

स्वामी दयानन्द : एक युग पुरुष

डॉ0 सुरेन्द्र सिंह

सारांश :–

स्वामी दयानन्द एक महान समाज सुधारक, एक दूरदर्शी राजनीतिक चिन्तक तथा आधात्मिक क्षेत्र में विशेष पहचान रखने वाले विचारक तथा दार्शनिक थे। उनके व्यक्तित्व तथा कृतित्व दोनों से मानव कल्याण के क्षेत्र में उनके जीवन से प्रेरणा ली जा सकती है। महर्षि दयानन्द का जीवन 12 फरवरी 1824 से 30 अक्तूबर, 1883 तक रहा। जिसमें उन्होंने प्रतिपल सकारात्मक तथा रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाकर मानवता को विशेष योगदान दिया। उन्होंने साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद तथा ब्रिटेन का भारत में शासन का पुरजोर विरोध किया है। वे राष्ट्रवादी चिन्तक थे। उनके राष्ट्रवाद में प्राचीन भारतीय सभ्यता व संस्कृति को गौरवमयी करना बहुआयामी दृष्टिकोण के आधार पर राष्ट्र–कल्याण करना था। नवजागरण का मार्ग प्रशस्त करने में उनका विशेष योगदान था। वे वेदों की ओर लोटने के लिए भारतीयों को प्रेरित करते है ताकि उनके व्यक्तित्व तथा बौद्धिक विचारों में सुधार किया जा सके तथा मनोबल में वृद्धि की जा सके, जिससे भारतीय जनमानस में भयरहित वातावरण का निर्माण किया जा सके। उन्होंने भारतीय रियासतों का भ्रमण किया तथा आर्य समाज के नियमों व सिद्धांतों को व्यवहार में लाने के लिए प्रेरित किया। भारतीय शिक्षा में महिलाओं को भी गुरूकुल पद्धति से शिक्षा प्रदान करने को आवश्यक मानते थे। वे हिन्दुत्व के प्रबल समर्थक थे तथा भारतीयों को आर्य बताया। आर्य का अर्थ–श्रेष्ठ अर्थात् भारत में विश्व के श्रेष्ठ नागरिक निवास करते है। वे स्वराज्य के प्रबल समर्थक थे। राष्ट्र–भाषा की वकालत तथा स्त्री–शिक्षा में विश्वास करते थे। उन्होंने जाति–व्यवस्था तथा मूर्ति–पूजा का खण्डन किया। वे सामाजिक, समानता, बंधुत्व जैसे रचनात्मक कार्य के पक्षधर थे। उस समय में उनका राज्य के लोकतांत्रिक स्वरूप तथा स्वराज्य के स्वरूप का अध्ययन अपने आप में उत्कृष्ट था।

भूमिका :–

स्वामी दयानन्द ने भारतीयों के आत्म–सम्मान की सुरक्षा की तथा युवाओं को मानसिक तौर पर जागरूक करने का कार्य किया। उनके कार्यों में भारतीय इतिहास को महान बताया तथा प्राचीनकालीन व्यवस्था में भविष्य को निखारने के गुणों को समाहित करने की प्रेरणा दिखाई देती है। वे भारतीय संस्कृति को श्रेष्ठ मानते थे लेकिन इसमें आई कुरीतियों को दूर करने के लिए आह्वान किया। उन्होंने हिन्दू–पुनरूद्धार पर बल दिया। अपने राजनपीतिक चिन्तन में कहते थे कि अंग्रेज भारतीयों को प्रसन्न नहीं कर सकते क्योंकि उनमें निष्पक्षता की प्रबलता का अभाव है। विदेशी सरकार चाहे कितनी भी मूल्यों तथा पक्षपातों से परे क्यों न हो, स्वशासन के आगे पूर्णतः विफल है। वे अपने चिन्तन में आगाह करते है कि भारतीय विदेशियों के विचारों से बहकने का कार्य न करें क्योंकि इससे राष्ट्रीय गौरव को हानि पहुंचती है। अपने राजनीतिक विचारों में दयानन्द ने राष्ट्रवादी विचारधारा को जगाया जो कि अंग्रेजों द्वारा साम्राज्यवाद में जकड़ लिया गया था।[1] वे एक महान सामाजिक सुधारवादी चिन्तक थे। उन्होंने इस बात की हिमायत की कि धार्मिक सुधारों के बिना राष्ट्रवाद की परिकल्पना नहीं की जा सकती। समाज व राष्ट्र में नैतिक मूल्यों के अभाव में राजनीतिक सुधार असंभव तथा अल्पकालीन होगा। उनके राजनीतिक विचारों की पृष्ठभूमि में दार्शनिक मूल्यों का समावेश है। उनका कहना था कि यदि भारतीय वेदांत के अनुरूप अपना व्यवहार करें तो उनमें हीन भावना का अंत हो जाएगा। उनके 'वेदों की ओर लौटो' का नारा यह बताता है कि वेदांत ईश्वरीय सत्ता सार्वदेशिक थी जो एक ईश्वरीयवाद में विश्वास रखती है।[2] वे निर्गुण ईश्वर के उपासक थे। वे एक अच्छे देशभक्त के लिए आडंम्बरी व्यवहार के स्थान पर यर्थाथवाद में विश्वास के पक्षधर थे। यह मार्ग व्यक्ति में नैतिकता का द्योतक है। उन्होंने राजनीति में नवजागरण का मार्ग प्रशस्त किया। उनके जीवन में कूट–कूट कर भारतीय प्रेम की भावना भरी पड़ी थी। उनके राजनीतिक विचारों की झलक 'सत्यार्थ प्रकाश' तथा 'ऋग्वेदादिभाष्या' नामक ग्रन्थों में मिलती है। वे प्रबुद्ध राजतंत्र, ग्राम सुशासन तथा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के प्रबल समर्थक थे।

अपने दार्शनिक विचारों में स्वामी दयानन्द ने स्पष्ट वर्णन किया है कि :–

भारतीय राष्ट्रवाद के प्रबल समर्थक :–

दयानन्द ने भारतीयों में स्वाभिमान जगाया, उन्होंने स्वदेश पर बल दिया। वे भारतीय राष्ट्रवाद के अग्रदूत थे। उन्होंने पश्चिमी सभ्यता का पुरजोर विरोध किया तथा भारत की संस्कृति का प्रबल समर्थन किया। हिन्दू धर्म में आई कुरीतियों को दूर करने के लिए भी पहल उन्होंने की। भारतीयता के गीतों को उन्होंने जनमानस तक पहुंचाया। भारत को उन्होंने विश्व का पारसमणि बताया जिसे लोहे रूप दरिद्र विदेशी छूने के साथ ही सुवर्ण तात्पर्य अमीर बन जाते है।[3] उन्होंने भारत के नागरिकों को आर्य बताया तथा आर्यो को ही विश्व में श्रेष्ठ स्थान दिलाने की वकालत की। उन्होंने वेद को वाणी की उपमा दी तथा ईश्वर का प्रिय देश बताया। वे अन्याय का लोप चाहते थे तथा न्याय की संकल्पना की अभिव्यक्ति को उत्तम मानते थे। निःसंदेह वे लोकतांत्रिक विचारों के ही प्रबल समर्थक थे। वे वेदिक धर्म को उत्तम मानते थे। उन्होंने फ्रांसीसी क्रांति, यूनान तथा रोम के गणतंत्रवाद का समर्थन किया और उनसे प्रेरणा ली।

सामाजिक समानता, राजनीति की पहली पृष्ठभूमि को मानना :–

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना की, जिनके प्रमुख सिद्धांतों में जाति व्यवस्था, असमानता, लिंग–भेद का पुरजोर विरोध किया।[4] दयानन्द ने भारतीयों को मानसिक स्वतंत्रता दिलाने का कार्य किया। रविन्द्रनाथ टेगौर ने कहा है कि दयानन्द भारत को नए पथ पर ले जाना चाहते थे जिसमें विवेकपूर्ण समाज का निर्माण हो सके। वे सार्वजनिक सेवा, आत्म–त्याग, उत्साह, अनुशासन और देशभक्ति की भावना के प्रबल दावेदार थे।[5]

स्वराज्य के प्रबल समर्थक :–

महर्षि दयानन्द ने अपनी पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' में स्वराज्य की मांग की। स्वदेशी राज्य के वे हिमायती थे। वे देशवासियों का ध्यान इस ओर ले गये कि बिना स्वतंत्रता के भारत का विकास संभव नहीं है। अतएव स्वराज्य के लिए ही संघर्ष करें, सुधारात्मक दृष्टिकोण की ओर ध्यान न दे। वे कहते थे कि विदेशी शासन कितना ही न्यायप्रिय हो, सुखदायक हो, पक्षपात रहित हो परन्तु यह शासन कभी भी शांति तथा विकास प्रदान नहीं कर सकता। यह शासन सर्वोंगीण विकास नहीं कर सकता। उन्होंने भारत को कभी भी पराधीन न रहने से संबंधित गाने भी लिखे। वे ईश्वर की स्तुति में कहते है कि वे हमें इतना साहस दे कि हम भारत की सेवा कर सके।

राष्ट्र–भाषा की वकालत :–

महर्षि दयानन्द ने राष्ट्र–भाषा के रूप में हिन्दी को स्थान दिया है क्योंकि समस्त भारत की एक भाषा नहीं होगी तो हम एकता में नहीं रह सकेंगे। हालांकि उनकी अपनी मातृभाषा गुजराती थी। वे संस्कृत के विद्वान थे। डा. अम्बेडकर ने भी अपनी पुस्तक थॉट ऑन पाकिस्तान में लिखा है कि दयानन्द वास्तव में आदर्श हिन्दी प्रेमी थे।[6]

देशी रियासतों पर टिप्पणी :–

महर्षि दयानन्द ने देशी रियासतों को उत्तरदायी माना कि उन्होंने 1857 की क्रांति में बढ़–चढ़कर भाग नहीं लिया तथा लगभग तटस्थ रहे। वे देशी–रियासतों में सामाजिक, राजनीतिक चेतना के पक्षधर थे। वे एक महान संत थे जिन्होंने राजा–महाराजाओं के दिल में भी स्वदेश अभियान जगाया इसमें ब्रितानवी सरकार बैचेन हो गई। उन्होंने नरेशों के व्यक्तिगत जीवन में सुधार लाने का प्रयास किया। उन्होंने उदयपुर, कोल्हापुर, इन्दोर, जोधपुर, शाहपुरा में उपदेश दिया तथा बल दिया कि राजा के सार्वजनिक जीवन तथा व्यक्तिगत जीवन में अधिक अंतर नहीं होना चाहिए। उनके प्रभाववश कई नरेशों की दिनचर्या में बदलाव भी आया।[7]

स्वदेशी तथा निर्भयता के समर्थक :–

स्वदेशी के पक्षधर के रूप में उन्हें महात्मा गाँधी के अग्रदूत के रूप में जाना जाता है। वे स्वदेशी का समर्थन करते थे – इसलिए भारत में बनी वस्तुओं के प्रति उनका लगाव था जिससे आत्म–निर्भर समाज का निर्माण किया जा सके। महर्षि दयानन्द के राजनीतिक चिन्तन में निर्भीकता को प्रबलता प्रदान करना। वे स्पष्ट कहते थे कि साम्राज्यवादी शक्तियों से तभी लड़ा जा सकता है जब मानव निर्भीक होगा, साहसी होगा तथा आत्म–बल से प्रेरित तथा लबरेज होगा। ये विचार भारतीय जनमानस को जगाने के लिए ही प्रयोग में लाए गये। स्वतंत्रता का आधार तैयार करने में उनके ये विचार युवाओं को उत्प्रेरित करने वाले सिद्ध हुए। उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज भले ही गैर–राजनीतिक संस्था थी परन्तु उनके सिद्धांतों में प्रबल राष्ट्रवादी विचारधारा को देखा जा सकता है।

प्रजातंत्र के समर्थक :–

उनका प्रजातांत्रिक व्यवस्था में गहरा विश्वास था क्योंकि आर्य समाज के संगठन के चुनाव लोकतंत्र से चुनाव करवाए जाते थे। वे लोकतांत्रिक सिद्धांतों के निर्वाचन पद्धति को श्रेष्ठ मानते थे। इसके लिए उन्होंने आदर्श राजतंत्र शब्द का प्रयोग भी किया है। राजा को परिषद की अध्यक्षता करनी चाहिए। दोनों को ही जनता की सेवा करनी चाहिए। वे पूर्ण स्वाधीन राजतंत्र के विरोधी थे क्योंकि इससे राजा निरंकुश हो जाएगा। अतएव राजा को न्यायप्रिय अन्याय नाशक तथा दुष्ट नाशक होना चाहिए। उन्होंने अमर्यादित दण्ड की व्यवस्था को अस्वीकार कर दिया। सुविचार पर आधारित न्याय को वे प्रबलता देते थे। उनका समानता व भातृत्व में दृढ़ विश्वास था। उन्होंने अपने शासन को जाति–विशेष का विरोधी बताया। उन्होंने अस्पृश्यता का भी खण्डन किया।

प्रबुद्ध राजतंत्र के समर्थक :–

स्वामी दयानन्द प्रबुद्ध राजतंत्र के हिमायती थे। उनका राजनीतिक दर्शन वेदों तथा मनुस्मृति का मिश्रित रूप था। राजदर्शन को उन्होंन इसी का आधार बनाया। मनु की भांति राजा को श्रेष्ठ स्थान जो निरंकुश, अनैतिक तथा अधर्मिता से दूर रहकर शासन करें। दयानन्द ने भी मर्यादित राजतंत्र की वकालत की है जो जन–इच्छा का सम्मान कर सके। राज–काज चलाने की प्रेरणा मंत्रियों से भी ले। उन्होंने नैतिकता पर आधारित राजनीति को प्राथमिकता दी है, वे मानते थे कि राजनीतिक शासकों को भी आद्यात्मिक महापुरुषों के निर्देशानुसार कार्य करना चाहिए।

ग्राम प्रशासन सम्बन्धी विचार :–

स्वामी दयानन्द सरस्वती दूरदर्शिता पर आधारित ग्रामीण प्रशासन की बात करते है। उन्होंने प्रशासनिक इकाई के रूप में गांवों को ही चुना है। ग्रामीण प्रशासन से सम्बन्धित उनके विचार मनुस्मृति से मेल खाते है। उनके अनुसार दो, तीन तथा पांच गांवों के बीच एक प्रशासनिक कार्यालय होना चाहिए, जिसमें कार्यालय संचालन के लिए योग्य कर्मचारियों व अधिकारियों का चयन किया जाए ताकि गांवों का सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक विकास किया जा सके। गांव प्रमुख को भी स्थान दिया जाए। दस गांवों के मुखिया के रूप में एक अधिकारी कार्य करें, बीस गांवों के पीछे एक और अधिकारी, सौ गांवों के पीछे एक और अधिकारी प्रशासनिक संचालन के लिए नियुक्त किए जाए। वे प्रत्येक 10 गांवों के लिए एक पुलिस स्टेशन की स्थापना पर भी बल देते थे। 5 मुख्य पुलिस स्टेशनों पर एक तहसील तथा दस तहसीलों के बाद एक जिले का निर्माण किया जाए ताकि गांवों की सूचना का माध्यम इस प्रकार बन

सके।[8]

अन्तर्राष्ट्रीयता के समर्थक :–

उन्होंने यह भी याचना की है कि आर्य साम्राज्य विश्व–स्तरीय होना चाहिए। प्राचीन भारतीय गौरवमयी शैली के वे उपासक तथा प्रशंसक थे। उनके अध्ययन में समस्त विश्व के लिए संदेश था कि सभी लोग खुश, स्वस्थ तथा बलिष्ठ हो। वे वैश्विक सद्भावना में विश्वास रखते थे। उन्होंने सभी धर्मो की सभा का भी आयोजन किया था, वे हिन्दू तथा मुसलमानों के बीच एकता के प्रबल हिमायती थे। वे एकताबद्ध होकर राष्ट्र कल्याण के लिए कार्य करने के पक्षधर थे। वे कहते थे कि इसाईयों ने हमें गुलाम बनाया है। अतएव हिन्दुओं को भी अपने गौरव को जगाकर ईसाइयत का पुरजोर विरोध करना चाहिए। वे सर्वधर्म के भावों की अभिव्यक्ति में विश्वास रखते थे। वे पूर्व तथा पश्चिम के भेद को पाटने में विश्वास रखते थे।

अहिंसात्मक प्रवृति पर बल :–

स्वामी दयानन्द सरस्वती अहिंसा के प्रबल पुजारी थे। उन्होंने अहिंसा की व्यवहारिक धारणा प्रस्तुत की है। न्याय के मामले में वे कठोर दण्डात्मक प्रवृति को अपनाने पर बल देते है, डाकू, चोर तथा अपराधी को यदि कठोर शारीरिक दण्ड दिया जाए तो दयानन्द को कोई आपत्ति नहीं है। वे अपने व्यक्तिगत जीवन में अहिंसा का पाठ पढ़ा गए कि स्वयं को विष देने वाले को भी उन्होंने माफ कर दिया। उनके रसोइये जगन्नाथ द्वारा दूध में विष देने पर उन्होंने 200 रूपये दिए तथा कहा कि नेपाल में चला जाए तथा भारत से भाग जाए ताकि ब्रिटिश कानूनों से बचा जा सके।[9]

दैवीय नियमों की श्रेष्ठता में विश्वास :–

महर्षि दयानन्द दैवीय श्रेष्ठता में विश्वास रखते थे। वे आद्यात्मिक युगपुरुष थे। उनके व्यक्तिगत जीवन में ईश्वरीय प्रभुसत्ता को ही स्वीकार करते थे। उन्होंने राज्य की परिकल्पना को आवश्यक बताया। वे मानते थे कि बिना राज्य नामक संस्था के समाज में सर्वागीण विकास नहीं किया जा सकता। इसलिए सामाजिक जीवन में भी राज्य की महत्वता को समाप्त करना नहीं चाहते थे। राजकीय कानूनों की अपेक्षा वे ईश्वरीय कानूनों की श्रेष्ठता में विश्वास रखते थे क्योंकि ये कानून सार्वभौमिक तथा सर्वव्यापक हैं। सार्वजनिक जीवन में वे हिंसा को उचित मानते थे जो राज्य तथा समाज के लिए उपयोगी हो।

शिक्षा संबंधी विचार :–

दयानन्द ने शिक्षा को मानव जीवन के लिए अपरिहार्य माना है। समुचित शिक्षा के अभाव में राज्य का विकास संभव नहीं है। वह देश कभी प्रगति नहीं कर सकेगा जिसके पास सुयोग्य नागरिक उत्पन्न करने वाला शिक्षा तंत्र नहीं होगा। उनकी शिक्षा का तात्पर्य शारीरिक निर्माण करना था जो कि इन्द्रियों के नियंत्रण से, साधना से तथा बौद्धिक शक्तियों के विकासात्मक स्वरूप से ही प्राप्त की जा सकती है। उनकी शिक्षा में ब्रह्मचार्य को आवश्यक माना गया है। उनका मानना था कि शिक्षा का कार्य चरित्रवान तथा विद्वान व्यक्तियों के हाथों में ही केन्द्रित होना चाहिए। अतएव वैदिक शिक्षा राज्य तथा समाज के लिए आवश्यक कर देनी चाहिए। वे प्राथमिक शिक्षा के लिए 5 वर्ष से 8 वर्ष तक की आयु सीमा तय करते है। इसके बाद विद्यालय में भेजना, दाखिला करवाना दण्डनीय अपराध माना जाए ताकि अभिभावक इसके प्रति गंभीर हो सके। वे सेवा–निवृत शिक्षकों की सेवाओं को भी वे स्वीकार करते थे। वे नारी शिक्षा को भी अनिवार्य मानते थे क्योंकि पुरुषों के समान शिक्षा लेकर वे अपनी आजीविका कमाने में सक्षम हो जाएगी। वे राष्ट्रीय शिक्षा के पक्षधर थे, नैतिकता, संस्कारयुक्त तथा कर्त्तव्यपरायण शिक्षा देना उनका प्रमुख लक्ष्य था ताकि राष्ट्र की उन्नति में प्रत्येक नागरिक सहभागिता दर्ज करवा सके तथा उन्नतिशील राष्ट्र व समाज का निर्माण किया जा सके।[10]

निष्कर्ष :–

इस प्रकार स्वामी दयानन्द भारत के निर्माताओं में सर्वोच्च स्थान रखते है। उनके देश के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक मुक्ति के लिए आजीवन प्रयास किया। वेदांत के दर्शन तथा प्रकृति की ओर बढ़ों के विचारों में उन्हें लोकप्रिय बना दिया, वास्तव में वे भारत के युग पुरुश थे।

सार–संदर्भ

1. अवस्थी, अमरेश्वर तथा डा. अवस्थी, रामकुमार 'भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन', पृ0सं0–59
2. पी.रामगोपाल, 'भारतीय राजनीति (विक्टोरिया से नेहरू तक), पृ. सं0–57
3. स्वामी दयानन्द 'सत्यार्थ प्रकाश' पृ. सं.–172
4. ताराचन्द 'हिन्दुस्तान', 29 अक्तूबर, 1920 लेख।
5. अवस्थी, अमरेश्वर तथा डा. अवस्थी, रामकुमार 'भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन', पृ0सं0–373
6. 'प्रकाशवीर' हिन्दुस्तान (समाचार पत्र), 5 नवम्बर, 1972 एक लेख।
7. विश्वचन्द्र 'हिन्दुस्तान, 29 अक्तूबर, 1970 लेख,
8. अवस्थी, अमरेश्वर तथा डॉ0 अवस्थी, रामकुमार 'भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन', पृ0सं0–259
9. वही, पृ0सं0–261
10. वही, पृ0सं0–262

डॉ0 सुरेन्द्र सिंह

सहायक प्राध्यापक,

राजनीति–शास्त्र विभाग,

जनता विद्या मंदिर गणपतराय रासीवासिया महाविद्यालय,

चरखी दादरी (हरियाणा)–127306

9813049625

surenderckd74@gmail.com

6

हरियाणा के उभारदार शिल्पों का परिचय व परंपरा के विशेष के संदर्भ में

Dr. Pawan

सारांश :–

कला का उदय मानव जीवन के साथ ही आरंभ हुआ है। किसी भी राष्ट्र की पहचान उसकी संस्कृति होती है। आदिकाल में मनुष्य अपने मन के भावों को चित्रों के माध्यम से ही व्यक्त करता था। वास्तुकला, कला का अभिन्न अंग मानी गई है। आरंभ में वास्तुकला केवल हवेलियों, मंदिरों, मस्जिदों, कलात्मक इमारतों आदि तक ही सीमित थी। लेकिन समय के परिवर्तन के साथ–साथ इसने अपनी अलग पहचान बना ली और यह कलात्मक इमारतों से निकलकर चौराहों और पार्को आदि पर आ गई है।

मानव विकास के साथ–साथ कलाओं का भी विकास हुआ है। जिसमें उभारदार शिल्पों का इतिहास अत्यंत प्राचीन रहा है। उभारदार शिल्प की अनेक शिल्पगत विशेषताएं देखने को मिलती है। उभारदार शिल्प का विकास निरंतर चलता रहा है। प्रागैतिहासिक काल से मध्यकाल तक अनेकों मंदिरों और कंदराओं का निर्माण हुआ, जिसमें अनेकों उभारदार शिल्पों के उदाहरण देखने को मिलते हैं। मध्यकाल से आधुनिक काल में भी अनेकों उभारदार शिल्पों का विकास हुआ है।

जैसे सिंधु घाटी, अजंता, एलोरा, एलिफेंटा आदि की गुफाओं में भी उभारदार शिल्पों के उदाहरण देखे जा सकते है। यहां से प्राप्त मूर्तियां, मनके, बर्तन, खिलौने आदि प्राप्त हुए हैं। अक्षरों को भी शिलाओं पर उकेरा जाता था। जो उस समय की संस्कृति को दर्शाते हैं।

मुख्य शब्दः– उभारदार, शिल्पगत, प्रागैतिहासिक, मध्यकाल और आधुनिक काल।

उभारदार शिल्प का परिचय

उभारदार का अर्थ– उकेरना, नक्काशी, उभरी हुई नकाशी, उभार, फूटा हुआ आदि शब्द प्रयोग किए जाते हैं।

शिल्प का अर्थ– हस्तकला, शिल्प कला, दस्तकारी, बनाना, रचना करना, पैदा करना आदि शब्द प्रयोग किए जाते हैं।

उभारदार शिल्प की परिभाषा– किसी व्यक्ति के हाथों व औजारों द्वारा बनाया गया शिल्प, जो उभरा हुआ या नक्काशी किया गया हो, चाहे वह किसी भी माध्यम में हो, जैसे– मिट्टी, परस्तर, लकड़ी आदि। उभारदार शिल्प के तीन प्रकार हैं। जो निम्न प्रकार से हैं।

1. लो रिलीफ।
2. मिडिल रिलीफ।
3. हाई रिलीफ।

1. लो रिलीफ– इस विधि में औजारों के द्वारा मिट्टी, परस्तर तथा लकड़ी आदि पर ड्राइंग करके हल्की–हल्की सी कार्विंग की जाती है, जिसे देखने वाले को लगेगा कि आकृतियां हल्की सी उभरी हुई है तथा हल्की सी परछाई नजर आ रही है, उसे लो रिलीफ कहते हैं।

2. मिडिल रिलीफ– इस विधि में मिट्टी, परस्तर व लकड़ी की पहले की तुलना में ज्यादा कार्विंग की जाती है, जिसे मिडिल रिलीफ कहते हैं।

3. हाई रिलीफ– इस विधि के द्वारा मिट्टी, परस्तर तथा लकड़ी आदि पर ड्राइंग करके अधिक गहराई से कार्विंग की जाती है। जो अर्द्ध–चित्रण की तरह दिखाई देती है, उसे हाई रिलीफ कहा जाता है।

उभारदार शिल्पों की परंपरा– उभारदार शिल्पों का प्रचलन सिंधु सभ्यता से ही चलन में रहा है। सिंधु सभ्यता से प्राप्त मर्दभांड, मनके और अन्य धातुओं पर उत्कीर्ण की गई आकृतियां इसका अद्भुत उदाहरण है। हड़प्पा सभ्यता में मनकों पर अनेकों आकृतियां तथा शिलाओं पर अक्षरों को भी उकेरा जाता था।

अगर हम मध्यकाल की बात करते हैं। तो इस कला का विकास अधिक नहीं हुआ। मुगल काल में शिल्प वास्तुकारों की अधिक प्रगति देखने को नहीं मिलती। परंतु गुप्त काल में ज्ञान, विज्ञान तथा साहित्य का अधिक विकास हुआ है। इस समय मंदिरों में शिलाओं के ऊपर इस कला का विकास देखने को मिलता है।

उभारदार शिल्प का उत्कृष्ट नमूना खजुराहों के मंदिरों, अजंता, एलोरा की गुफाओं की कलाकारी को देखने के लिए अत्यंत प्रसिद्ध है। लेकिन फिर भी इस कला को दक्षिण भारत के राजाओं की देन कहा जा सकता है।

आधुनिक काल में ब्रिटिश समय–ब्रिटिश काल में शिल्प कला का उतना विकास नहीं हो पाया था। जितना की मध्यकाल तथा गुप्त काल में हुआ। लेकिन स्वतंत्रता के बाद प्रत्येक राज्य की सरकारों ने ऐतिहासिक स्मारकों के पुनर्निर्माण के लिए ऐतिहासिक कदम उठाएगए। ऐसे ही कदम हरियाणा राज्य में हवेलियों, मंदिरों, मस्जिदों आदि कलात्मक इमारतों पर देखने को मिलते हैं।

हरियाणा एक हरा–भरा तथा खुशहाल प्रदेश रहा है। यहां का ग्रामीण जीवन लोगों के द्वारा किया गया कार्य परंपरा में परिवर्तित करके सुचारू रूप से एक दूसरे के साथ मिलकर कार्य को पूर्ण किया जाता है और इस मनोरंजन का हिस्सा बनकर आपसी भाई–चारे को भी बनाए रखा है। यह एक प्रकार से कला–कार्य कहलाता है। कला के विभिन्न आयाम है। ये कला के कार्य यहां की परंपरा से जुड़कर लोगों को आनन्द प्रदान करती है।

हम यहां हरियाणा में बने कलात्मक शिल्प का कर जिक्र कर रहे हैं। 'उभारदार शिल्प' की परंपरा के रूप में यहां की प्रमुख हवेलियों, मंदिरों, दरगाहों तथा कुओं पर बनी कलात्मक नक्काशी को बड़े सुंदर

ढंग से उकेरा गया है।

अंग्रेजों के शासनकाल में (सन 1803 में) यहां के भवनों की वास्तुकला में काफी परिवर्तन देखने को मिला है। यहां पर नए तरीके के भवन व इमारतें बनने लगी। अंग्रेजों ने सन् 1806 में करनाल शहर में अपनी छावनी डाली तथा इसके बाद यहां पर पहली वास्तुकला की इमारतों में 'अक्टर लोनी हाउस' तथा 'एडम हाउस' जैसी इमारतें बनवाई। जो यूरोपीय तथा भारतीय वास्तुकला का मिश्रण रहीं है। कुछ समय पश्चात् हरियाणा राज्य में 'रोहतक', 'हिसार', 'सिरसा', 'अंबाला' तथा 'गुड़गांव' शहरों में भी वास्तुकला से संबंधित इमारतें बनने लगी।[2]

समय के साथ–साथ इस क्षेत्र में धनी व साहूकार लोगों ने वास्तुकला तथा कलात्मक हवेलियों व इमारतें बनवानी शुरू कर दी। जिनमें राजस्थान तथा हरियाणवी वास्तुकला का मिश्रण देखने को मिलता है।

उभारदार शिल्प की परंपरा के रूप में बनी प्रमुख हवेलियों, मंदिरों, मस्जिदों, दरगाहों तथा कुओं पर बनी कलात्मक नक्काशी को बहुत ही सुंदर ढंग से उकेरा गया है।

कलात्मक हवेलियों व इमारतों को बनाने वाले कारीगरों ने इमारतों व उनके हिस्सों को बहुत ही सुंदर व आकर्षक ढंग से निर्मित करते समय विभिन्न सामग्री, जिसमें ईट, रोड़ी, सीमेंट, लोहा, लकड़ी, पत्थर, धातु, चुना आदि का आवश्यकता अनुसार प्रयोग किया है। इनके द्वारा हवेलियों, मंदिरों, मस्जिदों आदि इमारतों पर कलात्मक नक्काशी व सुंदरता दिखाई देती हैं।

कलात्मक हवेलियों व इमारतों के विभिन्न भागों पर की गई नक्काशी–

हवेलियों के मुख्यद्वार–हवेलियों के मुख्यद्वार पर विभिन्न प्रकार की नक्काशी की गई है। जिन पर श्री गणेश, शुभ–लाभ, ओम, स्वास्तिक, हनुमान जी आदि को कार्विंग के माध्यम से उकेरा गया है। हवेलियों के मुख्यद्वार को फूल–पत्तियां व पशु पक्षियों के अलंकरण डिजाइन से भी उकेरा गया है। जो देखने में बहुत ही सुसज्जित और आकर्षित दिखाई देते हैं।

मुख्यद्वार के कपाट–मुख्य द्वार के कपाट मुख्य रूप से लकड़ी व लोहे की पत्ती आदि से निर्मित है। इन कपाटों पर काष्ट शिल्प में प्राकृतिक, ज्यामितीय डिजाइन व शिल्प उकेरे गए हैं। जिनमें ओम, श्री कृष्णा, गणेश जी, मोर तथा पशु–पक्षियों के चित्र को काष्ट शिल्प कला के माध्यम से बहुत ही सुंदर ढंग से उकेरा गया है।

मुख्यद्वार की देहल–हवेली के मुख्यद्वार की देहल पर काष्ट से निर्मित नक्काशी का आकर्षक नमूना देखने को मिलता है। मुख्यद्वार को बंद करने के लिए घर के बाहर देहल पर एक कुंडी लगाई जाती है। यह कुंडी लोहे और काष्ट में निर्मित होती है। जिस पर फूल–पत्तियां व अन्य शिल्प उकेरे गए हैं। जो बहुत ही देखने योग्य हैं।

गवाक्ष तथा जालियां–हवेलियों के मुख्यद्वार के ऊपर छोटी–छोटी जालियां लगाई जाती हैं। इन जालियों को भरने के लिए जालियों में अलंकरण डिजाइन, ओम, स्वास्तिक, स्वागतम या कोई मूर्ति जैसे–श्री कृष्ण जी बांसुरी बजाते हुए, लक्ष्मी माता, शिव शंकर, देव, पशु–पक्षियों, फूल–पत्तियों आदि के शिल्प निर्मित है। अधिकतर मुख्यद्वार के ऊपर फूल–पत्तियों का आकार बना हुआ है। जो देखने में बहुत ही सुंदर लग रहे हैं। ये गवाक्ष पत्थर, चूने तथा पक्की ईंटो से निर्मित पाए गए है। मुख्यद्वारों में रंगीन कांच के आकार स्थापित किए जाते हैं। गवाक्षों पर प्राकृतिक ज्यामितीय डिजाइन की नक्काशी भी की जाती थी।

चौतरियां–चौतरियां हवेली के मुख्यद्वार के दोनों कोनों पर निर्मित होती है। जो बैठने के लिए काम में ली जाती है। इन चौतरियों पर विभिन्न प्रकार के शिलालेख व विभिन्न प्रकार के शिल्प उकेरे गए हैं। जिनमें फूल–पत्तियों के अलंकरण डिजाइन व पशु–पक्षी आदि निर्मित है।

तोरण द्वार–तोरण द्वार चौखट के साइड में लकड़ी या पत्थर से निर्मित होते हैं। जिन पर फूल–पत्तियों की बेल तथा विभिन्न डिजाइन की नक्काशी की जाती है।

टोडे–तोड़ो का प्रयोग छज्जो के नीचे मजबूती देने के लिए होता है। जोकि पत्थर से निर्मित होते हैं और विभिन्न पत्तियों से अलंकृत होते हैं।

स्तंभ–स्तंभ सिरदर के नीचे लगा होता है। जो छत व सिरदर को मजबूती प्रदान करता है। जिस पर प्राकृतिक व ज्यामितीय डिजाइन बना हुआ है।

शिलालेख–यह मुख्यद्वार के ऊपर या हवेली के बाहर निर्मित होते हैं। जिसमें घर के मुखिया का नाम, भवन निर्माण सन् व अपने इष्ट देवी–देवताओं आदि को उकेरा गया है। यह विभिन्न भाषाओं में अंकित है। जो उर्दू,फारसी, अंग्रेजी तथा हिंदी भाषा में पाए गए हैं।

हवेली का ताज–यह हवेली के सबसे ऊपरी हिस्से पर बना होता है। जिन पर मोर, बाज, फूलों का गुलदस्ता तथा पानी की टंकी के रूप में भी डिजाइन आदि पाए गए हैं। जो देखने में बहुत ही अद्भुत लगते हैं।[3]

निष्कर्ष– उपरोक्त तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं। कि उभारदार शिल्प का इतिहास बहुत ही प्राचीन रहा है। उभारदार का अर्थ–उकेरना, कार्विंग करना। उभारदार शिल्प को विभिन्न माध्यमों में, विभिन्न उपकरणों व तकनीकों के माध्यम से बहुत ही सुंदर और आकर्षक रूप दिया गया है। इसके उदाहरण हमें अनेकों– हवेलियों, मंदिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों, कलात्मक इमारतों आदि पर देखने को मिलता है। जिन पर की गई नक्काशी बहुत ही भव्य और मनमोहक

है। जो हमारे मन को छू जाती है।

सन्दर्भ सूची

1. https://www.hindi2dictionary.com
2. यादव, के. सी., हरियाणा ऐतिहासिक सिंहवलोकन मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, 2/10 अंसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली– 110002, शाखाएँ : बंबई, कलकत्ता, मद्रास, प्रथम संस्करण : 1981, पेज सं. 92
3. रस्तोगी, राशि, (TGT) प्रशिक्षित स्नातक शिक्षक चयन परीक्षा, चित्रकला नोटस, प्रकाशक : इलाहाबाद पब्लिशर्स, 1012/864, पुराना कंडेरा, इलाहाबाद– 211002

Address

Dr. Pawan

S/o Lt. Sh. Raj Singh

V.P.O. Bohar, Pana Melwan,

Near Ravidass Mandir,

District- Rohtak, Haryana (124021)

Ph.- 9728627038

7

शुष्क कटिबंधीय कृषि : समस्याएं एवं सम्भावनाएं

पूजा

सारांश

भारत के पश्चिमी क्षेत्र में शुष्क कृषि अर्थात वर्षा पर आधारित खेती की जाती है। यह शुष्क एवं अर्द्ध–शुष्क क्षेत्र है जहां औसतन वार्षिक वर्षा 75 सेंटीमीटर से भी कम ही होती है। उत्तर दिशा में ताप्ती नदी से लेकर दक्षिण दिशा में कन्याकुमारी तक पश्चिमी घाट फैला हुआ है। इसी के पश्चिम में अरब सागर की मानसुनी पवनें 70 सेटींमीटर से अधिक वर्षा करती है। पश्चिमी तटीय मैदानी क्षेत्र में यह शुष्क कृषि नहीं की जाती, लेकिन पश्चिमी घाट के पूर्व में वर्षा 70 सेटींमीटर से अधिक नहीं होती, यह क्षेत्र छायाक्षेत्र कहलाता है। अतः प्रायद्वीप पठार के वर्षा छायाक्षेत्र में शुष्क कृषि की जाती है। उत्तर दिशा में पंजाब से लेकर दक्षिण दिशा में तमिलनाडु तक शुष्क कृषि की जाती है, जम्मू–कश्मीर के उत्तर व पूर्वी भाग में भी शुष्क कृषि की जाती है। शुष्क कृषि क्षेत्रों में मुख्यतः जम्मू–कश्मीर का उत्तर व पूर्वी भाग, पंजाब, हरियाणा, दक्षिण–पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, पश्चिमी मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र के आन्तरिक भाग, कर्नाटक का पठारी भाग, आन्ध्र प्रदेश के रायसलीमा क्षेत्र, तेलंगाना और तमिलनाडु (तटीय क्षेत्र को छोड़कर) शामिल हैं। भारत के लगभग एक चौथाई कृषि क्षेत्र पर शुष्क कृषि की जाती है।

कुंजी शब्दः शुष्क, वर्षा, खेती, सिंचाई, आर्थिक, जल, राजस्थान, फसल आदि ।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध में यथासम्भव प्राथमिक तथा गौण दोनों स्त्रोतों का प्रयोग करते हुए उन बिन्दुओं का चयन किया गया है, जो भारत के शुष्क कटिबंधीय क्षेत्र की कृषि को प्रभावित करते हैं। प्राथमिक स्त्रोतों के रूप में लोकसभा डिबेट, सरकार द्वारा प्रकाशित नीतिगत पपत्र, सरकारी प्रकाशनों, संसद में दिए गए वक्तव्य व विदेश मंत्रालय की रिपोर्ट आदि का अध्ययन किया गया है। गौण स्त्रोतों के रूप में उपलब्ध प्रतिष्ठित विद्वानों की पुस्तकों, प्राप्त लेखों, शोत्र–पत्रों, जर्नलस, विशिष्ट पत्रिकाओं तथा समाचार पत्रों का, उपयोग किया है। इसके अतिरिक्त इन्टरनेट द्वारा भी विषय सामग्री प्राप्त की गई है।

शोध के उद्देश्य

1. शुष्क कृषि क्षेत्र के किसानों के सामने आने वाली समस्याओं का पता लगाना।
2. शुष्क कृषि की विधियों का पता लगाना।
3. भारत के खाद्यान और अर्थव्यवस्था में शुष्क कृषि के महत्व का पता लगाना।

भूमिका

भारतीय शुष्क कृषि मुख्यतः मानसून पर निर्भर करती है। मानसून की अनिश्चितता, मानसून अंतराल, वर्षा की परिवर्तिता और वर्षा के वितरण में प्रादेशिक असमानताओं का कृषि उत्पादन और उत्पादकता पर सीधा प्रभाव पड़ता है। इस मानसूनी निर्भरता के कारण भारतीय अर्थव्यवस्था को मानसून के साथ जुड़ा हुआ कहा जाता है। भारत की कृषि उत्पादकता अर्थात उत्पादन प्रति हेक्टेयर या प्रति व्यक्ति बहुत ही कम है। जोकि न केवल विकसित देशों की तुलना में कम है अपितु विश्व औसत तथा पड़ोसी देशों से भी कम है। फसलों के साथ पशु उत्पादों में भी उत्पादकता कम है। आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारणों से भारत में भू–जोतें छोटी तथा बिखरी हैं। यह आधुनिक कृषि हेतु उपयुक्त नहीं है।

भारतीय शुष्क कृषि

कृषकों एवं कृषि मजदूरों की गरीबी, बुनियादी सुविधाओं का अभाव जैसे बाजार एवं भण्डारण सुविधाओं की कमी, बिचौलियों के कारण कृषि उत्पादों का लाभकारी मूल्य प्राप्त न होना, उर्वरकों की कमी एवं अधिक मूल्य, नाशीजीव बीमारियों से भेद्यता, कृषि को सम्मानजनक व्यवसाय का दर्जा ना दिया जाना, सरकार द्वारा कृषि क्षेत्र की अवहेलना तथा किसानों द्वारा आत्महत्या के अलावा शुष्क क्षेत्र के किसानों के सामने ये परेशानियां भी है–

- **जीविका कृषि** :– शुष्क कृषि क्षेत्रों में मुख्य रूप से छोटे किसान ही रहते हैं जो अपना एवं अपने परिवार के भरण–पोषण के लिए ही कृषि उत्पादन करते हैं और मण्डी या बाजार में बिक्री करने के लिए ऐसे किसानों के पास कोई विशेष कृषि उपज नहीं बचती। जिसके परिणामस्वरूप इन किसानों की आर्थिक दशा अच्छी नहीं होती इसी कारण इन किसानों के पास आधुनिक कृषि यन्त्रों एवं तकनीक का भी अभाव रहता है। सूखे की स्थिती में छोटे व सीमान्त किसानों को भुखमरी और बेरोजगारी का सामना भी करना पड़ता है।
- **जलवायु** :– शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में ही शुष्क कृषि की जाती है। जिन क्षेत्रों में 70 प्रतिशत तक वार्षिक वर्षा होती है उन क्षेत्रों को उपार्द्र जलवायु क्षेत्र कहते हैं, इन क्षेत्रों में वर्षभर में से लगभग 8 महीने आर्द्रता की कमी रहती है। 25 से 50 सेंटीमीटर वर्षा वाले क्षेत्र अर्द्ध–शुष्क क्षेत्र कहलाते है जहां पर सारा साल आर्द्रता की कमी रहती है। राजस्थान के कुछ क्षेत्रों (बाड़मेर व जैसलमेर) में 20 सेंटीमीटर से भी कम वार्षिक वर्षा होती है और ये पुर्णतयाः शुष्क क्षेत्र है। वर्षा कम मात्रा में होने के साथ–ही–साथ परिवर्तनशील भी बहुत है और यहां पर वर्षा की परिवर्तनशीलता 20 से 60 प्रतिशत तक होती है। वर्षा केवल वर्षा ऋतु में 3–4 महीने ही होती है जिस कारण 8–9 महीने शुष्क ही बीतते हैं। मानसून के देरी से आने और निश्चित समय से पूर्व ही वापिस चले जाने से वर्षा की अनिश्चितता बढ़ जाती है। मानसून में विच्छेद हो जाने से वर्षा काल के दो आर्द्र चरणों में एक शुष्क चरण आ जाता है, जिससे फसलों को उचित मात्रा में जल प्राप्त नहीं होता और उपज कम हो जाती है इसके अतिरिक्त कभी–कभी सूखा पड़ने पर सारी फसल नष्ट हो जाती है। कई बार छोटे किसानों को सुखे के

कारण उदरपुर्ति हेतु अन्न भी अपने खेतों से प्राप्त नहीं हो पाता ।

• **उचित सिंचाई का अभाव** :– शुष्क कृषि होने वाले ज्यादातर प्रदेशों में उचित सिंचाई नहीं हो पाती और वहां की फसलें वर्षा पर ही निर्भर रहती है इसी कारण यह खेती या कृषि वर्षाधीन कृषि भी कहलाती है। फसलों के प्रतिरूप में परिवर्तन और फसलों की आवश्यकता को देखते हुए पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में नहरों तथा नलकूपों द्वारा की गई सिंचाई की व्यवस्था भी अपर्याप्त ही है। इसके अतिरिक्त राजस्थान के अधिकतर भागों में भूजल तो खारा है और कोई मुख्य या बड़ी नदी राजस्थान से होकर बहती नहीं। इस कारण राजस्थान में नहरों और नलकूपों के माध्यम से सिंचाई सम्भव नहीं है। इन्दिरा गान्धी नहर के निर्माण से पश्चिमी राजस्थान को सिंचाई में सुविधा होने लगी है, इसी के कारण ही इस क्षेत्र में कृषि उपज बढ़ी है और यहां के फसल चक्र और फसल प्रतिरूप में भी अन्तर आया है। दक्षिण भारत के अधिकतर क्षेत्रों में भूजल का अभाव है और भूमि सख्त है जिसके परिणामस्वरूप इन क्षेत्रों में तालाबों के माध्यम से कृषि की जाती है। शुष्क ऋतु में तालाब उस समय सूख जाते है जिस समय फसलों को जल की सबसे अधिक आवश्यकता होती है।

शुष्क कृषि का महत्व

शुष्क कृषि भारत के उन शुष्क एवं अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों में की जाती है जहां जल का अभाव, सिंचाई की कमी, उर्वरक, उन्नत किस्म के बीज, किसानों की कमजोर आर्थिक स्थिति, निवेशों की कमी जैसी अनेक समस्याएं किसानों के सामने आती रहती है।

भारत का लगभग 40 प्रतिशत खाद्यान्न शुष्क कृषि ही पैदा करती है। पिछले कुछ वर्षों में गेहूं और चावल जैसे मुख्य खाद्यान्नों को प्राथमिकता मिलने के कारण तिलहनों एवं दालों के उत्पादन में कमी आई है। शुष्क कृषि से देश की 85 प्रतिशत दालें प्राप्त होती हैं। भारत की अधिकांश जनसंख्या शाकाहारी होने के कारण उनके लिए दालें प्रोटीन का महत्वपूर्ण स्त्रोत है। देश का 95 प्रतिशत बाजरा और ज्वार, 80 प्रतिशत मक्का, 75 प्रतिशत तिलहन यहां पैदा होता है, जोकि भारत के खाद्यान्न और अर्थव्यवस्था में बड़ा महत्व रखता है।

शुष्क कटिबंधीय कृषि की विधियां :

1.वाष्पीकरण द्वारा आद्रता के ह्रास तथा पवन द्वारा मृदा के अपरदन को रोकने के लिए मिट्टी को तिनकों से ढक दिया जाता है।

2.फसल बोने से पहले मृदा को संपोषित किया जाता है। इस प्रक्रिया में मृदा को महीन कणों में परिवर्तित किया जाता है ताकि जल मृदा में आसानी से प्रवेश कर सके तथा पौधों की जड़ों को विकसित होने का पूरा अवसर मिल सके।

3.उर्वरकों एवं खादों के अभाव में निरंतर फसल बोने से भूमि की उपजाऊ शक्ति कम हो जाती है। इस समस्या को हल करने के लिए भूमि को परती छोड़ा जाता है।

4.मृदा में उपस्थिति आर्द्रता के संरक्षण के लिए खेत को बार–बार जोता जाता है। वर्षा ऋतु में तो यह प्रक्रिया अनिवार्य है।

5.पौधों की गोडाई तथा छंटाई नियमित रूप से की जाती है। गोडाई से मृदा में वायु प्रवेश करती है जिससे पौधों को फलने–फूलने का पूरा अवसर मिल जाता है। गोडाई का काम सूर्योदय से पहले किया जाता है ताकि रात की ओस मृदा में प्रवेश करके फसलों को आर्द्रता प्रदान कर सके। छंटाई से पौधों के अनचाहे भाग को काट दिया जाता है और उनके लाभकारी भाग को पनपने का पूरा अवसर मिलता है।

शुष्क कटिबंधीय कृषि की मुख्य समस्याएं :

1. अधिकांश क्षेत्रों की मृदा में ह्यूमस तथा अन्य पोषकों की कमी होती है और मृदा की उपजाऊ शक्ति कम होती है।

2. वर्षा की अनिश्चितता एवं अनियमितता के कारण प्रायः सूखा अथवा बाढ़ आते रहते हैं, जिससे कृषि उपज की भारी हानि होती है।

3. शुष्क कृषि वाले भागों में वर्षा अपर्याप्त, अनिश्चित, अनियमित तथा परिवर्तनशील होती है, जिससे किसानों को सदा ही मुश्किलों का सामना करना पड़ता है।

4. आधारभूत ढांचे, जैसे–सड़कें बाजार, भण्डारण आदि का उचित विकास न होने पर किसानों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

5. कुछ इलाकों में भूमि उपजाऊ है परंतु सिंचाई की उचित व्यवस्था न होने के कारण कृषि उत्पादन में वृद्धि करना मुश्किल है।

6. यहां वायु से मृदा अपरदन का खतरा सदा ही बना रहता है।

7. छोटे व सीमांत किसानों के पास कृषि निवेश के लिए अधिक पूंजी नहीं होती जिस कारण आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग कम होता है। परिणामस्वरूप कृषि उपज कम है।

शुष्क कटिबंधीय क्षेत्रों में कृषि हेतु सुधार की सम्भावनाएं :

1.जल संसाधनों का संरक्षण एवं उचित उपयोगः– वर्षाधीन कृषि में सबसे बड़ी समस्या फसलों को पर्याप्त जल उपलब्ध कराने की होती है। मृदा में उपस्थित नमी का संरक्षण गहरी तथा सतही जुताई द्वारा किया जाता है। गहरी जुताई मुख्यतः खरीफ फसलों के लिए लाभकारी होती है क्योंकि इस जुताई से मृदा संस्तर के नीचे की कठोर मिट्टी टूट जाती है और वर्षा का जल रिस कर मृदा संस्तर के आंतरिक भाग में चला जाता है। इसके अतिरिक्त गहरी जुताई से बीज बोने तथा खरपतवार को निकालने में भी आसानी होती है। सतही जुताई से रबी की फसल को लाभ प्राप्त होता है क्योंकि यह मृदा की नमी को संरक्षित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

उपरोक्त कृषि प्रक्रिया के अतिरिक्त वर्षा के जल संग्रहण की भी व्यवस्था होनी चाहिए। इसके लिए सरकारी एवं गैर–सरकारी संस्थानों का सहयोग अनिवार्य है।

2.वैकल्पिक भूमि उपयोग का नियोजनः किसान की आय को बढ़ाने तथा फसल नष्ट होने से हानि को कम करने के लिए निम्नलिखित उपाय सुझाए जाते हैंः–

कृ

I. कृषि वानिकी एवं फलीदार फसलों के साथ अंतर्फसलन।

II. सीमान्त एवं कृषि योग्य व्यर्थ भूमि में वन चरागाह तथा

सामाजिक वानिकी।

3.अनुसंधानः इस कृषि में विकास की बड़ी संभावनाएं हैं और उनका लाभ उठाने के लिए अधिक से अधिक अनुसंधान पर बल देना चाहिए।

4.फसल विविधीकरणः कुछ चयनित फसलों पर निर्भर न रह कर फसलों के विविधीकरण पर बल देना चाहिए। इससे जलवायु की अनियमितता तथा मृदा के निम्नीकरण की समस्या काफी हद तक हल हो सकती है। उदाहरणतया दलहन फसलों को अपनाया जा सकता है और खाद्यान्नों के साथ फलीदार फसलें उगाई जा सकती हैं। फ्लीदार पौधे वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर रखते हैं।

5.सूखा प्रतिरोधी फसलेंः इन शुष्क एवं अर्द्ध–शुष्क इलाकों में यथासम्भव सूखा प्रतिरोधी फसलें ही उगाई जानी चाहिए। इसके लिए किसानों को सूखा प्रतिरोधी बीज उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। अल्पावधि वाली फसलों को अपनाकर भी यह समस्या हल हो सकती है। सरकार ने मक्का, गेहूं, जौ, सरसों, बाजरा, चना, सोरघम, उड़द, सोयाबीन, अरहर मूंग आदि फसलों के उन्नत बीजों का विकास करने की व्यवस्था की है।

6.फसलों का क्षेत्रीय वितरणः अधिक जल से पैदा होने वाली फसलों को निम्न क्षेत्र, विशेषतया अपवाह क्षेत्र के निम्न भाग में बोना चाहिए। कपास को अधिक जल अथवा फुहार सिंचाई (Sprinkle irrigation) वाले इलाकों में बोना चाहिए।

7.खरपतवार पर नियंत्रणः कृषि के न्यायोचित विकास के लिए खरपतवार को नियंत्रित करना आवश्यक है क्योंकि इससे मृदा की नमी कम हो जाती है और पौधों को उचित आहार नहीं मिलता। गैर–मौसमी जुताई, समुचित बीज संस्तर निर्माण, समयबद्ध बुआई तथा खरपतवार नाशकों की सहायता से खरपतवार पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

8.खाद का प्रयोगः वर्षाधीन कृषि क्षेत्र के किसानों की आर्थिक दशा इतनी अच्छी नहीं होती कि वे महंगे उर्वरक खरीद सकें। अतः भूमि की उपजाऊ शक्ति को बनाए रखने के लिए गोबर अथवा वनस्पतिक खाद का प्रयोग करना चाहिए। इससे पर्यावरण प्रदूषण भी नहीं होगा और मृदा की उपजाऊ शक्ति भी बनी रहेगी।

9.मृदा अपरदन पर नियंत्रणः शुष्क एवं अर्द्ध–शुष्क इलाकों में वायु द्वारा मृदा अपरदन एक गंभीर समस्या है। इसे नियंत्रित करने के लिए कई उपाय सुझाए जा सकते हैं जिनमें पौध अवरोधों का निर्माण, रेत के टीलों का स्थिरीकरण, समोच्च रेखीय जुताई आदि प्रमुख हैं।

निष्कर्ष

भारतीय कृषि के योजनागत विकास के बावजूद भी 85 मिलियन हेक्टेयर (60 प्रतिशत) कृषि क्षेत्र असिंचित है और भारत की अर्थव्यवस्था काफी हद तक मानसून पर निर्भर करती है। देश के 13 राज्यों के 100 जिलों को सूखा संभावित या शुष्क व अर्द्ध– शुष्क क्षेत्र चिन्हित किया गया है जहाँ पर कुल वर्षा वाष्पोत्सर्जन से भी कम होती है। देश के इतने बड़े भू–भाग के सूखाग्रस्त होने के कारण ही संसाधन होने के बावजूद भी देश को दलहनों व खाद्य तेलों की पूर्ति हेतु आयात करना पड़ता है। शुष्क व अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों में यदि उन्नत सस्य तकनीकें अपनाई जाएं, वर्षा के जल का संरक्षण व संचय किया जाए, फसल प्रबन्धन की समन्वित प्रौद्योगिकी अपनाई जाए तथा सूखे से फसलों के बचाव के लिए समय पर ठोस कदम उठाए जाएं, तो शुष्क क्षेत्रों की उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि की जा सकती है। इसके अतिरिक्त सुनियोजित तरीके से सूखा व अकाल प्रबंधन एवं नमी संरक्षण तथा उपलब्ध मृदा नमी का सही उपयोग करके न केवल शुष्क क्षेत्रों का टिकाऊ विकास, खाद्य व पोषण सुरक्षा के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है बल्कि कृषि आय वृद्धि व रोजगार सृजन करके शुष्क व अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों का चहुंमुखी विकास किया जा सकता है।

सन्दर्भ सूची

1. Tharke, Dr. Ramesh B. (2017), Indian Agriculture Yesterday, Today, and Tomorrow, Mumbai: Storymirror Info Tech Ltd.
2. Harisha, Dr. B. N. (2018), Indian Agriculture Current & Scenario, New Delhi: Educreation Publishing.
3. Sunda, Dr. Nem Raj (2021), Basic Agriculture, Jaipur: Surahee Publications.
4. Ojha, T.P. (2016), Agricultural Engineering (Vol-1), New Delhi: Jain Brother Publications.
5. तिवारी, आर.सी., बी. एन. सिंह (2023), कृषि भूगोल, इलाहाबाद : प्रवालिका प्रकाशन।
6. सक्सेना, डॉ. हरि मोहन (2022), राजस्थान का भूगोल, जयपुर : दी कपूर प्रेस।
7. जैन, डॉ हुक्म चन्द, डॉ नारायण लाल माली (2022), राजस्थान का इतिहास : संस्कृति, परम्परा एवं विरासत, जयपुर : रेनबो आफसेट प्रिंटर्स।
8. The Tribune, 02 January, 2024-
9. https://pib.gov.in

पूजा
(M.Sc. NET in Geography)
गांव – सुलखनी
तहसील व जिला– हिसार
(हरियाणा)
पिन कोड – 125121
फोन नं0– 7027890008
ई–मेलः rao771265@gmail.com

8

भारत में आपदा प्रबंधन : केन्द्र एवं राज्य सरकारों की भूमिका

डॉ0 प्रवीन कुमार

सारांश

भारत क्षेत्रफल में विश्व का सातवां सबसे बड़ा देश और सबसे अधिक जनसंख्या वाला लोकतंत्र है। दक्षिण में हिंद महासागर, दक्षिण–पश्चिम में अरब सागर और दक्षिण–पूर्व में बंगाल की खाड़ी से घिरे हुए भारत की भू–सीमा एशिया क्षेत्र के छः देशों से और समुद्री सीमा चार देशों से मिलती है। अलग–अलग कृषिगत जलवायु और जलीय मौसम विज्ञानी जैव मंडल के साथ–साथ पर्वतों और समतल भूमि की विविधता के फलस्वरूप भारत बड़े पैमाने पर आपदाओं के प्रति प्राकृतिक रूप से संवेदनशील है। सामान्य रूप से अनुभव की जाने वाली प्राकृतिक आपदाओं में बाढ़, चक्रवात, सूखा, भूकम्प, बादल फटना, लू चलना, भू–स्खलन, मृदा–स्खलन और हिम–स्खलन, दावानल, समुद्री तट कटाव, जल भराव, सुनामी और बिजली गिरना आदि शामिल हैं। इसके अलावा, विश्व में किसी अन्य देश की तरह भारत भी रासायनिक, जैविक, रेडियोएक्टिव और आणविक (सीबीआरएन) आपात स्थितियों जैसी नई और उभरती हुई आपदाओं के प्रति संवेदनशील है। मानवजनित आपदाओं में आतंकवाद और भगदड़ भी नई आपदाएं हैं।

कुंजी शब्द : सुरक्षा, प्रबंधन, जोखिम, आपातकाल, आपदा, भूकंप, योजना, राष्ट्रीय आदि।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध में यथासम्भव प्राथनिक तथा गौण दोनों स्त्रोतों का प्रयोग करते हुए उन बिन्दुओं का चयन किया गया है, जो भारत में किसी भी प्राकृतिक या मानवजनित आपदा के समय जान एवं माल के बचाव हेतु उत्तरदायी है। प्राथमिक स्त्रोतों के रूप में लोकसभा डिबेट, सरकार द्वारा प्रकाशित नीतिगत पपत्र, सरकारी प्रकाशनों, संसद में दिए गए वक्तव्य व विदेश मंत्रालय की रिपोर्ट आदि का अध्ययन किया गया है। गौण स्त्रोतों के रूप में उपलब्ध प्रतिष्ठित विद्वानों की पुस्तकों, प्राप्त लेखों, शोत्र–पत्रों, जर्नलस, विशिष्ट पत्रिकाओं तथा समाचार पत्रों का, उपयोग किया है। इसके अतिरिक्त इन्टरनेट द्वारा भी विषय सामग्री प्राप्त की गई है।

शोध के उद्देश्य

1. आपदा से बचाव में केन्द्र और राज्य सरकारों की भूमिका का पता लगाना।
2. भारत में आपदा प्रबंधन के संस्थागत तंत्र की कार्यप्रणाली का पता लगाना।

भूमिका

प्रकृति की विभिन्न अभिव्यक्तियाँ हैं, सौम्य भी और आक्रामक भी। हम देखते हैं कि कभी–कभी यह बहुत शांत होता है जबकि कभी–कभी यह उग्र हो जाता है। बेशक, शांत पक्ष हर किसी को पसंद होता है लेकिन जब क्रूर पक्ष दिखाया जाता है, तो तबाही होती है। जब भी कोई विपत्तिपूर्ण स्थिति उत्पन्न होती है जो जीवन और पारिस्थितिकी तंत्र को परेशान कर सकती है, तो हमें जीवन को बचाने और संरक्षित करने के लिए आपातकालीन उपायों की आवश्यकता होती है। चूँकि प्राकृतिक आपदाओं का पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता, वे कहीं भी, किसी भी समय घटित हो सकती हैं।ये घटित होने वाली सबसे खतरनाक आपदाएं हैं जो जीवन की हानि और पृथ्वी को क्षति पहुंचाती है।इसके अलावा अनेक मानव निर्मित आपदाएँ हैं। वे तकनीकी खतरों या मनुष्य की लापरवाही का परिणाम हैं। कुछ मानव निर्मित आपदाओं में आग, परमाणु विस्फोट या विकिरण, तेल रिसाव, परिवहन दुर्घटनाएँ, आतंकवादी हमले और बहुत कुछ शामिल हैं। इस प्रकार की आपदाओं में प्रकृति की बहुत कम या कोई भूमिका नहीं होती है।

भारत में आपदा प्रबंधन

भारत में आपदा का जोखिम जनसांख्यिकीय परिवर्तन और सामाजिक–आर्थिक स्थितियों, उच्च जोखिम वाले क्षेत्रों में मानव बस्ती सहित तेजी से शहरीकरण, पर्यावरण क्षति, जलवायु परिवर्तन, मानव प्रवासन और पशु व्यापार के कारण उत्पन्न महामारी और वैश्विक महामारी इत्यादि के परिणामस्वरूप बढ़ जाता है। आपदाएं भारत की अर्थव्यवस्था, जनसंख्या और सतत् विकास के राष्ट्रीय प्रयासों पर प्रभाव डालती हैं।

आपदा प्रबंधन संबंधी राष्ट्रीय नीति, 2009 के अनुसार आपदा के समय बचाव, राहत और पुनर्वास उपाय करने की प्राथमिक जिम्मेदारी संबंधित राज्य सरकारों की होती है। केन्द्र सरकार, गंभीर प्राकृतिक आपदाओं की दशा में लॉजिस्टिक और वित्तीय सहायता प्रदान करके राज्य सरकारों के प्रयासों में मदद करती है। सरकार ने आपदा प्रबंधन के प्रति दृष्टिकोण में आदर्शवादी परिवर्तन लाकर राहत–केन्द्रित दृष्टिकोण के बजाय समग्र और एकीकृत दृष्टिकोण अपनाया है, जिसमें आपदा प्रबंधन के पूरे परिवेश, रोकथाम, प्रशमन, तैयारी, कार्रवाई, राहत, पुनर्निर्माण और पुनर्वास को सम्मिलित किया गया है।

आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005

भारत सरकार ने आपदाओं और उससे संबंधित अथवा तत्संबंधी मामलों के प्रभावी प्रबंधन के लिए प्रावधान करने हेतु आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 अधिनियमित किया था। इसमें आपदा प्रबंधन

की योजनाओं की तैयारी और कार्यान्वयन के लिए राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तर पर संस्थागत तंत्र निर्धारित किया गया है जिससे आपदाओं के प्रभाव को रोकने और उन्हें कम करने तथा आपदा की किसी भी परिस्थिति में तत्काल कार्रवाई करने के संबंध में सरकार के विभिन्न विंगों द्वारा उपाय किया जाना सुनिश्चित होता है।

गृह मंत्रालय द्वारा बचाव और राहत अभियान का समन्वय : राष्ट्रीय आपदाओं (सूखा, ओलावृष्टि और कीट हमला, जिसकी देखरेख कृषि और परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा की जाती है, को छोड़कर) के प्रबंधन के लिए भारत सरकार की ओर से गृह मंत्रालय एक नोडल मंत्रालय है। गृह मंत्रालय में आपदा प्रबंधन प्रभाग यह कार्य करता है। **भारत ने अपने सतत् प्रयासो से प्राकतिक** आपदाओं से निपटने के संबंध में अपनी तैयारी में अत्यधिक सुधार किया है। हमारे आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 में विकास आयोजन के अंतर्गत आपदा जोखिम न्यूनीकरण (डीआरआर) की योजनाओं को शामिल करने की आवश्यकता का प्रावधान है। आपदा प्रबंधन संबंधी राष्ट्रीय नीति और राष्ट्रीय योजना में एक सुरक्षित और आपदा–रोधी भारत का निर्माण करने की कोशिश की गई है। केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा किए गए उपायों से आपदा प्रबंधन पद्धतियों, तैयारी, निवारण और कार्यवाही तंत्र में काफी सुधार हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप देश में चक्रवातों सहित प्राकृतिक आपदाओं के दौरान होने वाली मौतों में भारी कमी हुई है।

राष्ट्रीय आपदा मोचन निधि : आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 की धारा 46(1) में किसी चुनौतीपूर्ण आपदा प्रबंधन की स्थिति अथवा आपदा से निपटने के लिए राष्ट्रीय आपदा मोचन निधि के गठन का प्रावधान है। तदनुसार, गृह मंत्रालय ने दिनांक 28.09.2010 को राष्ट्रीय आपदा मोचन निधि के गठन के लिए अधिसूचना जारी की थी।

अतिरिक्त वित्तीय सहायता : राष्ट्रीय आपदा मोचन निधि के प्रावधानों के अतिरिक्त, गंभीर प्राकृतिक आपदाओं के मद्देनजर राष्ट्रीय आपदा मोचन निधि से निधियां प्रदान की जाती हैं। प्रभावित राज्य से ज्ञापन प्राप्त होने पर, एक अंतर–मंत्रालयी केंद्रीय टीम, जिसमें केंद्रीय मंत्रालयों व विभागों के प्रतिनिधि शामिल होते हैं, गठित की जाती है। इस टीम की रिपोर्ट की जांच राष्ट्रीय कार्यकारी समिति की उप समिति द्वारा की जाती है। उप समिति की सिफारिशों को उच्च स्तरीय समिति के समक्ष उनके विचार हेतु और राष्ट्रीय आपदा मोचन निधि से निधियों के अनुमोदन हेतु रखा जाता है।

सरकार ने गंभीर प्रकृति की किसी प्राकृतिक आपदा के परिणामस्वरूप और राज्य सरकार से ज्ञापन की प्राप्ति से पहले ही अंतर–मंत्रालयी केंद्रीय टीम (आईएमसीटी) के शीघ्र गठन के लिए दिनांक 19.08.2019 को एक महत्वपूर्ण निर्णय लिया है, जो राज्यों के प्रभावित क्षेत्रों का दौरा करेगी, ताकि हुई क्षतियों और राज्य प्रशासन द्वारा चलाए गए राहत कार्य का प्रत्यक्ष आकलन किया जा सके। इससे पहले, आईएमसीटी ज्ञापन की प्राप्ति के पश्चात प्रभावित राज्य का दौरा करती थी।

संस्थागत तंत्र

1. राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (एनडीएमए) : आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 के उद्देश्य हेतु स्थापित राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण के अध्यक्ष माननीय प्रधानमंत्री हैं। इसमें नौ सदस्यों तक का प्रावधान है, जिनमें से एक को उपाध्यक्ष के रूप में पदनामित किया जा सकता है। वर्तमान में, राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण में चार सदस्य – श्री कमल किशोर, ले. जनरल (रि.) सध्यद अता हसनैन, श्री राजेन्द्र सिंह, श्री कृष्ण एस. वत्स शामिल हैं।

एनडीएमए राष्ट्रीय स्तर पर, आपदा प्रबंधन पर नीतियां निर्धारित करने और भारत सरकार के विभिन्न विभागों को उनकी अपनी योजनाओं तथा परियोजनाओं में आपदा प्रबंधन को समेकित करने के लिए उन्हें दिशानिर्देश जारी करने सहित अनेक कार्य करता है। यह उन दिशानिर्देशों को भी निर्धारित करता है जिनका अनुपालन राज्यों द्वारा अपनी राज्य आपदा प्रबंधन योजनाएं तैयार करने, योजना तैयारियों, आपदा न्यूनीकरण उपाय करने और क्षमता वृद्धि हेतु पहल करने के लिए किया जाना है।

राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन योजना (एनडीएमपी) : राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन योजना भारत के माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा दिनांक 01.06.2016 को जारी की गई थी। एनडीएमपी में आपदा प्रबंधन के सभी चरण शामिल हैं : निवारण, न्यूनीकरण, कार्रवाई और रिकवरी। यह आपदा जोखिम न्यूनीकरण हेतु सेन्दई फ्रेमवर्क (एसएफडीआरआर) से सम्बद्ध है।

2. राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान : आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 के अंतर्गत दिनांक 30.10.2006 को स्थापित राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान (एनआईडीएम) को आपदा प्रबंधन के क्षेत्र में मानव संसाधन विकास, प्रशिक्षण एवं शिक्षा सहित क्षमता संवर्धन, अनुसंधान, प्रलेखन और नीति नियोजन की नोडल जिम्मेदारी सौंपी गई है। दिनांक 16.10.2003 को भारतीय लोक प्रशासन संस्थान के राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन केन्द्र से अपग्रेड होकर, राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान (एनआईडीएम) सभी स्तरों पर निवारण और तैयारी की कार्यनीति को विकसित और प्रोत्साहित करके आपदा प्रतिरोधी भारत का निर्माण करने तथा एक उत्कृष्ट केन्द्र के रूप में उभरने के अपने मिशन को पूरा करने की ओर तेजी से अग्रसर है।

3. राष्ट्रीय आपदा मोचन बल (एनडीआरएफ) : आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 के प्रावधानों के अनुपालन में गृह मंत्रालय ने

आपदाओं अथवा आपदा जैसी स्थितियों के प्रति विशेष कारवाई के उद्देश्य से राष्ट्रीय आपदा मोचन बल का गठन किया है। एनडीआरएफ को वर्ष 2006 में शुरू में 08 बटालियनों के साथ गठित किया गया था जिन्हें संवेदनशीलता के प्रोफाइल के आधार पर देश के भिन्न–भिन्न भागों में तैनात किया गया था। अब एनडीआरएफ में 16 बटालियनें हैं जिनमें प्रत्येक में 1,149 कार्मिक हैं। यह बल, रासायनिक, जैविक, रेडियो–धर्मी, आणविक (सीबीआरएन) आपदाओं सहित सभी प्रकार की प्राकृतिक और मानव–जनित आपदाओं से निपटने के लिए अपने आप में सक्षम, बहु–कौशलयुक्त, उच्च तकनीक से परिपूर्ण एकमात्र बल के रूप में उभरा है। एनडीआरएफ की टीमों को आपदाओं के मामले में कारवाई के समय को कम करने के लिए 23 भिन्न–भिन्न रणनीतिक स्थानों में तैनात किया गया है।

4. नागरिक सुरक्षा : नागरिक सुरक्षा के अंतर्गत भारत या इसके किसी भू–भाग के किसी भी क्षेत्र में किसी व्यक्ति, सम्पत्ति, स्थान अथवा वस्तु पर किसी हवाई, भूमि, समुद्री अथवा अन्य स्थानों से होने वाले किसी शत्रु के हमले से सुरक्षा प्रदान करने अथवा ऐसे किसी हमले को रोकने या उसके प्रभाव को कम करने के लिए किए जाने वाले वे उपाय शामिल हैं, जो वास्तव में युद्ध नहीं है, भले ही ये उपाय ऐसे हमले के पूर्व, उसके दौरान अथवा उसके बाद किए जाएं। इसमें आपदा प्रबंधन हेतु किए गए उपाय भी शामिल हैं। कुछ वेतन भोगी स्टाफ और संस्थापना, जिसमें आपातस्थिति में वृद्धि की जाती है, को छोड़कर, नागरिक सुरक्षा का आयोजन बुनियादी तौर पर स्वैच्छिक आधार पर किया जाता है।

नागरिक सुरक्षा महानिदेशालय (डीजीसीडी)

नागरिक सुरक्षा महानिदेशालय की स्थापना तत्कालीन राष्ट्रीय नागरिक सुरक्षा कॉलेज और राष्ट्रीय अग्निशमन सेवा कॉलेज, नागपुर के कार्यों सहित नागरिक सुरक्षा, होमगार्ड और अग्निशमन सेवाओं से संबंधित सभी नीतिगत और योजनागत मामलों को देखने के लिए गृह मंत्रालय में 1962 में की गई थी और इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है। महानिदेशक नागरिक सुरक्षा का पदनाम बदलकर अब महानिदेशक (अग्निशमन, नागरिक सुरक्षा और होमगार्ड) (डीजी – एफएस, सीडी एंड एचजी) कर दिया गया है। राष्ट्रीय सुरक्षा कॉलेज, नागपुर का राष्ट्रीय आपदा मोचन बल, अकादमी में विलय कर दिया गया, जो इस समय राष्ट्रीय आपदा मोचन बल (एनडीआरएफ) के नियंत्रण में कार्य कर रहा है।

होमगार्ड : 'होमगार्ड' एक स्वैच्छिक बल है, जिसकी स्थापना दिसम्बर, 1946 में नागरिक अशांति एवं साम्प्रदायिक दंगों को नियंत्रित करने में पुलिस की सहायता करने के लिए की गई थी। बाद में, कई राज्यों द्वारा स्वैच्छिक नागरिक बल की अवधारणा को अपना लिया गया था। वर्ष 1962 में चीन के आक्रमण के परिणामस्वरूप, केन्द्र ने राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों को अपने मौजूदा स्वैच्छिक संगठनों का होमगार्ड के रूप में विदित एक वर्दीधारी स्वैच्छिक बल में विलय करने का सुझाव दिया था। कानून एवं व्यवस्था और आन्तरिक सुरक्षा को बनाए रखने, किसी भी प्रकार की आपात स्थिति जैसे कि हवाई हमला, आग लगना, चक्रवात, भूकंप, महामारी आदि में समुदाय की सहायता करने, जरूरी सेवाएं बनाए रखने, सांप्रदायिक सौहार्द को बढ़ावा देने तथा कमजोर वर्गों की सुरक्षा करने में प्रशासन की सहायता करने, सामाजिक–आर्थिक एवं कल्याणकारी गतिविधियों में हिस्सा लेने तथा नागरिक सुरक्षा कार्यों के निर्वहन में पुलिस के सहयोगी बल के रूप में कार्य करना होमगार्डों की भूमिका है। होमगार्ड दो प्रकार के हैं– ग्रामीण और शहरी । सीमावर्ती राज्यों में, सीमा विंग होमगार्ड (बीडब्ल्यूएचजी) की बटालियनें भी गठित की गई हैं, जो सीमा सुरक्षा बल (बीएसएफ) के सहायक के तौर पर कार्य करती हैं।

5. अग्निशमन सेवा : अग्निशमन सेवाओं का संचालन राज्यों द्वारा किया जाता है। गृह मंत्रालय, राज्यों, संघ राज्य क्षेत्रों और केन्द्रीय मंत्रालयों को आग से बचाव, आग पर नियंत्रण, अग्निशमन विधायन एवं प्रशिक्षण के बारे में तकनीकी परामर्श देता है। भारत के संविधान की XIIवीं अनुसूची में अनुच्छेद 243 (डब्ल्यू) के अंतर्गत अग्निशमन एक नगरपालिका संबंधी कार्य है जिसमें नगरपालिका को अग्निशमन सुरक्षा के संबंध में योजनाएं तैयार करने की शक्ति प्रदान की गई है। अग्निजन्य दुर्घटना से जान और माल की सुरक्षा सुनिश्चित करने की प्राथमिक जिम्मेदारी राज्यों की होती है।

समय के साथ–साथ अग्निशमन सेवाओं की भूमिका में परिवर्तन आया है। अग्निशमन स्थायी परामर्शी परिषद (एसएफएसी) ने अपनी 22वीं बैठक में एक उप समिति आग रोकथाम और विधान समिति गठित की थी। अगस्त, 2005 में आयोजित अग्निशमन स्थायी परामर्शी परिषद (एसएफएसी) की 31वीं बैठक के दौरान, आदर्श अग्निशमन बल विधेयक को अपडेट करने की नितांत आवश्यकता पर प्रकाश डाला गया था ताकि बहु–जोखिम कार्रवाई यूनिट के रूप में आपदा प्रबंधन में इसकी भूमिका समेत अग्निशमन सेवाओं से संबंधित सभी मुद्दों का निराकरण किया जा सके और राज्य अग्निशमन सेवा अधिनियम में भारत की राष्ट्रीय भवन संहिता का प्रावधान किया जा सके।

राष्ट्रीय अग्निशमन सेवा कॉलेज (एनएफएससी) : अग्निशमन सेवा के अधिकारियों को राष्ट्रीय अग्निशमन सेवा कॉलेज, नागपुर में प्रशिक्षित किया जाता है। इस कॉलेज के अग्निशमन इंजीनियरों को आग की रोकथाम और आग से सुरक्षा के कार्य हेतु भारत और विदेश में रखा जाता है। यह कॉलेज आपदा प्रबंधन के लिए अग्निशमन ग्राउंड अभियानों, पराचिकित्सीय और वास्तविक जीवन

स्थितियों पर भी प्रशिक्षण उपलब्ध कराता है।

आपदा प्रबंधन परियोजनाएं :

1. **राष्ट्रीय चक्रवात जोखिम उपशमन परियोजना (एनसीआरएमपी)**

   भारत सरकार ने चक्रवात के खतरे की संभावना वाले राज्यों में चक्रवातों के प्रभावों को कम करने और तटीय पारिस्थितिक तंत्र के संरक्षण के अनुरूप लोगों और अवसंरचना को आपदा–रोधी बनाने के समग्र उद्देश्य से राष्ट्रीय चक्रवात जोखिम उपशमन परियोजना (एनसीआरएमपी) का अनुमोदन किया था।

   अग्निशमन सेवा, होमगार्ड और सिविल डिफेंस हेतु पदक : अग्निशमन सेवाओं, सिविल डिफेंस और होम गार्ड कार्मिकों के असाधारण योगदान को प्रोत्साहित करने के लिए, भारत सरकार वर्ष में दो बार अर्थात गणतंत्र दिवस तथा स्वतंत्रता दिवस पर वीरता और सेवा पदक प्रदान करती है।

2. **राष्ट्रीय आपातकालीन संचार योजना (चरण–।।)** : ओडिशा में वर्ष 1999 में आए भंयकर चक्रवात तथा गुजरात में 2001 में आए भूकंप से बड़े पैमाने पर हुई तबाही से यह पाया गया था कि दूर संचार व्यवस्था खराब हो जाने के परिणामस्वरूप प्रभावी कारवाई करने के लिए राष्ट्रीय और राज्य संसाधनों को जुटाने में समय की बर्बादी हुई थी। तदनुसार, विभिन्न स्तरों के निर्णयकर्ताओं और आपदा स्थल पर तैनात कारवाई दल के बीच विश्वसनीय संचार संपर्कों को स्थापित करने के लिए राष्ट्रीय आपातकाल संचार योजना (एनईसीपी) तैयार की गई थी।

3. **अन्य आपदा प्रबंधन कार्यक्रम (ओडीएमपी)**

   - **राष्ट्रीय स्कूल सुरक्षा कार्यक्रम** : राज्य/संघ राज्य क्षेत्र सरकारों के साथ साझेदारी में एनडीएमए द्वारा 48.47 करोड़ रु. के कुल बजटीय परिव्यय के साथ राष्ट्रीय स्कूल सुरक्षा कार्यक्रम, जो भारत सरकार की एक केंद्र प्रायोजित निदर्शन परियोजना है, का कार्यान्वयन किया गया था। आपदा संबंधी तैयारी और सुरक्षा उपायों के बारे में बच्चों और स्कूल समुदाय को अवगत कराने के लक्ष्य के साथ इस परियोजना में भूकंप जोन IV एवं V में आने वाले देश के 22 राज्यों के 43 चयनित जिलों में प्रत्येक जिले के 200 स्कूल (कुल 8600 स्कूल) शामिल हैं।
   - **आपदा मित्रा योजना** : एनडीएमए ने मई, 2016 में 15.47 करोड़ रु. की कुल लागत से एक केंद्रीय सेक्टर की योजना को अनुमोदन प्रदान किया, जिसका उद्देश्य भारत के 25 राज्यों के 30 सर्वाधिक बाढ़ संभावित जिलों में आपदा कारवाई हेतु 6,000 समुदायिक स्वयंसेवकों (200 स्वयंसेवक प्रति जिला) को प्रशिक्षित करना था।
   - **सुभाष चंद्र आपदा प्रबंधन पुरस्कार** : सरकार ने सुभाष चंद्र बोस आपदा प्रबंधन पुरस्कार नामक एक वार्षिक पुरस्कार शुरू किया है। इस पुरस्कार की घोषणा प्रति वर्ष नेताजी सुभाष चंद्र बोस के जन्म दिवस पर 23 जनवरी को की जाती है।
   - **आपदा जोखिम में सतत कमी की परियोजना** : एनडीएमए पांच राज्यों अर्थात असम, बिहार, पूर्ववर्ती जम्मू और कश्मीर, लद्दाख, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड की सहभागिता से 607.40 लाख रु. की कुल लागत से जून, 2016 से आपदा जोखिम में सतत् कमी संबंधी परियोजना कार्यान्वित कर रहा है, जिसका लक्ष्य इन 5 निर्धारित राज्यों के 10 बहु–जोखिम संभावित जिलों में समुदाय और स्थानीय स्व–शासन की तैयारी को सुदृढ़ बनाना है।
   - **भूस्खलन जोखिम उपशमन स्कीम** : एनडीएमए ने भूस्खलन संभावित राज्यों में स्थान विशिष्ट भूस्खलन उपशमन के लिए एसडीएमए/डीडीएमए के आपदा जोखिम प्रशासन में सुधार के अंतर्गत ''भूस्खलन जोखिम उपशमन स्कीम'' (एलआरएमएस) शुरू की है। यह भूस्खलन निगरानी, जागरूकता पैदा करने, क्षमता निर्माण प्रशिक्षण आदि के साथ–साथ भूस्खलन उपशमन उपायों के लाभों को बताने के लिए एक पायलट स्कीम है।
   - **इंजीनियरिंग कॉलेजों में भूकंप इंजीनियरिंग संकायों की संसाधन मैपिंग** : भूकंप इंजीनियरिंग के संसाधनों का मानचित्र मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान (एमएनआईटी), जयपुर के माध्यम से तैयार किया गया। एनडीएमए और एमएनआईटी जयपुर के बीच समझौता ज्ञापन पर दिनांक 18.10.2019 को हस्ताक्षर किए गए थे।
   - **जीआईएस सर्वर की स्थापना और जिओ डाटाबेस का निर्माण** : इस परियोजना का लक्ष्य बड़े पैमाने पर लोगों की सुरक्षा हेतु जोखिम न्यूनीकरण के उपायों के संबंध में निर्णायकों को निर्णय लेने में सहायता करने के लिए एक मानकीकृत स्थानिक डाटाबेस, डाटा लेयर, मानचित्र और वेब आधारित जीआईएस समाधानों का विकास करना था।
   - **मोबाइल रेडिएशन डिटेक्शन सिस्टम** : राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (एनडीएमए) ने रेडियोलॉजिकल आपात स्थिति की निगरानी और प्रबंधन के बारे में एक

परियोजना मोबाइल रेडिएशन डिटेक्शन सिस्टम (एमआरडीएस) शुरू की है। इस परियोजना के अंतर्गत पुलिस कार्मिकों को रेडिएशन मापने वाले उपकरणों, रेडिएशन सुरक्षा किट और रेडिएशन का पता लगाने वाले उपकरण लगे हुए वाहन प्रदान किए जाते हैं। सार्वजनिक क्षेत्रों में किसी रेडियोलॉजिकल आपात स्थिति की प्रभावशाली निगरानी और प्रबंधन के लिए पुलिस कर्मियों को प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है।

- **बाढ़ जोखिम मानचित्र तैयार करना** : एनडीएमए द्वारा गठित विशेषज्ञ समूह के मार्गदर्शन में जिला–वार बाढ़ जोखिम मानचित्र तैयार करने का कार्य नेशनल रिमोट सेंसिंग (एनआरएससी) को सौंपा गया है।

निष्कर्ष

प्राकतिक और मानव निर्मित आपदाओं का भारत में दुखद इतिहास रहा है। पिछले कुछ दशकों में चिंताजनक जलवायु परिवर्तन के साथ देश ने बिहार कश्मीर और उत्तराखण्ड जैसे विभिन्न राज्यों और मुंबई जैसे शहरों में बाढ़ जैसी कई आपदाएं और हिन्द महासागर सुनामी, गुजरात भूकंप, ओडिसा सुपर साइक्लोन आदि आपदाएं झेली है। भारत सरकार समय–समय पर राज्य सरकारों के साथ मिलकर प्राकृतिक व मानव निर्मित आपदाओं के प्रबन्धन हेतु प्रयासरत है। आपदा के उच्च प्रबंधन हेतु एक व्यापक और अधिक जन–केंद्रित निवारक दृष्टिकोण होना चाहिए। आपदा जोखिम न्यूनीकरण कार्यक्रमों को सक्षम एवं प्रभावी होने के क्रम में समावेशी एवं सुलभ होने की आवश्यकता है। सरकार को संबंधित हितधारकों, खास तौर से निजी क्षेत्र को सहूलियत तथा प्रोत्साहन के साथ–साथ नीतियों, योजनाओं एवं मानकों को बनाने तथा उनके कार्यान्वयन में शामिल करना चाहिए। इसे समावेशी बनाने के लिए महिलाओं को नेतृत्वकर्ता के रूप में तथा युवाओं, बच्चों, नागरिक समाज तथा शिक्षा–जगत के लोगों को शामिल करने की आवश्यकता है। साथ ही सभी राज्यों को साथ काम करने और सहयोग के अवसर पैदा करने के लिए वैज्ञानिक एवं शोध संस्थाओं को साथ जोड़ना चाहिए तथा व्यापार क्षेत्र को अपने प्रबंधन में आपदा जोखिम को एकीकृत करना चाहिए ताकि सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

सन्दर्भ सूची

1. G. Dr. Ramaiah (2019), Disaster Management in India, Delhi: Raj Publications.
2. Tad, Dr. M. C. Shibin (2021), Disaster Management : Challenges and Strategic for India, Chennai: Notion Press.
3. Dhawan, Nidhi Gauba (2012), Disaster Management and Preparedness, New Delhi: CBS Press.
4. Singh A.K., Nishith Rai (2021), Disaster Management in india: Perspective, Issues and Strategies, Lucknow : New Royal Book Company.
5. यादव, कृष्ण कुमार (2018), राष्ट्रीय आपदा मोचन बल एवं आपदा प्रबन्धन, जयपुर : वाइकिंग बुक्स।
6. The Tribune, 08 April, 2023
7. https://www.ndrf.gov.in

डॉ0 प्रवीन कुमार

गांव – सुलखनी

तहसील व जिला– हिसार

(हरियाणा)

पिन कोड – 125121

फोन नं0– 7027890008

ई–मेलः parveensanga10@gmail.com

9

गगन गिल के काव्य में मानवीय संवेदना

सुमन यादव

सारांश

संवेदना अर्थात् सहानुभूति, परदुखकातरता मनुष्य का एक दैवीय गुण है। इसका संबंध मूलतः मानव मन से होता है। किसी भी व्यक्ति के कष्ट को देखकर, मन में उठने वाले भावों, भावात्मक चिंता और उससे व्यथित होने के भाव को संवेदना के अंतर्गत गृहीत किया जाता है। मनुष्य की संवेदना विविध परिस्थितियों में भिन्न–भिन्न होती है। व्यक्ति अपने अनुभवों के आधार पर प्राप्त ज्ञान से संवेदनशील होता है। एक कवि या लेखक के लिए उसका संवेदशील होना अत्यंत आवश्यक है। वह अपनी जागृत संवेदना के माध्यम से पाठक या श्रोता के मन में भी उसी संवेदना को जागृत करने का प्रयास करता है। कई बार वह समाज के यथार्थ को भी संवेदना की भूमि पर प्रस्तुत करता है और पाठक उस यथार्थ से तादात्म्य स्थापित करते हैं। इस प्रकार मानवीय संवेदनाओं के द्वारा कवि अपने कवि–कर्म का पूर्णतः निर्वाह करता है।

शब्द कुंजी :सत्ता,संवेदना,सचेतन,जीवयष्टि, परदुखकातरता, झंझावात

संवेदना :संवेदना के बिना मनुष्य की सत्ता अधूरी है। साहित्यकार संवेदनशील साहित्य का निर्माण संवेदना के आधार पर ही करता है । साहित्यकार के अंतरजगत में कुछ नए और पुराने अनुभव होते हैं। साहित्यकार के मन में संवेदना इन्हीं अनुभवों को लेकर जागृत होती हैं। किसी वेदना या दुःख को देखकर स्वयं भी वैसा ही अनुभव करना ही संवेदना होती है। कवि या साहित्यकार अपनी संवेदना को साहित्य कृति में उभारने का प्रयास करता है। संवेदना साहित्य का प्राण होती है।

संवेदना की परिभाषा :

अनेक विद्वानों ने संवेदना को भिन्न–भिन्न दृष्टिकोणों से परिभाषित किया है । विश्वनाथ प्रसाद संवेदना को परिभाषित करते हुए लिखते हैं– " किसी वस्तु या घटना के असर से मन में उपजी भावनाओं एवं अनुभूतियों को संवेदना कहा जा सकता है।''[1]

डॉ० आनन्द प्रकाश दीक्षित का मत है– "संवेदना उत्तेजना के संबंध में देह रचना की सर्वप्रथम सचेतन प्रतिक्रिया है ।''[2]

डॉ० हरिचरण शर्मा अनुभव मात्र को संवेदना नहीं मानते। उनकी दृष्टि में– '' जो अनुभव व्यक्तित्व में घुलते हुए अनुभूति के रूप में छनकर आते हैं, वे ही संवेदना की संज्ञा प्राप्त करते हैं। इस प्रकार संवेदना प्रत्याक्षीकृत अनुभवों का 'डिस्टिल्ड फार्म' है ।''[3]

अज्ञेय संवेदना के संदर्भ में लिखते हैं– '' संवेदना वह तंत्र है जिसके सहारे जीवयष्टि अपने से इतर सब कुछ के साथ संबंध जोड़ती है, यह संबंध एकता का भी है और भिन्नता का भी, क्योंकि उसके सहारे जीवयष्टि अपने से इतर जगत् को पहचानती है, वहाँ उससे अपने को अलग भी करती है।''[4]

गगन जी ने एक रचनाकार होने और एक स्त्री रचनाकार होने के कारण मानवीय संवेदना का अत्यंत गहराई से अनुभव किया है और मनुष्य जीवन की विभिन्न संवेदनाओं को स्वयं जीते हुए उसे पाठकों तक प्रेषित किया है। उनकी कविताओं में हमें मानवीय संवेदनाओं के विविध रूप मिलते हैं।

एक अनजान, विकलांग स्त्री की संपूर्ण पीड़ा को मात्र दूरभाष पर बात करके समझ लेना, किसी सामान्य मानव के वश की बात नहीं। "सीढ़ियों में दो या तीन का अंतर उनके लिए क्या मायने रखता था, एक सीढ़ी के फासले में उनकी काया कितनी व्यथा छिपी थी, मुझे न इसका अनुमान था, न कल्पना।" वे स्वयं पीड़ित हो जाती हैं यह सोचकर कि जीवन की परिभाषा जानने के लिए वह स्त्री अपने एकांत में पीड़ा की कितनी लहरों से टकराई होगी?

वे सुखद जीवन के लिए शरीर और मन दोनों की अनिवार्यता बताती हैं। एक की भी अनुपस्थिति से दूसरा बिलकुल निष्क्रिय हो जाता है। शरीर के साथ न देने पर, मन की सबलता के लिए मनुष्य को सांत्वना के एक तिनके की आवश्यकता होती है।'' आपका मन...एक दुधारी तलवार है। यह जीने के काम भी आ सकता है, मरने के भी।" ऐसे में यदि उसे थोड़ी–सी आशा मिल जाती है तो उसकी जंजीर से बँधकर जीवन बिताना थोड़ा सहज हो जाता है।

गगन जी की रचनाएँ समाज से संबद्ध होती हैं परंतु वे उन्हें किसी सरोकार से नहीं बाँधतीं क्योंकि अपनी रचनाओं की स्वतंत्रता के लिए वे विशेष रूप से सचेष्ट रहती हैं और मानती हैं कि उसे सरोकार से बाँधना उसकी गति को अवरुद्ध करना होगा। यही कारण है कि समाज का कोई भी विषय अथवा प्राणी न तो उनकी संवेदना से ओझल होता है और न ही रचना में बोझिल होता है।

गगन जी अपने आस–पास होने वाली हर घटना के प्रति अतिरिक्त संवेदनशील हैं। वे सीधा संपर्क किए बिना भी किसी की भावनाओं की साझी बनने की क्षमता रखती हैं, तभी तो अपने पड़ोस में रहने वाली महिला की आत्महत्या पर भावुक हो उठती हैं द्य द्य उसके मनोभावों को भी वे आत्मीय के सदृश प्रस्तुत करती हैं। प्रायः स्त्री समाज अथवा लोक–लज्जा के भय से अपने प्रेम को प्रदर्शित नहीं कर पाती है और शारीरिक, मानसिक और आत्मिक पीड़ा की अतिशयता से जीवन का त्याग कर देती है। उसे लगता था कि मृत्यु के बाद एक

चमकीला दिन उसके सामने होगा। उसे अपने विचारों के झंझावात से छुटकारा मिल जाएगा परंतु यथार्थ में वह जीवन जीना चाहती है –

लेकिन छोड़ा जो उसने
एक आखिरी वाक्य
सिरहाने के नीचे
वह कहता था यही–
मैं जीना चाहती हूँ" [5]

बहुधा व्यक्ति जीवन में अकेलेपन का शिकार होता है, उसका हालचाल पूछने वाला कोई नहीं होता। गगन जी सच्ची मित्रता को चमत्कार मानती हैं जो सबके जीवन में नहीं होती। जीवन में मित्रों का अभाव एक बहुत बड़ा शून्य बन जाता है –

दिशा न होगी
कहीं
दोस्तों के घर की'' [6]

आज जिस सर्वहारा, दलित वर्ग के लिए बड़ी–बड़ी बातें की जाती हैं, महात्मा बुद्ध ने बहुत साल पहले उस सर्व–धर्म–समभाव को प्रतिष्ठित किया था। उन्होंने एक चाण्डालिनी– सुजाता की खीर के निमंत्रण को स्वीकार कर समाज में एक आदर्श, समता, आस्था, प्रेम और भक्ति–भाव की स्थापना की। गगन जी की संवेदना सुजाता के हृदय का भी स्पर्श कर आती है

"जितने दानों पर लगी थी योगी की मोहर, उतने ही जाते हैं उसके भीतर। उतने ही पका पाती है सुजाता, उतने ही ढलते हैं उसके बर्तन में।" [7]

गगन जी का हृदय संसार के सभी व्यक्तियों की पीड़ा से पीड़ित हो जाता है। परिजनों की पीड़ा और कष्ट उनके कोमल मन को और भी गहनता से पीड़ित करते हैं।वे अपने पिता के बहुत करीब थीं। उनकी बहनें और मित्र भी उनकी संवेदना के पात्र बनते है।

स्त्री के जीवन में उसके पिता का स्थान बहुत ऊँचा होता है और पिता के जीवन में भी बेटी उसके दिल के करीब होती है। पुरुष पति बनकर स्त्री पर अन्याय कर सकता है परंतु बेटी पश्चात् बेटी के रूप में उसकी संवेदनाएँ पृथक होती हैं। वह जानता है कि विवाह के कष्टों का अंत नहीं होगा अतः वह उसे अपने दिल में स्थान देता है। सन् 1984 के दंगे में लापता पिता के मिलने पर उनकी आपबीती उन्हें अश्रुपूरित कर देती है। उस हिंसक घटना की स्मृति उन्हें आज भी कँपा देती है। उनका दृढ़ विश्वास और दृढ़तर हो जाता है कि, " मारने वालों की अपेक्षा बचने वाले, बचाने वाले की संख्या हमेशा एक अधिक होती आई है।

पति की मृत्यु से बहन के जीवन में आए शून्य से गगन जी वेदना से भर जाती हैं। पूरे घर में सन्नाटा छा जाता है। इतने बड़े दुख के बाद कोई उपाय कारगर नहीं होता। उन्हें लगता है कि–

वह पत्थर की हो जाएगी
सपने में नहीं, सचमुच !" [8]

गगन गिल को नारी–सुलभ कोमलता, प्रेम, विश्वास में दृढ़ता आदि दैवी गुण ऐसा संवेदनशील हृदय देते हैं जो पुरुषों में छिपे प्रेम–भाव, अपने प्रेम को प्राप्त करने के लिए उनकी प्रबल आकांक्षा और अथक किए गए प्रयास को भी भली–भाँति पहचान लेता है। स्त्री स्वभावतः अपनी भावनाओं को खुलकर व्यक्त नहीं करती है परंतु पुरुष भी उसके उद्‌गार को जानने के लिए प्रयत्नशील रहता है –

एक हजार एक
डिब्बियों में बंद
तुम्हारा हृदय
एक हजार एक
बोतलों से आई बाहर
उसकी आकांक्षा'' [9]

निष्कर्ष

प्रायः ऐसा भी होता है कि पुरुष पत्नी के रहते भी किसी दूसरी स्त्री से प्रेम करता है। वह सभी से अपनी भावनाएँ छिपाता है, अनुचित और अमर्यादित कार्य करता है। कवयित्री उसके मनोभावों को समझकर कहती हैं कि वह अपने नाजायज सपनों को फेंकने की गुप्त जगह तलाश रहा है। कई बार वह सफल होता है परंतु कई बार उसके प्रेम की चिंगारी उसके लिए घातक हो जाती है। कवयित्री के विशाल संवेदना–संसार में हर मनोभाव अपने लिए स्थान प्राप्त कर लेता है।

संदर्भ– सूची

1 विश्वनाथ प्रसाद, कला एवं साहित्य : प्रवृत्ति और परम्परा, पृ.68
2. (सं०) धीरेंद्र वर्मा, हिन्दी – साहित्य कोश (भाग – 1), पृ. 863
3. हरिचरण शर्मा, सर्वेश्वर का काव्य, संवेदना और संप्रेषण पृ. 103
4. अज्ञेय, आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृ. 17 पृ.17
5 गगन गिल, अंधेरे मे बुद्व, पृ0 58
6 गगन गिल, अंधेरे मे बुद्व, पृ0 63
7 गगन गिल, अंधेरे मे बुद्व, पृ0 128
8 गगन गिल, एक दिन लौटेगी लडकी, पृ0 20
9 गगन गिल, आकांक्षा समय नही , पृ0 33

सुमन यादव
शोधार्थी
राजेन्द्र सिंह
शोध निर्देशक
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय
रोहतक।

10

इस्लाम धर्म में बालिकाओं की शैक्षणिक स्थिति की वैधानिकता का समाजशास्त्रीय अध्ययन

गजराज सिंह, डॉ0 जाकिया रफत

सारांश

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 29 सभी अल्पसंख्यकों को यह अधिकार देता है कि वे अपनी भाषा, लिपि या संस्कृति को बनाए रख सकते हैं और इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वे शिक्षण संस्थाओं की स्थापना तथा उनका संचालन कर सकते हैं। इसके साथ ही राज्य द्वारा वित्त पोषित किसी भी शैक्षणिक संस्था में धर्म, भाषा एवं जाति के आधार पर कोई भी भेदभाव नहीं किया जायेगा और न ही उनमें प्रवेश लेने से वंचित किया जायेगा।

मुख्य शब्द : **वैधानिकता, मुस्लिम, बालिका।**

भूमिका

कहा जाता है कि इस्लाम धर्म दुनिया के सभी धर्मों में आधुनिक होने के साथ–साथ उदार भी है। इस्लाम धर्म में बिना किसी भेदभाव के पुरुष और महिलाओं को समान अधिकार प्रदान किए गए हैं। खासतौर पर शिक्षा के मामले में महिला और पुरुषों में किसी भी प्रकार का विभेद नहीं किया गया है और कहा गया है कि एक महिला के शिक्षित होने का अर्थ है एक परिवार, एक कुल का शिक्षित होना और अगर महिलाएं ही अशिक्षित हैं तो परिवार और कुल तो शिक्षा से दूर होंगे ही।

कुरान में भी कहा गया है कि एक अच्छे और उत्तम चरित्र का निर्माण शिक्षा के द्वारा ही किया जा सकता है। एक **हदीस** में भी कहा गया है कि "हर मुसलमान मर्द तथा औरत को ज्ञान की खोज के लिए हमेशा ही प्रयासरत रहना चाहिए।" इसका अर्थ यह है कि धर्म किसी भी स्थिति में मुस्लिम महिलाओं की शिक्षा प्राप्त करने के प्रयास में अवरोध उत्पन्न नहीं करता है। शिक्षा मात्र जीविकोपार्जन के लिए नहीं बल्कि मनुष्य के सर्वांगीण विकास खासतौर पर आध्यात्मिक प्रगति के लिए होनी चाहिए।

भारतीय संविधान में अल्पसंख्यकों के लिए किए गए धार्मिक, आर्थिक एवं शैक्षिक प्रावधान

भारतीय संविधान में सभी धार्मिक समुदायों के साथ समानता का व्यवहार करने की बात कही गयी है, इसके साथ ही धर्म के आधार पर किसी भी प्रकार के भेदभाव को निषेध किया गया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 25–28 के अंतर्गत धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान की गयी है।

1. **अनुच्छेद 25** में कहा गया है कि देश के प्रत्येक नागरिक को किसी भी धर्म को मानने व उसके अनुसार आचरण करने और प्रचार करने का अधिकार है, लेकिन सार्वजनिक व्यवस्था या समाज कल्याण एवं सुधार आदि के अंतर्गत इस अधिकार पर रोक लगायी जा सकती है।
2. **अनुच्छेद 26** में कहा गया है कि देश के प्रत्येक नागरिक को धार्मिक प्रयोजन के लिए संस्था की स्थापना करना व उसका पोषण करने और धार्मिक कार्यों के प्रबंध के लिए सम्पत्ति अर्जित करने का अधिकार है।
3. **अनुच्छेद 27** में कहा गया है कि किसी भी व्यक्ति को धर्म या संप्रदाय विशेष के पोषण के लिए किसी भी प्रकार का कर देने के लिए बाध्य नहीं किया जायेगा।
4. **अनुच्छेद 28** में कहा गया है कि राज्य निधि से पोषित या आर्थिक सहायता प्राप्त शिक्षण संस्थाओं में किसी भी प्रकार की धार्मिक शिक्षा प्रदान नहीं की जाएगी।

शैक्षणिक संदर्भ में अल्पसंख्यकों के हितों का संरक्षण

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 29 अल्पसंख्यकों के शैक्षणिक हितों के सन्दर्भ में निम्न उद्घोषणाएँ करता है। भारतीय संविधान सभी अल्पसंख्यकों को यह अधिकार देता है कि वे अपनी भाषा, लिपि या संस्कृति को बनाए रख सकते हैं और इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वे शिक्षण संस्थाओं की स्थापना तथा उनका संचालन कर सकते हैं। इसके साथ ही राज्य द्वारा वित्त पोषित किसी भी शैक्षणिक संस्था में धर्म, भाषा एवं जाति के आधार पर कोई भी भेदभाव नहीं किया जायेगा और न ही उनमें प्रवेश लेने से वंचित किया जायेगा।

अल्पसंख्यकों के शैक्षिक अवसरों की समानता की वास्तविक स्थिति

निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि शिक्षा को लगभग प्रत्येक समस्या का समाधान करने का एक सशक्त साधन माना जाता है। चाहे राष्ट्रीय एकता की समस्या हो या फिर लोगों में जागरूकता उत्पन्न करना या अल्पसंख्यकों एवं पिछड़े वर्गों की स्थिति में सुधार लाना हो तो ऐसी अनेक समस्याओं के समाधान के लिए शिक्षा का ही सहारा लिया जा सकता है।

यदि शैक्षिक अवसरों की समानता की वास्तविकता व मुस्लिम समुदाय का अध्ययन किया जाए तथा इसके साथ ही विद्यालय पाठ्यक्रम का मूल्यांकन भी किया जाए तो यह ज्ञात होता है कि समस्त विद्यालय गतिविधियों में से अधिकांश का सम्बन्ध समाज के बहुसंख्यक समुदाय से होता है। बहुसंख्यक वर्ग बाहुल्य वाले अधिकतर विद्यालयों में अधिकांश पुस्तकें, पत्र–पत्रिकाएँ हिंदी एवं अंग्रेजी भाषा में ही उपलब्ध होती हैं। लगभग यही तथ्य इन विद्यालयों में शिक्षकों की संख्या पर भी लागू होता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 30 में अल्पसंख्यकों को अपने शिक्षण संस्थाओं को स्थापित एवं संचालित करने का अधिकार प्रदान किया गया है। लेकिन देश में अभी भी अल्पसंख्यकों की स्थिति निम्न बनी हुई है। तमाम प्रयासों के बावजूद भी मुस्लिम समुदाय अभी भी अपनी वास्तविक स्थिति में नहीं आ सका है।

साहित्य का पुनरावलोकन

नेओमी एवं **लेवाइन** (1997) ने 140 देशों में महिलाओं की स्थिति का अध्ययन किया तथा अपने इस अध्ययन में भारतीय महिलाओं से सम्बन्धित विभिन्न मुद्दों को भी अपने अध्ययन का विषय बनाते हुए बताया कि भारतीय संविधान में महिलाओं को पुरुषों के समान ही अधिकार दिए गए हैं, लेकिन परम्परागत सामाजिक व्यवस्था के चलते भारतीय महिलाएं उपलब्ध संसाधनों का पूर्ण रूप से उपयोग नहीं कर पा रहीं हैं। अपने इस अध्ययन में उन्होंने सुझाव दिया की उच्च शिक्षा के द्वारा ही महिलाओं को सशक्त बनाया जा सकता है।

सिन्हा एवं अन्य (2012) के अनुसार समाज में असमानता होना स्वाभाविक है क्योंकि प्राकृतिक रूप से सभी समान नहीं होते हैं। महिलाऐं विश्व की कुल आबादी का लगभग आधा हिस्सा हैं। इसके बावजूद भी हम देखते हैं कि महिलाओं के अधिकारों का हनन और लिंग आधारित हिंसा बड़े पैमाने पर जारी है। लिंग के आधार पर भेदभाव का एक बड़ा कारण पुरुष और महिलाओं की भूमिकाओं का निरंकुश विभाजन है। विडंबना तो यह है कि महिलाओं द्वारा भी लिंग सम्बन्धी इन भेदभावों को जीवन के एक अपरिहार्य तथ्य के रूप में स्वीकार कर लिया था लेकिन वर्तमान समय में महिलाऐं इस शोषण और अन्याय के प्रति जागरूक हो रही हैं और निरंतर इनके खिलाफ अपने आवाज उठा रही हैं।

फिरदौस बानो (2017) ने भारत में मुस्लिम महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति के अवलोकन सम्बन्धी अपने एक अध्ययन में पाया कि खराब आर्थिक स्थिति, घर में छोटे भाई–बहनों और बीमार लोगों की देखभाल, स्कूलों में शिक्षण प्रक्रिया का प्रभावपूर्ण न होना, विद्यालयों में महिला शिक्षकों की कमी और सरकारी योजनाओं का सही ढंग से कार्यान्वयन न किया जाना भारत में मुस्लिम महिलाओं के अशिक्षा के प्रमुख कारण हैं। इस सम्बन्ध में उन्होंने सुझाव दिया कि देश में निचली जातियों, आदिवासी और मुस्लिमों को विकास की मुख्य धारा में शामिल करने के लिए नीतिगत नवाचारों की सख्त जरुरत है।

भाबनम बानों (2018) ने महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति से सम्बन्धित अपने एक अध्ययन में पाया कि उदयपुर शहर में मुस्लिम महिलाओं की स्थिति अभी भी कमजोर है और उनका सामाजिक और शैक्षणिक स्तर भी निम्न है। यही स्थिति लगभग देश की मुस्लिम महिलाओं की है। अतः देश की महिलाओं की निम्न स्थिति में सुधार करने की अत्यन्त आवश्यकता है। अगर महिलाओं की स्थिति में सुधार लाकर उन्हें राश्ट्र की मुख्य धारा में लाना है तो उन्हें जागरुक करके जनकल्याण योजनाओं में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी। इसके अतिरिक्त उन्हें स्वाबलंबी बनाने के साथ ही पुरुशों के समान ही उच्च शिक्षित करना होगा। और जब उनको समान अवसर उपलब्ध होंगे तो उनकी स्थिति में भी सुधार आएगा।

उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन हेतु निम्न उद्देश्यों को निर्धारण किया गया है –

1. मुस्लिम बालिकाओं को वैधानिक रूप से शिक्षा का समान अधिकार प्राप्त होने सम्बंधी अध्ययन।
2. मुस्लिम बालिकाओं को समानता का वैधानिक रूप से प्राप्त होने सम्बंधी अध्ययन।

प्राक्कल्पना

प्रस्तुत अध्ययन हेतु निम्न प्राक्कल्पनाओं को बनाया गया है –

1. मुस्लिम बालिकाओं को वैधानिक रूप से समान अधिकार प्राप्त होने के बाद भी शैक्षणिक संस्थानों में नहीं भेजा जाता है।
2. वैधानिक रूप से समानता का अधिकार प्राप्त होने के बाद भी मुस्लिम बालिकाऐं दोयम दर्जे का जीवन जीने को मजबूर रहती है।

अध्ययन की आवश्यकता

प्रस्तुत अध्ययन में मुस्लिम बालिकाओं को भारतीय नागरिकों के समान ही अधिकार ही प्राप्त है। संविधान में समानता का अधिकार प्राप्त होने के बाद भी उन्हें दोयम दर्जे का जीवन जीने के लिए मजबूर किया जाता है। इसके कारणों की व्याख्या प्रस्तुत करना है।

तालिका – 1

संवैधानिक अधिकारों की जानकारी होने की स्थिति

क्र.सं.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	जानकारी है	29	29.00
2.	जानकारी नहीं है	48	48.00
3.	कोई जबाब नहीं	23	23.00
	कुल	100	100.00

स्त्रोत : अनुसंधानकर्ता द्वारा एकत्रित तथ्य।

उपरोक्त तालिका के आँकड़ों के आधार पर कहा जा सकता है कि 29 उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया है कि उनकों संविधान में प्राप्त अधिकारों की जानकारी है। वहीं 48 ऐसे उत्तरदाता है, जो मानते है कि उनहें संविधान में प्राप्त अधिकारों की जानकारी नहीं हैं। इसके साथ ही 23 ऐसे भी उत्तरदाता है जिन्होंने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया कि उन्हें संविधान में प्राप्त अधिकारों की जानकारी है। यदि जानकारी नहीं होने वाले और उत्तर न देने वाले उत्तरदाताओं की संख्या को देखा जाये तो यह संख्या 71 होती है, जो एक तिहाई के लगभग है।

इस प्रकार स्पश्ट होता है कि एक बड़ा हिस्सा इन संवैधानिक अधिकारों के बारें में कोई जानकारी नहीं रखता है। यही कारण है कि बालिकाओं एवं मुस्लिम स्त्रियों की स्थिति अच्छी नहीं हैं।

तालिका – 2

संविधान में प्राप्त **''स्त्री अधिकारों''** की जानकारी होने की स्थिति

क्र.सं.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	जानकारी है	37	37.00
2.	जानकारी नहीं है	41	41.00
3.	कोई जबाब नहीं	22	22.00
	कुल	100	100.00

स्त्रोत : अनुसंधानकर्ता द्वारा एकत्रित तथ्य।

उपरोक्त तालिका के आँकड़ों के आधार पर कहा जा सकता है कि स्त्रियों को अपने अधिकारों की ही जानकारी नहीं है, क्योंकि 41 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस बात को स्वीकार किया है कि उन्हें स्त्री अधिकारों के बारें में कोई जानकारी नहीं है। यदि इनके साथ उन उत्तरदाताओं की संख्याओं को भी शामिल कर लिया जायें जिन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया है तो यह 78 प्रतिशत उत्तरदाताओं को स्त्रियों को प्राप्त अधिकारों की जानकारी नहीं हैं।

इन बालिकाओं की स्थिति पर दृश्टि डालने से स्पश्ट होता है कि बालिकाओं की स्थिति अच्छी नहीं हो सकती है, क्योंकि उन्हें अपने अधिकारों की स्थिति ही पता नहीं है।

तालिका – 3

समाज में समान अधिकार होने की स्थिति

क्र.सं.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	समान अधिकार है	35	35.00
2.	समान अधिकार नहीं है	52	52.00
3.	कोई जबाब नहीं	13	13.00
	कुल	100	100.00

स्त्रोत : अनुसंधानकर्ता द्वारा एकत्रित तथ्य।

उपरोक्त तालिका के आँकड़ों के आधार पर कहा जा सकता है कि परिवार व समाज में पुरूशों के समान अधिकार प्राप्त होनें की बात को मात्र 35 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने ही स्वीकार किया है। वहीं 52 प्रतिशत अर्थात् आधे से अधिक उत्तरदाताओं ने यह स्वीकार किया है कि उन्हें न तो परिवार में और न ही समाज में पुरूशों के समान अधिकार प्राप्त है। इस तथ्य के साथ यह भी 13 प्रतिशत वे भी उत्तरदाता है जिन्होंने इस तथ्य को कोई उत्तर नहीं दिया, जो इस बात की ओर संकेत करता है कि उन्होंने समाज की इस दोहरी मानसिकता को स्वीकार कर लिया है।

इस प्रकार स्पश्ट होता है कि स्त्रियों के साथ–साथ बालिकाओं की स्थिति भी समाज में ठीक नहीं है, इस बात को अधिकतर उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया है, क्योंकि इन उत्तरदाताओं की संख्या 52 प्रतिशत है। यदि इन 52 प्रतिशत उत्तरदाताओं की संख्या में 13 प्रतिशत को और जोड़ लिया है तो समाज के एक बड़ा हिस्सा यानि 65 प्रतिशत उत्तरदाता समाज में अपनी दोयम दर्जे की जिन्दगी को जीना स्वीकार कर लिया है।

निष्कर्ष

समाज की ये कैसी विडम्बना है कि आधी आबादी अपने संवैधानिक अधिकारों तक की जानकारी नहीं रखती है। इसके पीछे प्रमुख कारण के रू**य** में देखा जाये तो शिक्षा की कमी ही मानी जायेगी। क्योंकि व्यक्ति शिक्षित होगा तो वह बौद्धिक रू**य** से परिपक्व होगा। जिससे वह अपने तथा समाज से सम्बंधित जानकारी के प्रति सजग रहेगा। समाज की इस आधी आबादी को न संवैधानिक अधिकारों की ही जानकारी है और स्त्रियों को प्राप्त अधिकारों की ही जानकारी है। यही कारण वे दोयम दर्जे की जिन्दगी जीने को मजबूर है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. बेस्ट, जॉन डब्ल्यू. (1977). 'रिसर्च इन एजूकेशन', प्रेंटिस हॉल आई.एन.सी., एंग्लीबुड क्लिफ, न्यूजर्सी, पी.पी. 403।
2. ब्रिजभूशण, जे०, (1980). 'मुस्लिम वीमेन इन पर्दा एंड आउट ऑफ इट', विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
3. ब्रिसवाल, तपन, (2008). मानवाधिकार, जेंडर एवं पर्यावरण, वीवा बुक्स प्रा. लि, नई दिल्ली।
4. **बोरा, आशारानी**, (1983), **भारतीय नारीः द□ा और दि□ा**, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
5. **अंसारी, अख्तर, ओटावे, ए० के० सी०** (2018). **तालीम समाज और कल्चर,** एन० सी० पी० यू० एल०, नई दिल्ली।
6. **आसिफ, एम०**, (2010). **'माध्यमिक स्तर पर मुस्लिम छात्राओं की भौक्षिक आकांक्षाओं एवं समस्याओं का अध्ययन'**, पी–एच० डी०, शिक्षाशास्त्र, सी० सी० एस० यूनीवर्सिटी, मेरठ।
7. **ऐलहॉन्स, डी० एन०, फंडामेंटल ऑफ स्टेटिक्स**, पृ. 56।

शोधार्थी

गजराज सिहं

आर0 वी0 डी0 कॉलेज बिजनौर(उत्तर प्रदेश)

इमेल– gajraj2983@gmail.com

मोबाइल नम्बर– 9837676926

पत्रचार का पता

नाम– गजराज सिहं

पिता का नाम – श्री मारेह सिहं

पता– बाल विकास महाविधालय कुतुबपुर गांवड़ी ब्लॉक

जलीलपुर चांदपुर

बिजनौर (उत्तर प्रदेश)

इमेल– gajraj2983@gmail.com

मोबाइल नम्बर– 9837676926

डॉ0 जाकिया रफत

11

मानव–पर्यावरण सम्बन्ध

डॉ0 शीबा फ़रीदी

सारांश

प्रकृति में वायु, जल, मृदा, पेड़–पौधे तथा जीव जन्तु सभी सम्मिलित रूप में पर्यावरण की रचना करते हैं। सामान्यतया किसी स्थान विशेष में मानव के चरों तरफ (स्थल, जत वायु, मृदा आदि) का वह आवरण जिससे वह घिरा है, पर्यावरण (Environment) कहलाता है. अर्थात पर्यावरण से अभिप्राय आसपास या पास पड़ोस (surrounding) अर्थात् हमारे चारों ओर फैले हुए मानव, जन्तुओं या पौधों के उस वातावरण एवं परिवेश से है, जिससे हम घिरे हुए हैं।

मनुष्य हो या अन्य जीवजन्तु सभी पर्यावरण की उपज है, उनकी उत्पति विकास, वर्तमान स्वरूप एवं भावी अस्तित्व सभी पर्यावरण की परिस्थिति पर ही निर्भर है। पर्यावरण के लिए कुछ विद्वान मिल्यू (Milieu) तो कुछ विद्वान हेबिटाट (Habitat) शब्द का प्रयोग करते हैं। इसी तरह प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञानी प्राकृतिक पर्यावरण तथा भूगोलविद भौगोलिक पर्यावरण का भी प्रयोग करते है, परन्तु अधिक प्रचलित तथा मान्य मत के अनुसार मौलिक रूप से पर्यावरण का स्वरूप प्राकृतिक है अर्थात् प्राकृतिक तत्वों के प्रभाव एवं उपयोग से है। आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक पर्यावरण जन्म लेता है तथा उसी से ये नियन्त्रित एवं परिचालित होते हैं। अतः वर्तमान अध्ययन में प्राकृतिक पर्यावरण को ही आधार मानना उचित होगा, जिसमें अनेक तत्वों के साथ साथ मानव स्वय भी एक कारक के रूप में कार्य करता है।

प्राथमिक पर्यावरण में मनुष्य स्वविकसित तकनीकी (Technology) की सहायता से संशोधन तथा परिवर्तन करता रहता है और उसे अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप बना लेता है। उदाहरण के लिए, वह भूमि को जोतकर खेती करता है, जंगलों को साफ करता है. सड़कें, नहीं, रेलमार्ग, आदि बनाता है, पर्वतों को काट कर सुरंगें, आदि निकालता है, नयी बस्तियां बसाता है तथा भूगर्भ से खनिज सम्पति निकालकर अनेक उपकरण एवं अस्त्रशस्त्र, आदि बनाता है और प्राकृतिक संसाधनों का विभिन्न प्रकार से शोषण कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। इन सबके फलस्वरूप वह एक नए पर्यावरण को जन्म देता है। इसे मानवीय मानव निर्मित अथवा प्राविधिक (Human Man-made or Technological) पर्यावरण कहा जाता है। इन्हें मानव की पदार्थ संस्कृति (Material Culture) भी कहा जाता है। यही सांस्कृतिक पर्यावरण कहलाता है। इसके अन्तर्गत औजार, गहने, अधिवास, मानवीय क्रियाओं के सृजित रूप जैसे खेत, कृत्रिम चरागाह व उद्यान, पालतू पशु सम्पदा, उद्योग एवं विविध उद्यम, परिवहन और संचार के साधन (वायुयान, रेल, मोटर, रेडियो, तार, आदि) प्रेस आदि सम्मिलित किए जाते हैं। यहां एक बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि इन पार्थिव पदार्थों का कोई उपयोग नहीं पदि इनके उपभोग करने की क्षमता मनुष्य में न हो। इसके साथ ही यह भी एक तथ्य है कि मानव को जिस जिस प्रकार की विशिष्ट सुविधाओं की आवश्यकता होगी वह उन्हीं पर शोध कर उन्हें खोजेगा। शारीरिक एवं मानसिक योग्यता का ज्ञान, इनके निर्माण का विज्ञान, ये भी मानव संस्कृति के ही भाग हैं। ये मानव की सांस्कृतिक विरासत (Cultural hentage) है।

मानव पर्यावरण सम्बन्ध

Man Environment Relationship

मानव प्रत्येक प्रकार के क्रियाकलापों के लिए पर्यावरण पर निर्भर है। मानव एक कलाकार के रूप में पर्यावरण द्वारा प्रदत्त रंगमंच (Stage) पर कार्य करता है। कहीं पर्यावरण उसे प्रभावित करता है तो कहीं वह उसके साथ अनुकूलन तथा परिवर्तन (Adaptation and Modification) करता है। इसे पर्यावरण समायोजन (Adjustment) भी कहते है।

पर्यावरण का प्रभाव

Efects of Environment

मानव भूगोल के सिद्धान्तों को पूर्ण रूप से समझने के लिए पह आवश्यक है कि मानव और उसके पर्यावरण के पारस्परिक सम्बन्धों को समझा जाए इसके लिए पर्यावरण के प्रभावों का अध्ययन किया जाता है।

व्हाइट और रैनर ने भौगोलिक पर्यावरण के महत्व को निम्र शब्दों में व्यक्त किया है–

''भौतिक वातावरण मानव के बड़े समूहों को स्पष्टतः प्रत्यक्ष रूप में और प्राथमिक तरीके से प्रभावित करता है। प्रत्येक समूह, जनजाति, राज्य राष्ट्र और पृथ्वी के सभी साम्राज्य इसके द्वारा सीधे तौर पर सफलता के साथ निरन्तर रूप से प्रभावित होते हैं। मानव की कोई भी बड़ी महत्वपूर्ण किया बिना इसकी सहायता के, बिना इसकी रुकावटो और निर्देशों के स्वतन्त्र नहीं है। प्राकृतिक पर्यावरण मानव समाज के लिए वहीं करता है जो सामाजिक पर्यावरण व्यक्तिगत मनुष्य के लिए।

मानव भूगोल की जानी मानी विद्वान सैम्पल ने मानव पर पड़ने वाले भौगोलिक प्रभावों को चार श्रेणियों में विभक्त किया है –

(1) सीधे भौतिक प्रभाव, (2) मानसिक प्रभाव (3) आर्थिक और सामाजिक प्रभाव तथा (4) मानव की गतियों को प्रभावित करने वाले प्रभाव

1. प्रत्यक्ष भौतिक प्रभाव– पर्यावरण के सभी तत्वों में जलवायु का प्रभाव सबसे अधिक महत्वपूर्ण है जो मानव को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। जलवायु का प्रभाव प्राकृतिक वनस्पति और मिट्टियों द्वारा

मनुष्य पर पड़ता है। जलवायु का प्रभाव मनुष्य के कद, शरीर की बनावट, रंग, आदि पर पड़ता है। इसी प्रकार पर्यावरण मनुष्य की शारीरिक शक्ति को भी अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है जिससे उसके शरीर का एक भाग दूसरे की अपेक्षा अधिक सुध्द और बतिष्ठ बन जाता है। सैम्पल ने उदाहरणं देते हुए स्पष्ट किया है कि ष्पर्वतीय भागों में मनुष्य के पैर बलिष्ट और हाथ कम बलिष्ठ होते हैं, जबकि नदियों वाले मैदानी भागों में जहाँ उसे हाथ से नाव बतानी पड़ती हैरू हाथ बलिष्ठ और पैर कम बलिष्ठ होते हैं। प्रतिकृत पर्यावरण में रहने पर आँखों और त्वचा पर भी प्रभाव पड़ता है। तुर्कमान लोगों की आँखें छोटी और पलकें भारी होती है, क्योंकि वे हमेशा मरुस्थलीय भागों में रहते हैं।

2. मानसिक प्रभाव– इस प्रकार के प्रभाव मनुष्यों के धर्म उनके साहित्य, भाषा, आचार–विचार में दिखायी देते है। मनुष्य के धार्मिक विचार उसके पर्यावरण की ही उपज है। भाषा पर भी पर्यावरण का प्रभाव रहता है।

3. आर्थिक और सामाजिक प्रभाव– किसी स्थान की भौगोलिक अवस्थाएँ ही इस बात का निर्धारण करती है कि वहाँ आवश्यक वस्तुओं की प्राप्ति सरलता से होगी अथवा कठिनाई से, वहाँ किस प्रकार के उद्योग स्थापित किए जा सकते हैं। इस प्रकार के प्रभाव ही मानव समाज के आकार को निर्धारित करते हैं। जिन क्षेत्रों, द्वीपों या पर्वतीय भागों में आर्थिक संसाधन कम मात्रा में पाए जाते हैं, वहां मनुष्य भी छोटे समुदायों में पाए जाते हैं, क्योंकि उन क्षेत्रों में उनके लिए उपयुक्त पर्यावरण नहीं मिलता।

4. मानव की गतियों को प्रभावित करने वाले प्रभाव– मानव समूह के आवास प्रवास को भौतिक पर्यावरण के सभी तत्व विशिष्ट एवं अनेक प्रकार से प्रभावित करते हैं। इनके अन्तर्गत पहाड़ों मरुस्थलों, दलदलों समुद्रों आदि का प्रभाव मानव के प्रवास पर पड़ता है। ये सभी उसके मार्ग का निर्धारण करते हैं, उसे सहयोग अधवा असहयोग देते हैं। उदाहरणार्थ, मानव ने नदी मागों का यातायात के साधनों के रूप में उपयोग किया जिससे अनेक मानव जातियों ने दूर–दूर जाकर अपनी बस्तियां स्थापित की। पर्वत अवरोध उत्पन्न करते हैं। भारत वर्ष के उत्तर में हिमालय पर्वत ने मध्य एशिया से सम्पर्क को सदैव रोकने का प्रयास किया है।

भौतिक पर्यावरण के जितने भी तत्व या कारक है, उनमें से प्रत्येक का अपना विशिष्ट एवं बहुमुखी प्रभाव मानव के कार्यकलाप, क्षमता के विकास एवं मानव सन्दर्भ में क्षेत्र के विकास पर पड़ता रहा है। जितनी अनुकूलता तत्वों के वितरण की होगी विकास, समृद्धि एवं मानवीय आकांक्षाएं उतनी शीघ्र पूरी होती जाएंगी। वातावरण के पूर्व वर्णित सभी तत्वों स्थिति, स्थत स्वरूप एवं घरातल, जल संस्थान, जलवायु प्राकृतिक वनस्पति, प्राणी जगत, मिट्टियाँ एवं खनिजों में से सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रभाव जलवायु एवं धरातल तत्वों का रहा है। इनकी प्रतिकूलता का शीघ्र प्रभाव मानव की क्षमता एवं अनिवार्यताओं पर तत्काल पड़ता है। यद्यपि अनेक दशाओं में अन्य कारक भी समान रूप से महत्वपूर्ण माने गए हैं। जैसे खनिज तेल भूमि पर व अपतटीय क्षेत्र में विपुल मात्रा में खोज का राष्ट्रों के अर्थतन्त्र पर वर्तमान में ताकाल प्रभाव पड़ता रहा है। यही स्थिति बहुमूल्य खनिजों की खोज में भी उत्तर मध्य युग में बनी रही। अन्य तलों के प्रभाव की भी यही वस्तुस्थिति है।

पर्यावरण से सामंजस्य या समायोजन

Adjustment with Environment

अपने भौतिक पर्यावरण के साथ मानव का सामंजस्य अत्यन्त प्राचीनकाल से चला रहा है, जबकि वह पत्थर युग में था। इस युग में मनुष्य ने अपनी सुरक्षा के लिए पर बनाने, प्रकृति की वस्तुओं का भोजन के रूप में उपयोग करने, पलर को काट छाट, पिसकर औजार बत्ताने, जंगली पशुओं को पालतू बनाने, जादू आदि पर विश्वास करने और सामूहिक रूप से सुरक्षा आदि करने के रूप में मनुष्य ने अपने सांस्कृतिक पर्यावरण को जन्म देने में योग दिया है तभी से मनुष्य भौतिक पर्यावरण के साथ सामंजस्य करता रहा है, मनुष्य ने विज्ञान, तकनीकी ज्ञान और आर्थिक क्रियाओं में बड़े महत्वपूर्ण परिवर्तन करके अपने को भौतिक पर्यावरण के साथ सामंजस्य करने की रीतियों में बड़ा प्रसार किया है। इस प्रकार सामंजस्यों को प्रधानतः तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक और राजनीतिक।

1. आर्थिक समंजन Economic Adjustment– इस प्रकार का अनुकूलन समाज द्वारा कार्य प्रतिमानों के रूप में किया जाता है। मनुष्य कौन–सा कार्य करता है यह उसकी इच्छाओं, विचारों और उसकी कुशलता पर निर्भर करता है। मोटे तौर पर यह बात भोतिक पर्यावरण में मिलने वाली सम्पदा द्वारा प्रभावित होती है। आर्थिक समंजन मुख्यतः चार श्रेणियों में बाटे जा सकते हैं–

• **उद्यम** Extractive occupations– इसमें मछली पकड़ना लकड़ी काटना, जाल बिछाकर पशुओं को पकड़ना तथा खाने खोदना सम्मिलित किया जाता है। इन कार्यों में प्रकृति से सीधे ही वस्तुएं प्राप्त की जाती है। इस प्रकार मनुष्य वस्तु उपयोगिता (Commodity Utility) उत्पन्न करता है।

• **उत्पादक उद्योग** Genetic or Productive Industries – इसके अंतर्गत मनुष्य भूमि से उन वस्तुओं को अधिकाधिक मात्रा में प्राप्त करने का प्रयास करता है जो पहले से ही मौजद है जैसे कृषि, पशुपालन तथा रेशम के कीड़े पालकर उनका उत्पादन प्राप्त करना।

• **निर्माण उद्योग** Manufacturing Industries– इनके अन्तर्गत खदानों अथवा कृषि से प्राप्त वस्तुओं को पिचलाकर, साक– सुथरा कर उनसे वस्तुएँ निर्मित की जाती हैं। इस प्रकार के उद्योग से स्वरूप उपयोगिता (Form utility) प्राप्त की जाती है।

वाणिज्यक क्रियाकलाप Commercial Activities– इनमें यातायात एकत्रीकरण विनिमय एवं अर्थ प्रबन्धन की क्रियाएँ सम्मिलित की जाती है। इसके द्वारा स्थान और समय उपयोगिता

(Place and Time) प्राप्त की जाती है। इसके साथ साथ मनुष्य की अन्य व्यावसायिक सेवाएँ शिक्षा कानून डाक्टरी आदि, व्यक्तिगत सेवाएँ । घरेलू, कार्य, सफाई का कार्य, आदि) भी सम्मिलित किए जाते हैं।

2. सामाजिक एवं सांस्कृतिक समंजन Social and Cultural Adjustment– मानव समाज अपने भौतिक पर्यावरण के साथ इस प्रकार का सामंजस्य भी स्थापित करता है। इसके अन्तर्गत जनसंख्या का घनत्व, भूमि पर स्वामित्व, सामाजिक वर्ग परिवार, समाज–सम्बन्ध, आदि बाते सम्मिलित होती है। इसी प्रकार के समेजन में मनुष्य के व्यवहार एवं आदतें, उनका स्थायी जमाव व घुमक्कड़ जीवन, उसके वस्त्र भोजन, घर, आचार विचार, धार्मिक विश्वास एवं आस्थाएं, कला, आदि बातों का भी समावेश किया जाता है।

3. राजनीतिक समंजन Political Adjustment– मानव समाज अपने भौतिक पर्यावरण से नागरिक तथा राजनीतिक समंजन भी स्थापित करता है। इस क्रिया के अन्तर्गत स्थानीय, प्रान्तीय या राष्ट्रीय सरकारों की स्थापना, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, सैन्य नीतियां तथा अन्तर्राष्ट्रीय कानून आदि की व्यवस्था सम्मिलित होती है।

पर्यावरण में परिवर्तन

Changes in Environment

पह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि प्राकृतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ या पर्यावरण प्रगतिशील (Dynamic) है, जीवित है, स्थिर (stabc) नहीं है, अर्थात् उनमें सर्वदा परिवर्तन होता रहता है। नदी के किनारे आज जो हम कण देखते है कल वहाँ नहीं रहेगा। पेड़ की जिस पत्ती को आज हम हरी देखते हैं कल उसमें कुछ परिवर्तन हो जाएगा। इसी भांति जहां मरुस्थल देखते हैं वहां पर सो या दो सौ वर्ष उपरान्त बड़े बड़े हवाई अड़े बन सकते हैं जिनके चारों ओर पातालोड़ कुओं से जल से हरे–भरे पेड़ शीतल सुन्दरता का आनन्द दे रहे हों। सौ वर्ष पहले ही कौन यह कह सकता था कि बीकानेर की मरुभूमि में नहर की सिचाई से लहलहाते खेत बन जाएंगे और इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना रेगिस्तानी गंगा के रूप में पश्चिमी राजस्थान का कायाकल्प कर देगी।

प्राकृतिक और सांस्कृतिक पर्यावरण दोनों में ही परिवर्तन आता रहता है। यह प्रकृति का नियम है (Change is the law of Nature)। कुछ परिवर्तन अचानक और कुछ धीर धारे आते हैं। इन परिवर्तनों को मुखात दो भागों में विभाजित किया जाता है

1. प्राकृतिक परिवर्तन Natural Changes– इसके अनार्गत भूकम्प, ज्वालामुखी विस्फोट बाद आना, सूखा पड़ना आधी और तुफानों का आगमन, चक्रवात और आग लग जाना आदि दैवी प्रकोप है। ऐसे परिवर्तनों पर मनुष्य का कोई नियन्त्रण नहीं है। अतः पहले से ही विनाश का अनुमान लगाना कठिन होता है।

2. मानव द्वारा लाए गए परिवर्तन Man induced Changes– इसके अन्तर्गत डेविस के अनुसार, जंगलों का काटना, आग लगाना, कृत्रिम विधि से सिंचाई के साधनों का विकास, उन्नत कृषि हेतु भूमि में रासायनिक खाद, कीटनाशक दवाएं, अधिक पानी, आदि का उपयोग, पशु चराना, खदाने खोदना तथा पृथ्वी के गर्भ से बहुमूल्य खनिज प्राप्त करना, अशात या अगम्य प्रदेशों में तेजी से पातायात का विकास कर वहीं का चहुमुखी विकास करना, आदि तप्य सम्मिलित किए गए है। ऐसे व अन्य आगे के परिवर्तन भूतल पर मानव ही ला सकता है। दलदल को सुखाकर उपजाऊ मैदान बना देना, जंगलों को काटकर कृषि योग्य भूमियों में बदलना, पर्वतीय दातों पर खेती करना शुष्क भागों में नहरें बनाकर उन्हें लहलहाते खेत बना देना, आदि कार्य मानव की सफलता की कहानी कहते हैं। सभी का वातावरण के सन्तुलन से बहुत निकट से सम्बन्ध है। आज भूमि जल एवं वायु प्रदूषण के विकराल स्वरूप का कारण भौतिक पदार्थों का अवैज्ञानिक उपयोग एवं विविध उद्योगों के घातक उत्पादों एवं उप उत्पादों के साथ जुड़ा हुआ है। ऐसा प्रभाव अनेक प्रकार से भौतिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण पर प्रतिकूत प्रभाव के रूप में भी स्पष्टतः दिखायी देता है।

शरलॉक के अनुसार, ''भौतिक विश्व में परिवर्तन करने वाली शक्तियों में से जीवधारियों में मानव सबसे शक्तिशाली है। पशु चलने–फिरने तया घासफूस खाने से, कीड़े मकोड़े खाने और मिट्टी खोदने से कुछ मात्रा में परिवर्तन उत्पन्न कर देते हैं, किन्तु उनका कार्य मानव के कार्यों की तुलना में नगण्य है। मानव भी विनाशकारी शक्तियों की भांति काम करता है, वन प्रदेशों को साफ करना अथवा खदानें खोदकर भूमि में गढे बना लेना. अन्तर केवल यही है कि उसकी क्रियाएँ सर्वव्यापी न होकर चुने हुए स्थानों पर ही होती है।

निष्कर्ष :– पर्यावरण में होने वाले परिवर्तन से अथवा दूसरे पर्यावरण में अपने को उसके अनुसार बदल लेना उपयोजन या अनुकूलन कहलाता है। दूसरे शब्दों में पर्यावरण के परिवर्तनों का सामना करने के लिए शरीर में जो प्राकृतिक संशोधन होता है उसे ही समायोजन कहा जाता है। उदाहरण के लिए अधिक गर्मी का सामना करने के लिए शरीर से जो पसीना छूटता है उससे शरीर ताप सहन करने की स्थिति में हो जाता है। मानव बाह्य पर्यावरण की उन परिस्थितियों से, जो उसके कार्यों में बाधा डालती है, उपयोजन करने का प्रयास करता है और पदि इस कार्य में उसे आशातीत सफलता नहीं मिलती तो वह उसके परिवर्तन करने में लग जाता है। यदि किसी क्षेत्र विशेष में कुछ समय के लिए कृषि कार्य न किया जाए तो अनुकूल परिस्थितियों में वहाँ पास या वनों की उत्पति होना स्वाभाविक होगा। इसलिए मानत को अपने पर्यावरण से उपयोजन करने के लिए निरन्तर क्रियाशील रहना पड़ता है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि मानवता से पर्यावरण को गंभीर क्षति हुई है। पर्यावरण के नुकसान से इंसान का स्वास्थ्य हमेशा प्रभावित होता रहता है। इनमें से अधिकांश स्वास्थ्य पर्यावरण प्रदूषण से जुड़ा हुआ है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि पर्यावरण प्रदूषण की गंभीर समस्या के समाधान के लिए पर्यावरण प्रदूषण का

संपूर्ण उपयोग जुड़ा हुआ है। यदि हम संरक्षण प्रदान करते हैं और कम से कम उपयोग करते हैं तो विकराल सहायकों से बचा जा सकता है।

विनाशकारी प्रभावों को हल करने के लिए बहुत सारे नियंत्रण उपायों की आवश्यकता है क्योंकि इसका गंभीर प्रभाव पूरे मानव जीवन पर पड़ रहा है। सार्वजनिक पर्यावरण जागरूकता अभियान और पर्यावरण प्रबंधन राष्ट्रीय समुदायों द्वारा विभिन्न पर्यावरणीय जागरूकता अभियानों के प्रति जागरूकता फैलाई जा सकती है। मूल मुद्दा संपूर्ण मानव जीवन के व्यवहार और जीवन गुणवत्ता को प्रभावित करता है। इसलिए आवश्यक है कि मनुष्य अधिक से अधिक संरक्षण की नियति के साथ पर्यावरण से विवेकपूर्ण संबंध बनाए रखे।

–: सन्दर्भ :–

1. Sandipta Das and D. P. Angadi (2020). Land use-land cover (LULC) transformation and its relation with land surface temperature changes: A case study of Barrackpore Subdivision, West Bengal, India. Remote Sensing Applications: Society and Environment (Elsevier), Volume 19. https://doi.org/10.1016/j.rsase.2020.100322.

2. Sandipta Das and D. P. Angadi (2021). Assessment of urban sprawl using landscape metrics and Shannon's entropy model approach in town level of Barrackpore sub divisional region, India. Modeling Earth Systems and Environment (Springer). https://doi.org/10.1007/s40808-20-00990-9.

3. Sandipta Das and D. P. Angadi (2021). Land use land cover change detection and monitoring of urban growth using remote sensing and GIS techniques: a micro-level study. GeoJournal (Springer). https://doi.org/10.1007/s10708-020-10359-1.

4. Sandipta Das and D. P. Angadi (2020). Spatio-temporal analysis of urban functional development and its zone of Influence: A micro-level study of Barrackpore Subdivision, West Bengal. Urban India Vol 40 (II) July-December 2020. Publisher- National Institute of Urban Affairs.

डॉ0 शीबा फ़रीदी

अस्सिटेंट प्रोफेसर (भूगोल विभाग)

वाई.एम.एस. (पी.जी.) कॉलिज, मण्डी धनौरा,

जिला–अमरोहा(उ0 प्र0)

पिन कोड : 244231

मो0 नंबर : 9557513871

12

भारतीय समाज में लैंगिक असमानता

डॉ0 नाहीद परवीन

सारांश

भारतीय समाज पितृ प्रधान है। पुरुष को परिवार में सर्वोपरि माना जाता है, वंश पिता से पुत्र की दिशा में चलता है। परिवार के सबसे वृद्ध पुरुष के पास सभी निर्णय करने के अधिकार होते हैं और स्त्री की स्थिति पुरुष से हीन मानी जाती रही है। मोक्ष प्राप्ति के लिए पुत्र का जन्म महत्वपूर्ण माना जाता है पुत्री का जन्म उतना अच्छा नहीं माना जाता है जितना पुत्र का। पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण बाल–विवाह, दहेज–प्रथा, विधवा पुनर्विवाह पर रोक, महिलाओं के विरुद्ध हिंसा, पुत्र–वधु के साथ दुर्व्यवहार, बालिकाओं में अशिक्षा, लैंगिक असमानता आदि सामाजिक समस्याओं का उद्भव हुआ है। आज स्थिति इस कदर बढ़ चुकी है कि अब व्यक्ति गर्भ में पल रहे कन्या भ्रूण की हत्या से लेकर अग्नि में महिलाओं को जलाने में तनिक भी संकोच नहीं कर रहा है। सृष्टि सृजन में महिला–पुरुष दोनों का समान योग है। दोनों एक–दूसरे के पूरक हैं। दोनों ही ईश्वर की सुन्दर कृतियाँ हैं, जो इस दुनिया को मिलकर सुन्दरतम स्वरूप प्रदान करते हैं। हम लोगों की मानसिकता, सामाजिक संरचनाएं व व्यवस्थाएँ बालक–बालिका के मध्य विभेद उत्पन्न कर देती हैं।

लड़कियों के साथ जन्म के बाद से ही भेदभाव किया जाने लगता है। उसे विद्यालय से बचित कर घरेलू कार्य में लगा दिया जाता है और व्यवस्था की आड़ में विभेदीकरण का दौर शुरू हो जाता है जिसकी जड़े धीरे–धीर मजबूत होती चली जाती हैं और लिंग भेद शुरू हो जाता है।

सामान्यतः समानता के अभाव को असमानता कहा जाता है। लैंगिक असमानता से अभिप्राय हे स्त्री व पुरुष को अवसरों व अधिकारों की दृष्टि से असमान समझना अर्थात लिंग के आधार पर किये जाने वाले भेदभाव या असमानता को लैंगिक असमानता कहा जाता है। यद्यपि संबिधान द्वारा समान अधिकार दिए जाते हैं फिर भी जब व्यवहार में समाज, जाति, धर्म, लिंग या अन्य किसी कारण से हम परस्पर भेदभावपूर्ण व्यवहार करते हैं तो यह असमानता की स्थिति कहलाती है। आज भी लड़की के जन्म पर परिवारों में शोक छा जाता है और लड़कों के जन्म पर खुशी। लड़की को बोझ समझा जाता है और अनेक परिवारों में उनके खान–पान तथा शिक्षा पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता है। लड़कियों को लड़कों जैसी आजादी भी नहीं दी जाती है। गाँव व शहर में उच्च शिक्षा की व्यवस्था न होने के कारण अनेक लड़कियां शिक्षा से वंचित रह जाती हैं। अतः कहा जा सकता है की देश में बालिकाओं के पिछड़ेपन के कारणों में समाजीकरण की प्रक्रिया में व्याप्त लैंगिक भेदभाव मुख्य है।

गाँधीजी ने (बत्रा, 2012) महिलाओं की शिक्षा पर जोर देते हुए कहा है कि ''अगर पुरुष शिक्षित होता है तो वह केवल व्यक्तिगत जीवन के लिए शिक्षित होता है, लेकिन यदि महिला शिक्षित होती है तो पूरा परिवार शिक्षित माना जाता है।'' यहाँ तक कि शिक्षा को मनुष्य का तीसरा नेत्र कहा गया हे – **ज्ञानं मनुजस्य तृतीय नेत्रं**। प्राचीन काल में भारतीय मनीषियों ने **सा विद्या या विमुक्तये** कहकर शिक्षा का लक्ष्य निर्धारित कर दिया था **(पाठक, 2012)**। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य का सर्वांगीण विकास होता है और यह तभी सम्भव हे जब लड़का–लड़की दोनों को समान रूप से प्रारंभिक शिक्षा प्रदान की जाये, लेकिन वर्तमान में बालिका शिक्षा के क्षेत्र में विशेष उपलब्धि हासिल नही हो पाई है। बालिका शिक्षा की दशा सोचनीय है अतः इस स्थिति को बदलने हेतु आवश्यक उपाय करने होंगे।

लैंगिक असमानता से तात्पर्य

- लैंगिक असमानता का तात्पर्य लैंगिक आधार पर महिलाओं के साथ भेदभाव से है। परंपरागत रूप से समाज में महिलाओं को कमजोर वर्ग के रूप में देखा जाता रहा है।
- वे घर और समाज दोनों जगहों पर शोषण, अपमान और भेद–भाव से पीड़ित होती हैं। महिलाओं के खिलाफ भेदभाव दुनिया में हर जगह प्रचलित है।

भारत में लैंगिक असमानता का इतिहास History of Gender Inequality in India

- प्राचीन वैदिक सभ्यता के दौरान, महिलाओं को समाज में अत्यधिक सम्मानजनक स्थान प्राप्त था।
- वे सभाओं और समितियों का हिस्सा थे और गार्गी, लोपामुद्रा आदि जैसी बहुत ही विद्वान महिलाएँ थीं।
- मनुस्मृति भी महिलाओं का सम्मान करती है क्योंकि यह श्लोक 3. 55–3.56 में घोषित करती है कि महिलाओं को सम्मानित और सुशोभित किया जाना चाहिए और यह कि 'जहाँ महिलाओं का सम्मान किया जाता है, वहां महिलाओं का सम्मान किया जाता है। भगवान आनन्दितः लेकिन जहां वे नहीं है, कोई भी पवित्र संस्कार कोई फल नहीं देता है।
- वैश्विक लैंगिक अंतरात सूचकांक 2020 में भारत 153 देशों में 112वें स्थान पर रहा। इससे साफ तौर पर अंदाजा लगाया जा सकता है कि हमारे देश में लेगिक भेदभाव की जड़े कितनी मजबूत और गहरी

है।

- लेकिन बाद के वेदिक काल के आगमन के साथ कम उम्र में विवाह, बहुविवाह, और सभाओं और समितियों का हिस्सा बनने पर प्रतिबंध लगाने जैसी विभिन्न प्रथाओं के कारण महिलाओं की स्थिति बिगड़ने लगी।
- मध्यकाल में महिलाओं पर दहेज, सती और पर्दा प्रथा की क्रूर प्रथा थोपी गई और बहुविवाह प्रमुख हो गया। सबसे गंभीर समस्या आज भी दहेज प्रथा है. जिसने आज भी शहरी और ग्रामीण दोनों भारत में एक महिला की जान तक ले ती है।
- आधुनिक तकनीक और विज्ञान के आने से कन्या भूण हत्या आम बात हो गई है। 2001 की जनगणना के अनुसार, भारत में लिंगानुपात प्रति 1,000 पुरुषों पर 927 महिलाएं थीं। इससे पता चलता है कि भारतीय समाज में लैंगिक असमानता की जड़ें कितनी गहरी है।
- आजकल कार्यस्थल पर बलात्कार, छेड़छाड़, घरेलू हिंसा, छेडछाड और पोन उत्पीड़न महिलाओं के जीवन के लिए एक आम खतरा बन गया है। कुछ रिपोर्टों के अनुसार, हर 42 मिनट में कुछ महिलाओं का यौन शोषण होता है और हर 93 मिनट में एक महिता को दहेज के लिए जला दिया जाता है।

लैंगिक असमानता के विभिन्न क्षेत्र

सामाजिक क्षेत्र :– सामाजिक क्षेत्र में भारतीय समाज में प्रायः महिलाओं को घरेलू कार्य के ही अनुकूल माना गया है। घर में महिलाओं का मुख्य कार्य भोजन की व्यवस्था करना और बच्चों के लालन पालन तक ही सीमित है। अक्सर ऐसा देखा गया है कि घर में लिये जाने वाले निर्णयों में भी महिलाओं की कोई भूमिका नहीं रहती है। महिलाओं के मुद्दों से संबंधित विभिन्न सामाजिक संगठनों में भी महिलाओं की न्यूनतम संख्या तैलैंगिक असमानता के विकराल रूप को व्यक्त करती है।

आर्थिक क्षेत्र :– आर्थिक क्षेत्र में कार्यरत महिला और पुरुष के पारिश्रमिक में अंतर है। औद्यागिक क्षेत्र में प्रायः महिलाओं को पुरुषों के सापेक्ष कम वेतन दिया जाता है। इतना ही नहीं रोजगार के अवसरों में भी पुरुषों को ही प्राथमिकता दी जाती है।

राजनीतिक क्षेत्र :– राजनीतिक क्षेत्र में. सभी राजनीतिक दल लोकतांत्रिक होते हुए समानता का दावा करते हैं परंतु ते न तो चुनाव में महिलाओं को प्रत्याशी के रूप में टिकट देते हैं और न हीं दल के प्रमुख पदों पर उनकी नियुक्ति करते हैं।

विज्ञान के क्षेत्र :– विज्ञान के क्षेत्र में जब हम वैज्ञानिक समुदाय पर ध्यान देते हैं तो यह पाते हैं कि प्रगतिशीलता की विचारधारा पर आधारित इस समुदाय में भी स्पष्ट रूप से लैंगिक असमानता विद्यमान है। वैज्ञानिक समुदाय में पा तो महिलाओं का प्रवेश ही मुश्किल से होता है या उन्हें कम महत्त्व के प्रोजेक्ट में लगा दिया जाता है। यह विडंबना ही है कि हम मिसाइल मैन के नाम से प्रसिद्ध स्वर्गीय ए पी जे अब्दुल कलाम से तो परिक्ति है लेकिन मिसाइल बुमेन ऑफ इंडिया टेसी थॉमस के नाम से परिचित नहीं है।

मनोरंजन क्षेत्र :– मनोरजन के क्षेत्र में अभिनेत्रियों को भी इस भेदभाव का शिकार होना पड़ता है। अक्सर फिल्मों में अभिनेत्रियों को मुख्य किरदार नहीं समझा जाता और उन्हें पारिश्रमिक भी अभिनेताओं की तुलना में कम मिलता है।

खेल क्षेत्र :– खेलों में मिलने वाली पुरस्कार राशि पुरुष खिलाड़ियों की बजाय सहिता खिलाड़ियों को कम मिलती हैं। चाहे कुश्ती हो या क्रिकेट हर खेल में, भेदभाव हो रहा है। इसके साथ ही, पुरुषों के खेलों का प्रसारण भी महिलाओं के खेलों से ज्यादा है।

भारत में लैंगिक असमानता के प्रभाव Effects of Gender Inequality in India

- **घरेलू हिंसा** : लैंगिक असमानता विभिन्न रूपों में प्रकट हो सकती है और यह पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए चिंता का विषय है। भारत में लैंगिक असमानता के प्रभावों में से एक घरेलू हिंसा है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) के 2019 के आंकड़ों के अनुसार, महिलाओं के खिलाफ अपराध के सभी 4.05 लाख मामलों में से अधिकांश (30.9:) IPC की धारा 498। के तहत दर्ज किए गए हैं, जिसमें COVID–19 महामारी में अचानक वृद्धि देखी गई।
- **महिलाओं का स्वास्थ्य** : जेसा कि ऊपर चर्चा की गई है, महिलाओं के पास कोई शारीरिक विकल्प नहीं होता है और इसलिए उनका चिकित्सा स्वास्थ्य और बिगड़ जाता है। राजस्थान और हरियाणा में लिंग निर्धारण के कारण शिशु मृत्यु दर कम देखी जा रह पाती है। रही है ओर यह यह एक कारण बन गया है कि बहुत सी लड़कियां अपने 15वें जन्मदिन तक जीवित नहीं
- **लिंग निर्धारण और लिंग** : चयनात्मक गर्भपात भारत में एक अपराध है. लेकिन ऐसे कई मामले सामने आए है जहा महिलाओं को कन्या भ्रूण होने पर गर्भपात के लिए मजबूर किया जाता है।
- लैंगिक असमानता के कारण, लड़कियों को निम्न गुणवत्ता वाली शिक्षा प्राप्त होती है जो बदले में समाज में उनकी आर्थिक स्थिति को प्रभावित करती है।
- महिलाएं भी राजनीति में भाग लेने से हिचकिचाती है और इसलिए महिलाओं के खिलाफ हिंसा, बच्चों की देखभाल और मातृ स्वास्थ्य जैसे मुद्दों पर ध्यान नहीं दिया जाता है।

लैंगिक असमानता भारत पर गहरी छाया

लैंगिक असमानता, वैश्विक स्तर पर एक व्यापक चिंता, भारत पर गहरी छाया डालती है। जबकि राष्ट्र ने प्रौद्योगिकी और आर्थिक विकास जैसे विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण प्रगति की है, यह अभी भी लगातार लैंगिक असमानताओं से जूझ रहा है जो अनगिनत महिलाओं और लड़कियों के जीवन पर गहरा प्रभाव डालती है।

लिंग आधारित हिंसाः एक चौंकाने वाली वास्तविकता

लिंग आधारित हिंसा भारत के ताने–बाने में व्याप्त है, चौकाने वाले आंकड़े महिलाओं और लड़कियों के गंभीर अनुभवों को उजागर कर रहे हैं। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) ने एक परेशान करने वाली तस्वीर पेश की है, जिसमें खुलासा किया गया है कि अकेले 2019 में, महिलाओं के खिलाफ 401,413 अपराध दर्ज किए गए, जिनमें बलात्कार, घरेलू हिंसा और दहेज से संबंधित मोतें जैसी श्रेणिया शामिल थीं। आश्चर्यजनक रूप से, यह गंभीर आंकड़ा हर 1.4 मिनट में लिंग आधारित हिंसा के एक मामले की सूचना देता है। बलात्कार के भयावह दायरे पर ध्यान केंद्रित करते हुए, इस घृणित अपराध के कारण उस वर्ष के भीतर 32,033 घटनाएं हुई। इसके अलावा, एनसीआरबी ने 2018 से 2019 तक महिलाओं के खिलाफ अपराधों में 7.3 प्रतिशत की चिंताजनक वृद्धि दर्ज की है।

स्वास्थ्य देखभाल तक पहुंचरू एक सतत् चुनौती

गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य देखभाल तक पहुंच अभी भी न्यायसंगत नहीं है, महिलाओं को अक्सर निम्न स्तर का चिकित्सा ध्यान मिलता है। जबकि मातृ मृत्यु दर में गिरावट आई है, वे अपेक्षाकृत उच्च बनी हुई हैं, प्रति 100,000 जीवित जन्मों पट लगभग 174 मातृ मृत्यु होती है।

लैंगिक असमानता के हेतु कानूनी और संवैधानिक सुरक्षा उपाय

संवैधानिक सुरक्षा उपाय :

भारतीय संविधान लैंगिक असमानता को समाप्त करने के लिए सकारात्मक प्रयास प्रदान करता है। संविधान की प्रस्तावना सभी को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय प्राप्त करने और अपने सभी नागरिकों को स्थिति और अवसर की समानता प्रदान करने के लक्ष्यों के बारे में बात करती है।

संविधान का अनुच्छेद 15 धर्म, मूलवंश, जाति या जन्म स्थान जैसे अन्य आधारों के अलावा लिंग के आधार पर भी भेदभाव के निषेध का प्रावधान करता है। अनुच्छेद 15(3) राज्य को महिलाओं और बच्चों के लिए कोई विशेष प्रावधान करने का अधिकार देता है।

कानूनी सुरक्षा उपाय :–

महिलाओं के शोषण को समाप्त करने और उन्हें समाज में समान दर्जा देने के लिए संसद द्वारा विभिन्न सुरक्षात्मक कानून भी पारित किए गए हैं।

सती प्रथा को समाप्त करने और दंडनीय बनाने के लिए सती (रोकथाम) अधिनियम, 1987 अधिनियमित किया गया था।

दहेज प्रथा को समाप्त करने के लिए दहेज निषेध अधिनियम, 19611

अंतर्जातीय या अंतर–धर्म से विवाह करने वाले विवाहित जोड़ों को सही दर्जा देने के लिए विशेष विवाह अधिनियम, 1954

प्री–नेटल डायग्नोस्टिक तकनीक (विनियमन और दुरुपयोग की रोकथाम) विधेयक (1991 में संसद में पेश किया गया,

1994 में कन्या भ्रूण हत्या और ऐसे कई अन्य अधिनियमों को रोकने के लिए पारित किया गया।

भारतीय दंड संहिता, 1860 में धारा 304–बी जोड़ी गई थी ताकि दहेज–मृत्यु या दुल्हन को जलाने को एक विशिष्ट अपराध बनाया जा सके और अधिकतम आजीवन कारावास की सजा दी जा सके। राज्य के नीति निदेशक तत्व भी विभिन्न प्रावधान प्रदान करते हैं जो महिलाओं के लाभ के लिए हैं और भेदभाव के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करते हैं।

<u>असमानता को समाप्त करने के प्रयास</u> :–

- समाज की मानसिकता में धीरे–धीर परिवर्तन आ रहा है जिसके परिणामस्वरूप महिलाओं से संबंधित मुद्दों पर गंभीरता से विमर्श किया जा रहा है। तीन तलाक, हाजी अली दरगाह में प्रवेश जैसे मुद्दों पर सरकार तथा न्यायालय की सक्रियता के कारण महिलाओं को उनका अधिकार प्रदान किया जा रहा है।
- राजनीतिक प्रतिभाग के क्षेत्र में भारत लगातार अच्छा प्रयास कर रहा है इसी के परिणामस्वरुप वैश्विक लैंगिक अंतरात सूचकांक 2020 के राजनीतिक सशक्तीकरण और भागीदारी मानक पर अन्य बिंदुओं की अपेक्षा भारत को 18वाँ स्थान प्राप्त हुआ। मंत्रिमंडल में महिलाओं की भागीदारी पहले से बढ़कर 23 प्रतिशत हो गई है तथा इसमें भारत, विश्व में 69वें स्थान पर है।
- बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओं, वन स्टॉप सेंटर योजना, महिला हेल्पलाइन योजना और महिला शक्ति केंद्र जैसी योजनाओं के माध्यम से महिला सशक्तीकरण का प्रयास किया जा रहा है। इन योजनाओं के क्रियान्वयन के परिणामस्वरूप लिंगानुपात और तड़कियों के शैक्षिक नामांकन में प्रगति देखी जा रही है।

निष्कर्ष :–

पुरुषों और महिलाओं का सामाजिक सीमांकन संभवतः लिंग भेदभाव की प्रज्वलित शक्ति है। सभी लिगों के प्रति सही मानसिकता और दृष्टिकोण रखना व्यक्तियों और बड़े पैमाने पर राष्ट्र के विकास के लिए बेहद महत्वपूर्ण है। भारत को आजादी मिले सात दशक से भी अधिक समय हो गया है। हालाँकि, कुछ रिक्तियाँ अभी भी राष्ट्र के सामाजिक विकास में बाधक हैं। भारत में लैंगिक भेदभाव एक ऐसा बड़ा शून्य है जिसे सभी के लिए अच्छी आशाओं

सकाराकमकता और समान अवसरों से भरने की जरूरत है। इस प्रकार राष्ट्र का भविष्य युवाओं के हाथों में है, जो पहले से मौजूद मानदंडों को तोड़कर और दुनिया भर में सकारात्मकता फैलाकर समाज में योगदान दे सकते हैं।

भारत में लैंगिक असमानता एक बहुआयामी ओर सामाजिक मानदंडों ओर पूर्वाग्रहों से भरा मुद्दा है। इन भयावह अंतरालों को पाटने के सराहनीय प्रयासों के बावजूद, आँकड़े स्पष्ट रूप से याद दिलाते हैं कि अभी भी पर्याप्त काम बाकी है। लैंगिक समानता हासिल करने का प्रयास एक सामूहिक प्रयास है जिसमें नीतिगत सुधार, शैक्षिक पहल और सामाजिक दृष्टिकोण में बदलाव शामिल होना चाहिए। महिलाओं और लड़कियों को सशक्त बनाना सिर्फ मानवाधिकार का मामला नहीं है बल्कि भारत के सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए एक अनिवार्य उत्प्रेरक है। इन चुनौतियों का डटकर मुकाबला करना ही देश और उसके लोगों के लिए अधिक न्यायसंगत भविष्य को बढ़ावा देने का एकमात्र रास्ता है।

–: संदर्भ :–

1- BENEVOT, A- 1989- `Education] Gender] and Economic Development : A Cross & National Study'- Sociology of Education 62 : 14 & 32.

2- BLUMBERG, R.L. 1988. `Income under Female versus Male Control'. Journal of Family Issues: 51 & 84

3- Misra, Udit- 2015- " How India Ranks on Gender Parity &and Why? " Indian Express- November 4.

4- Nair, Shalini- 2015- "More Gender Inequality in India than Pakistan and Bangladesh : UN "- Indian Express- December 15-

5- Lal, Neeta- 2016- India Needs to " Save its Daughters " Through Education and Gender Equality- Inter Press Services, March 4-

6- Masoodi, Ashwaq- 2016- " Budget 2016/Mixed bag for women "- Livemint, 6 th March

7- Gandhi, Rajat- 2015- " Women in Business : Can P2P Lending Bridge Gender Gap in Access to Capital "- The Times of India- June 19.

डॉ0 नाहीद परवीन
अस्सिटेंट प्रोफेसर (समाजशास्त्र विभाग)
वाई.एम.एस. (पी.जी.) कॉलिज, मण्डी धनौरा, जिला–अमरोहा
पिन कोड : 244231
मोबाइल नंबर : 9528415168

13

जल संसाधनों का कृषि विकास व सिंचाई नियोजन का भौगोलिक विश्लेषण

डॉ0 अरविन्द कुमार सिंह

सारांश

भूगोल विषय का उद्देश्य निश्चित चिन्तन द्वारा ऐसी क्षमता अथवा विधि के विकास करने का मार्ग प्रशस्त करना है जिससे मानव समाज के लाभार्थ आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा दृश्य भूमि के विकास के उपयोग से उत्पन्न होने वाली विभिन्न समस्याओं के हल करने के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सार्थक पहल की जा सके। क्योंकि इसी के साथ 'मानव कल्याण' का लक्ष्य जुड़ा है। वर्तमान में सभी विद्वानों ने भी इसी लक्ष्य को सर्वोपरि माना है। विविध प्रकार की समस्याओं के निराकरण हेतु पर्यवेक्षण विधितन्त्र तकनीकी, शोध एवं साधन आदि के लक्षण भिन्न–भिन्न प्रकार से उपस्थित हो सकते है। अतः विभिन्न समस्याओं का समीचीन समाधान तलाशने का ईमानदारी के साथ प्रयास करना अत्यावाश्यक है।

मानव सभ्यता का अभ्युदय एवं विकास संसाधनों की उपलब्धता का ही प्रतिफल है। मानव के विकास की आदिम अवस्था से लेकर वर्तमान धातु युग तक का सामाजिक एवं आर्थिक विकास संसाधनों की प्राप्ति एवं विकास पर ही निर्भर रहा है। विश्व के सभी क्षेत्रों में संसाधनों की प्राप्यता एवं उपयोगिता क्षेत्र, काल एवं परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। यही कारण है कि विश्व के सभी भागों में मिलने वाले आर्थिक भूदृश्य में अन्तर परिलक्षित होता है। यह कहना भी अतिशयोक्ति पूर्ण न होगा कि किसी क्षेत्र का आर्थिक विकास उस क्षेत्र की संसाधन संम्भाव्यता पर निर्भर करता है।

प्रस्तावना :–

भूगोल के अन्तर्गत सामान्यतः भूमि का विश्लेषण, कृषि के विकास के लिये आवश्यक भौगोलिक कारकों एवं परिस्थितियों के साथ–साथ फसलों के प्रतिरूप, कृषि उत्पादकता, जलीय संसाधनों के विकास एवं उनकी उपलब्धता का सामयिक अध्ययन आदि, तथा कृषि के प्रादेशिक वितरण को भी सम्मिलित करते है।

प्राकृतिक संसाधनों में जल एक महत्वपूर्ण संसाधन है और यह सभी जीवधारियों के लिये आधारभूत आवश्यकता है पृथ्वी पर मानव का अस्तित्व भी जल के कारण ही है। 'जल' वास्तवमें एक अमूल्य संसाधन है। जिसके बिना वनस्पति, जीव एवं वातावरण की अनेक क्रियाएँ सम्भव नहीं है। मानव समुदाय तथा वातावरण को अनेक क्रियाऐं जल स्रोतों पर केन्द्रित रहती हैं। पेय जल आपूर्ति, प्राकृतिक वनस्पति के जन्म एवं विकास, मृदा निर्माण, जलवायु, सिंचाई, खनिज विदोहन, औद्योगिक विकास परिवहन एवं व्यापार ऊर्जा विकास, भोज्य पदार्थों के वितरण आदि के लिये जल संसाधनों की पर्याप्त उपलब्धता आवश्यक है।

किसी क्षेत्र विशेष में घरेलू तथा आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति जल संसाधनों की उपलब्धता, मात्रा, पर्याप्तता, निरन्तरता और उसके (जल) गुणों पर निर्भर करती हैं। सामान्यतः जल आपूर्ति वर्षा के वितरण से प्रभावित होती है। परन्तु महासागर, सागर, झील, तालाब, नदियों, कुऐं, स्रोत आदि भी क्षेत्र की जल उपलब्धता को प्रभावित करते हैं।

स्थिति के आधार पर जल संसाधन को दो वर्गों– '**धरातलीय जल** तथा **भूमिगत जल**' में विभाजित किया जाता है, प्राकृतिक उपहारों में मानव के लिये जल की उपयोगिता निःसन्देह एक वरदान है, जब–जब मानव ने अपनी घरेलू एवं आर्थिक आवश्यकताओं की आपूर्ति हेतु इस निःशुल्क उपहार का अविवेकी तथा मनमानेपन से दोहन किया है जल की प्राप्यता के संकट ने न केवल मानव को विचलित कर दिया है अपितु जल के गुणों में परिवर्तन, जल प्रदूषण, भूमिगत जल स्तर में गिरावट, खाद्यान्न संकट, बाढ़, वनों के विनाश जलछट जमाव, भूमि अपरदन जैसी समस्याओं की भयावहता में वृद्धि हुई है। दूसरे शब्दों में आज मानव पर्यावरण असन्तुलन एवं 'पारिस्थितिकी संकट' का सामना कर रहा है। अतः निःसंदेह युद्ध स्तर पर जल संसाधनों के संरक्षण की महती आवश्यकता है।

कृषि को नियन्त्रित करने वाले कारक

मानव की समस्त क्रियाएँ उसके भौतिक पर्यावरण पर निर्भर करती है। जिसमें वह निवास करता है। प्रकृति मानव के विकास के लिए विभिन्न क्षेत्रों में विविध प्रकार की सम्भावनाएँ प्रदान करती है। पर्यावरण के भौतिक या प्राकृतिक कारक कृषि कार्य को अत्याधिक प्रभावित करते हैं। मैकहार्ग के अनुसार, ''प्रकृति सीमायें निर्धारित करती है, दिशा निर्देश देती है, तथा पर्यावरणीय समस्याएँ सुलझाने में सहायता प्रदान करती हैं।'' किसी भी क्षेत्र की कृषि का विकास वहाँ के प्राकृतिक पर्यावरण के अन्तर्गत ही उगती है तथा विकसित होती हैं, यही कारण है कि प्राचीन काल में कृषि का विकास उन्हीं स्थानों पर अधिक हुआ जहाँ फसलोत्पादन तथा पशुपालन के लिए उपयुक्त प्राकृतिक दशाएँ उपलब्ध थीं। अतएव कृषीय परिघटनाओं की वैज्ञानिक जानकारी के लिए प्राकृतिक पर्यावरण तथा कृषीय संक्रियाओं के परस्पर सम्बन्धों को समझना अभीष्ट है। वस्तुतः कृषि की दृष्टि से एक अपरिहार्य उपकरण है।

(क)प्राकृतिक कारक–

कृषि के अन्तर्गत फसलॉत्पादन एवं पशुपालन दोनों ही सम्मिलित हैं। यह एक सार्वभौम तथ्य है कि कृषि भूमि उपयोग के अनेक आधुनिक प्रतिरूप विगत मानवीय क्रियाओं तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की सहायता से भौतिक दशाओं में किये गये परिवर्तनों के प्रतिफल हैं तथापि कृषि को प्रभावित करने वालें मूलभूत भौतिक कारक धरातल, जलवायु, मिट्टियाँ, जल संसाधन तथा वनाच्छादित है। जो परस्पर घनिष्ट रूप से सम्बन्धित होते हैं। जलवायु, समुद्र तल से ऊँचाई तथा ढ़ालों से प्रभावित होती है तथा मिट्टियाँ वाष्पोत्सर्जन से, तथापि कृषि स्वरूपों तथाउनकी स्थापिक भिन्नताओं में इन कारकों की एकांकी या सामूहिक भूमिका को कम करके नहीं आँकना चाहिए।

(ख) धरातलीय कारक–

धरातलीय कारकों के अन्तर्गत सापेक्ष उच्चावच, सामान्य ढाल तथा विच्छेदन का निर्धारण सम्मिलित है। इन कारकों की प्रादेशिक भिन्नताओं की तीव्रता का मात्रात्मक वर्जन भूमि उपयोग के विश्लेषण को पुष्ट करता है। पृथ्वी के धरातल पर तीन प्रमुख प्रकार के स्थल रूप–पर्वत, पठार एवं मैदान दृष्टिगोचर होते हैं। वस्तुतः धरातल भूमि उपयोग तथा फसलों की उत्पत्ति एवं वितरण को प्रभावित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण कारक है। धरातल के तीन प्रमुख पक्ष–समुद्र तल से ऊँचाई, ढाल तथा अपवाह प्रतिरूप कृषि भूमि उपयोग को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष दोनों रूपों से प्रभावित करते हैं। ऊँचाई, विषम उच्चावच तथा ढाल प्रत्यक्ष रूप से कृषि पर प्रभाव डालते हैं। ये तीनों कारक कृषि की तीव्रता, यन्त्रीकरण अभिगम्यता तथा निम्न क्षेत्रों में बाढ़ को निर्धारित करते हैं। इन कारकों का परोक्ष प्रभाव जलवायु में संशोधन तथा उसमें उत्पन्न मृदा अपरदन के रूप में दर्शनीय है।

शोध क्षेत्र जनपद अमरोहा गंगा, युमना के विशाल मैदान में पश्चिमी उत्तर प्रदेश में स्थित है। इसलिए शोध क्षेत्र का अधिकतर भाग समतल है लेकिन कहीं–कहीं पर ऊँचे–ऊँचे ढीले स्थित हैं। धीरे–धीरे ऊँचे–ऊँचे ढीले भी समाप्त होते जा रहे हैं। गंगा नदी शोध क्षेत्र की प्रमुख नदी है। इस नदी ने शोध क्षेत्र के समस्त भाग को काटकर या अपरदित या निक्षेप की क्रिया से समतल कर दिया है। नदी की इन क्रियाओं के प्रभावी होने के कारण यहां विशेष प्रकार की मिट्टियाँ पायी जाती हैं जो कृषि के विकास में सहायक होती हैं।

(ख) मिट्टियाँ एवं उनकी उर्वरक क्षमता–

मृदा कृषि कार्य के लिये भौतिक आधार बनाती है। गठन संरचना, लवणों तथा ह्यूमस के उचित संयोजन से समृद्ध मृदाएँ उत्तम परिणाम प्रदान करती है। कृषि भूगोलवेत्ताओं के लिए मिट्टियों की भौतिक तथा रासायनिक बनावट कीजानकारी आवश्यक है क्योंकि मिट्टियाँ खाद्यान्नों, रेशों, फलोत्पादों एवं फूलों आदि फसलों के प्रकारों को प्रभावित करती है। मिट्टियाँ कृषि के लिए आवश्यक पदार्थ प्रदान करती हैं।

विनिर्माण क्षेत्र में तीव्र प्रगति के बावजूद कृषि ही विश्व का सबसे महत्वपूर्ण प्राथमिक व्यवसाय है। मिट्टियों के गठन, गहराई, ढाल, अपवाह तथा उर्वरता की भिन्नताएँ मिट्टियों के अध्ययन को भौगोलिक रूप से महत्वपूर्ण बनाती है। मिट्टियाँ मोटे तौर पर भूमि उपयोग को रेखांकित करती है तथा कृषि कार्यों को सीमित करती है। आर्द्र क्षेत्रों की मिट्टियाँ अत्याधिक निक्षालन क्रिया के कारण अधिकांशतः निकृष्ट ही हैं। आर्द्धशुष्क तथा शुष्क जलवायवीय दशाओं में उनकी निकृष्टता लवणों की परतें जमने के कारण होती हैं। जबकि निर्वाहक खाद्यान्न कृषि के अन्तर्गत वे फसलों के हेरफेर के अभाव में निकृष्ट होती हैं। भारी वर्षा के क्षेत्रों में निक्षालन द्वारा पोंषक तत्वों की क्षतिपूर्ति चना तथा उर्वरकों के भारी मात्रा में निवेश द्वारा की जा सकती है, किन्तु इससे लघु तथा सीमान्त कृषकों पर आर्थिक बोझ बढ़ता है। अत्यधिक जनसंख्या दबाव, दोषपूर्ण कृषि पद्धतियों तथा मिट्टियों के अत्याधिक शोषण के कारण परिणाम स्वरूप मिट्टियों की उर्वरता में हास होता है। जिससे कृषीय उत्पादकता घटती है। अतएव सावधानीपर्दूक मिट्टी प्रबन्धन की बहुत आवश्यकता हैं कृषि के लिए मिट्टियों के उचित उपयोग सुनिश्चित करने हेतु उनके सामार्थ्य की जानकारी आवश्यक है हल्की मिट्टियों में खेती करना आसान होता है, किन्तु उनमें जैविक पोषक तत्वों की न्यून्ता तथा नमी की कमी होती है। इसके विपरीत भारी मिट्टियों में कृषि कार्य करना महंगा पड़ता है तथा उनकी खेती में हल्की मिट्टियों की तुलना में अधिक जोखिम रहता हैं।

जनपद की अर्थव्यवस्था मूलतः कृषि पर आधारित है। वर्ष 2022 की गणना के आंकड़ों के आधार पर जनपद की कुल जनसख्या 14.99 लाख में से 1.94 लाख कृषक तथा 0.47 लाख कृषि श्रमिक थे जो दोनों मिलकर कर्मकरों का 63.05 प्रतिशत है जिसका व्यवसाय कृषि है।राजस्व विभाग के वर्ष 2021–2022 के आंकड़ों के आधार पर जनपद की भूमि उपयोगिता निम्न प्रकार है–

तालिका सं० – 1.4

जनपद में भूमि की उपयोगिता

क्र. स.	मद	क्षेत्रफल (हजार हे० में)	जनपद की कुल भूमि से प्रतिशतता
1	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	216879	100.00
2	वन क्षेत्र	21340	9.8
3	कृषि योग्य बंजर भूमि	974	0.45
4	वर्तमान परती	2950	1.4
5	अन्य परती	1218	0.56
6	ऊसर एवं कृषि के अयोग्य भूमि	1054	0.49
7	कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लाई गई भूमि	16904	7.79
8	चारागाह	196	0.09
9	उद्यान एवं वृक्षों के अन्तर्गत क्षेत्र	293	0.12
10	शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	171977	79.3
11	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्रफल	85375	39.4
12	फसल सघनता	149.6	–

स्रोतः सामाजार्थिक समीक्षा 2022 जनपद अमरोहा

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र में जल संसाधनों का कृषि विकास पर प्रभाव, समस्याएँ एवं नियोजन से तात्पर्य यह है कि जल संसाधनों का कृषि विकास पर कितना प्रभाव पड़ा तथा कृषि क्षेत्र में कितनी उन्नति हुई शोधकर्ता ने जलसंसाधनों के साथ अध्ययन क्षेत्र का भौतिक स्वरूप, आर्थिक स्वरूप तथा सांस्कृतिक स्वरूप का भी अध्ययन किया है क्योंकि उनके बिना किसी भी समाज की उन्नति असम्भव है जल संसाधनों के मूल्यांकन एवं जल की गुणवत्ता को सर्वोपरि रखा है जिसमें जल आपूर्ति के स्रोतों के साथ–साथ भौतिक जल गुणवत्ता

तथा रासायनिक जल गुणवत्ता का भी सूक्ष्मता से अध्ययन किया है तथा अध्ययन से सामने आया कि जनपद में लगभग सभी स्थानों पर जल रंगहीन, गंधहीन तथा स्वादहीन है जिससे पता चलता है कि लगभग सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र का जल पीने योग्य है। प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र के जल संसाधन उपयोगिता का भी सूक्ष्मता से अध्ययन किया गया है जिसमें सिंचाई पशुपालन, घरेलू तथा नगरीय, औद्योगिक, जल विद्युत तथा मनोरंजन में जल के उपयोग का गहनता से अध्ययन किया गया है जिससे स्पष्ट होता है कि जनपद में पर्याप्त मात्रा में जल उपलब्ध है प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र के कृषि विकास का भी गहनता से अध्ययन किया गया है। जिसमें प्राचीन काल, मध्यकाल तथा आधुनिक काल तक का अध्ययन किया तथा प्रयास रहा है कि अध्ययन में पारदर्शिता तथा विश्वसनीतया बनी रहे अध्ययन क्षेत्र के जल संसाधनों का कृषि विकास पर प्रभाव, को विशेष महत्व दिया गया है जिसमें कृषि विकास पर सिंचाई का प्रभाव, कृषि भूमि उपयोग, फसल प्रतिरूप में परिवर्तन, कृषि उत्पादकता में परिवर्तन कृषि फसलों की गुणवत्ता में परिवर्तन तथा सिंचित क्षेत्र में परिवर्तन को विशेष स्थान दिया गया है। उक्त बिन्दु एक दूसरे पर निर्भर तथा पूरक है। इनके बिना कृषि विकास अधूरा है। इन सभी के साथ–साथ अध्ययन क्षेत्र में कुछ समस्यायें भी है।

संदर्भ

1. क्यूनेन, पी. एच. (1956), रियलम्स ऑफ वाटर, पृ0 19
2. नेगी, बी. एस. (1972), संसाधन भूगोल, पृ0 129–130
3. कौशिक, एस. डी. (1995), संसाधन भूगोल, पृ0 597
4. कौशिक, एस. डी. (1995), संसाधन भूगोल, पृ0 598
5. चौधरी, सुषमा (2002), जल संसाधन एवं प्रादेशिक नियोजन, पृ0 7
6. नेगी, पी. एच. (1998), पारिस्थितिकीय विकास एवं पर्यावरण भूगोल पृ0 46
7. सिंह, ब्रजभूषण (1979), कृषि भूगोल, पृ0 2
8. Development Report (1995),P- 11.Published in UN.D.P.
9. सिंह, काशीनाथ एवं सिंह, जगदीश (1980), आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, पृ0 136
10. रानी, अलका (1993), जनपद बिजनौर में सिंचाई एवं कृषि विकास का भौगोलिक विश्लेषण।
11. पाठक, गणेश कुमार (2004) जल संसाधनों का दुरुपयोग और बचाव के उपायकुरुक्षेत्र जून, पृ0 7
12. जगनारायण, मधु ज्योत्सना (2004) : ''भारत में बढ़ता जल संकट'' कुरुक्षेत्र जून, पृ०15
13. लखेड़ा, एस.के. और ध्यानी, संजय ''स्वच्छ पेयजल का सपना कब होगा साकार'' कुरुक्षेत्र, जून 2004, पृ0 18
14. डोगरा, बी. एवं भारती, आर. (2004) "परम्परागत जल स्रोतों का महत्व'' कुरूक्षेत्र, पृ०22
15. साहू, विमला (2004) ''जल प्रबंधन एवं समाज का उत्तरदायित्व'' कुरुक्षेत्र, पृ0 22
16. अग्रवाल, पू.सी. (2006) ''ग्रामीण क्षेत्र में शुद्ध पेयजल आपूर्ति के प्रयास'' कुरुक्षेत्र मार्च, पृ0 26
17. सिन्हा, आर. के. (2006) ''भूमि तथा जलोपलब्धता, समस्याऐं एवं समाधान'' कुरूक्षेत्र, मार्च, पृ0 31
18. मोदी, अनिता (2006), ''बढ़ता जल–संकट''कुरूक्षेत्र मार्च, पृ० 33
19. कन्नौज, एस. आर. (2006) ''राजीव गाँधी जल ग्रहण क्षेत्र प्रबन्धन मिशन'' कुरूक्षेत्र, मार्च, पृ0 35
20. मालवीय, जे. (2006), ''जल संरक्षण की अनूठी मिसाल'' कुरूक्षेत्र, मार्च, पृ0 36
21. सिंह मनमोहन (2007), ''पेयजल और स्वच्छता मुद्दे योजना'', सितम्बर, पृ0 7
22. पंगारे, बी. एवं पंगारे, जी. (2007). ''जल के आविष्कार का क्रियान्वयन'' योजनासितम्बर, पृ0 8
23. पांडुरंगी, ए. (2007), "जल क्या वास्तव में सामाजिक वस्तु है?योजना, सितम्बरपृष्ठ–11
24. अभिजात, ए. (2007), ''एक तालाब का कायाकल्प'' योजना सितम्बर
25. मिश्रा, एस.पी. (2007), "जल संसाधन प्रबन्धन एवं सरंक्षण'', आविष्कार पब्लिशर्सडिस्ट्रीब्यूटर्स जयपुर (राजस्थान)
26. रुहेलखण्ड भौगोलिक शोध पत्रिका, जुलाई (2012) अंक X11 पृ0 196
27. सिंह, ब्रजभूषण (1994), कृषि भूगोल गोरखपुर पृष्ठ 60

पता

Dr. Arvind Kumar Singh
Moh. Heera Nagar, Thana Road,
Bheind Sarswati Vidhya Mandir,
Dhanaura, Dist. Amroha (UP)
PIN - 244231
MOB. NO. 9759230260

14

''झारखण्ड में विज्ञान एंव तकनीकी के क्षेत्र में अनुसंधानः पहल, चुनौतियाँ एवं सम्भावनाएँ''

प्रो0 (डॉ0) तपन कुमार शांडिल्य कुलपति

सारांश

प्रभूत प्राकृतिक संसाधनों एवं विपुल तथा जीवन्त मानव संसाधन से युक्त झारखण्ड राज्य में विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में अनुसन्धान की असीम सम्भावनाएं हैं। राज्य सरकार, शैक्षणिक संस्थानों और विभिन्न हितधारकों ने आर्थिक विकास को गति देने, सामाजिक चुनौतियों का समाधान करने और झारखण्ड को नवाचार के क्षेत्र में अग्रणी बनाने में अनुसन्धान की महत्त्वपूर्ण भूमिका को पहचाना है– इस विषय में कोई सन्देह नहीं है। विज्ञान एवं तकनीक के क्षेत्र में अनुसन्धान किया जाना तो अपेक्षित है ही, विज्ञानेतर विषयों में अनुसन्धान के लिए भी विज्ञान और तकनीक के उपयोग की आवश्यकता है।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अनुसन्धान को प्रोत्साहित करने के निमित राज्य में झारखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् तथा झारखण्ड सूचना प्रौद्योगिकी संवर्धन एजेंसी[1] की स्थापना की गई है जो वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति के लिए एक सक्षम वातावरण बनाने में अपनी भूमिका निभा रहे हैं। मुख्यमन्त्री फेलोशिप कार्यक्रम युवा शोधकर्ताओं को वित्तीय सहायता और मार्गदर्शन प्रदान करके प्रभावशाली परियोजनाओं पर काम करने के लिए प्रोत्साहित कर रहा है। इसके अतिरिक्त, मुख्यमंत्री विज्ञान प्रशिक्षण योजना विज्ञान और प्रौद्योगिकी में कौशल विकास की सुविधा प्रदान करती है। विश्वविद्यालयीय शिक्षकों को शोधपरियोजनार्थ वित्तीय अनुदान अनुसन्धान को प्रोत्साहित करने के लिए लिए सराहनीय कदम है।

झारखण्ड में कई शैक्षणिक और अनुसन्धान संस्थान हैं जो राज्य के अनुसन्धान पारिस्थितिकी तंत्र के लिए आधारस्तम्भ का कार्य करते हैं। सामान्य विश्वविद्यालयों के अतिरिक्त इंडियन स्कूल ऑफ माइंस, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ फाउंड्री एंड फोर्ड टेक्नोलॉजी, बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, भारतीय वन उत्पादकता संस्थान, केन्द्रीय तसर अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण संस्थान, भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान जैसे संस्थान अनुसन्धान के क्षेत्र में उत्कृष्टता को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। यह सही है कि सीमित अनुसंधान नीधि, आधारभूत संरचना की कमी तथा कुशल मानवसंसाधन के कारण अनुसन्धान के क्षेत्र में चुनौतियों हैं। परन्तु सरकार, निजी क्षेत्र तथा शैक्षणिक एवं अनुसन्धान संस्थानों के बीच सहयोगात्मक प्रयास आधारभूतसंरचना की कमी को दूर कर सकते हैं, जबकि कौशल विकास की पहल जनशक्ति को उत्कृष्टता प्रदान कर सकती है।

झारखण्ड की समृद्ध जैव विविधता और अद्वितीय सामाजिक–सांस्कृतिक पक्ष अन्तर्विषयक अनुसन्धान के अवसर प्रदान करते हैं। ऐसी परियोजनाएँ जो पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों को आधुनिक वैज्ञानिक तरीकों के साथ एकीकृत करती हैं, मूल्यवान अंतर्दृष्टि और समाधान प्रदान कर सकती हैं जो सांस्कृतिक रूप से प्रासंगिक और वैज्ञानिक दोनों रूप से मजबूत हैं।

झारखण्ड के आदिवासी समुदायों के पास कृषि, वानिकी और औषधीय पौधों से संबंधित स्वदेशी ज्ञान का भण्डार है। इस पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक वैज्ञानिक अनुसन्धान के साथ एकीकृत करने से टिकाऊ और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील समाधान प्राप्त हो सकते हैं।

शोध निष्कर्षों को व्यावहारिक समाधानों में बदलने के लिए उद्यमिता और नवाचार की संस्कृति को बढ़ावा देने की बड़ी आवश्यकता है। झारखण्ड में हाल के वर्षों में स्टार्टअप और इनक्यूबेटर का उदय हुआ है, जो अनुप्रयुक्त अनुसन्धान और प्रौद्योगिकी संचालित उद्यमों पर बढ़ते जोर का संकेत देता है। शैक्षणिक संस्थानों और सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग के बीच सहयोग से सॉफ्टवेयर विकास, कृत्रिम बुद्धिमता और डेटा प्रबंधन में नवाचार हो सकते हैं। प्रतिभा को आकर्षित करने और उच्च प्रभाव वाले अनुसन्धान को बढ़ावा देने के लिए अत्याधुनिक प्रयोगशालाओं, अनुसन्धान केंद्रों और प्रौद्योगिकी पार्कों में निवेश, अनुसन्धान के लिए अनुकूल पारिस्थितिकी तंत्र बनाने में योगदान दे सकता है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी में अनुसन्धान को बढ़ावा देने के लिए समावेशी शैक्षिक पहल की आवश्यकता है जो राज्य के हर कोने तक पहुंचे। आउटरीच कार्यक्रम, विज्ञान मेले और मोबाइल विज्ञान प्रयोगशालाएं दूरदराज के क्षेत्रों में छात्रों के बीच अनुसन्धान में जिज्ञासा और रुचि जगा सकती हैं। राज्य भर में अनुसन्धान केंद्रों और अध्ययन केंद्रों का एक नेटवर्क बनाने से अनुसन्धान गतिविधियों के विकेंद्रीकरण को बढ़ावा मिल सकता है। यह दृष्टिकोण न केवल क्षेत्रीय विकास को सुविधाजनक बनाता है बल्कि यह भी सुनिश्चित करता है कि अनुसन्धान के लाभ आबादी के व्यापक वर्ग तक पहुंचे।

झारखण्ड में विज्ञान और प्रौद्योगिकी में अनुसन्धान को बढ़ावा देने का एक महत्त्वपूर्ण पहलू अनुसन्धान संस्थानों और उद्योगों के बीच मजबूत संबंधों को बढ़ावा देना है। उद्योगों के साथ सहयोग यह सुनिश्चित करता है कि अनुसन्धान व्यावहारिक आवश्यकताओं के अनुरूप है, जिससे ऐसे नवाचारों को बढ़ावा मिलता है जिनका वास्तविक दुनिया में अनुप्रयोग होता है। संयुक्त अनुसन्धान परियोजनाएं, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण कार्यक्रम और उद्योग–प्रायोजित अनुसन्धान जैसी पहल इस एकीकरण में योगदान करती हैं। जैसे–जैसे विज्ञान और

प्रौद्योगिकी का परिदृष्य विकसित हो रहा है, एक कुशल और अनुकूल कार्यबल सुनिश्चित करना समय की आवश्यकता है।

मुख्य रूप से कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था को देखते हुए, झारखण्ड के सतत विकास के लिए कृषि में अनुसन्धान सर्वोपरि है। वैज्ञानिक हस्तक्षेपों के माध्यम से पानी की कमी, मिट्टी की उत्कृष्टता और फसल उत्पादकता जैसी चुनौतियों का समाधान ग्रामीण समुदायों के जीवन पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकता है। कृषकों, शोधकर्ताओं और नीति निर्माताओं से जुड़े सहयोगात्मक प्रयास ग्रामीण विकास के लिए एक समग्र दृष्टिकोण बना सकते हैं, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि अनुसन्धान परिणामों से आजीविका में ठोस सुधार हो।

झारखण्ड को विशेष रूप से कुछ क्षेत्रों में पानी की कमी से संबंधित चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। सतत विकास के लिए जल संसाधन प्रबंधन में अनुसन्धान आवश्यक है। जल संचयन, वाटरशेड प्रबंधन और कुशल सिंचाई प्रथाओं के लिए नवीन तकनीकों की खोज से कृषि और आजीविका पर पानी की कमी के प्रभाव को कम किया जा सकता है। अनुसन्धान संस्थान जल प्रबंधन प्राधिकरणों के सहयोग से, मजबूत जल संरक्षण रणनीतियों के विकास में योगदान दे सकते हैं। सार्वजनिक–निजी भागीदारी (पीपीपी) को प्रोत्साहित करना अनुसन्धान पहल के लिए संसाधनों और विशेषज्ञता का लाभ उठाने का एक रणनीतिक दृष्टिकोण है। सरकार एक अनुकूल नीतिगत माहौल, वित्तीय प्रोत्साहन और सहयोगी परियोजनाओं के लिए एक रूपरेखा प्रदान करके पीपीपी की सुविधा प्रदान कर सकती है। सरकार, निजी उद्योगों और अनुसन्धान संस्थानों के बीच संयुक्त उद्यम से बुनियादी ढांचे के विकास, प्रौद्योगिकी अपनाने और सामाजिक नवाचार जैसे क्षेत्रों में प्रभावशाली परिणाम मिल सकते हैं।[2]

झारखण्ड की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत, विशेष रूप से इसके आदिवासी समुदायों की, सांस्कृतिक संरक्षण और दस्तावेजीकरण के लिए प्रौद्योगिकी को एकीकृत करने का अवसर प्रस्तुत करती है। स्वदेशी भाषाओं को डिजिटल बनाने, पारंपरिक कला रूपों का दस्तावेजीकरण करने और सांस्कृतिक संरक्षण के लिए प्रौद्योगिकी का लाभ उठाने पर ध्यान केंद्रित करने वाली अनुसन्धान परियोजनाएं प्रभावशाली हो सकती हैं।

अपने विविध पारिस्थितिक तंत्रों को देखते हुए, झारखण्ड पर्यावरण विज्ञान और संरक्षण में अनुसन्धान के लिए अच्छी स्थिति में है। पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने के लिए वनों की कटाई, वन्यजीव संरक्षण और टिकाऊ संसाधन प्रबंधन को संबोधित करने वाली अनुसन्धान पहल महत्त्वपूर्ण हैं। पर्यावरण संगठनों के साथ साझेदारी, रिमोट सेंसिंग प्रौद्योगिकियों का उपयोग, और समुदाय–आधारित संरक्षण का प्रयास राज्य के प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा करने वाले अनुसन्धान में योगदान दे सकते हैं। एक स्थायी और पर्यावरण–अनुकूल दृष्टिकोण को बढ़ावा देकर, झारखण्ड जिम्मेदार पर्यावरण प्रबंधन के लिए एक उदाहरण स्थापित कर सकता है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी में स्वदेशी उद्यमिता को प्रोत्साहित करना समावेशी आर्थिक विकास के लिए महत्त्वपूर्ण है। जनजातीय समुदायों या स्थानीय उद्यमियों के नेतृत्व वाले स्टार्टअप और उद्यमों को समर्थन देने से सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य पर गहरा प्रभाव पड़ सकता है। स्वदेशी उद्यमियों को सशक्त बनाने पर ध्यान केंद्रित करने वाली अनुसन्धान समर्थित पहल से स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप अद्वितीय और टिकाऊ समाधानों का विकास हो सकता है।

स्वास्थ्य सेवा का क्षेत्र झारखण्ड में अनुसन्धान के लिए महत्त्वपूर्ण अवसर प्रस्तुत करता है, विशेष रूप से जैव प्रौद्योगिकी और चिकित्सा विज्ञान जैसे क्षेत्रों में। प्रचलित स्वास्थ्य चुनौतियों का समाधान करने, स्वदेशी चिकित्सा समाधान विकसित करने और जैव प्रौद्योगिकी अनुप्रयोगों की खोज करने वाली अनुसन्धान परियोजनाएं सार्वजनिक स्वास्थ्य पर दूरगामी प्रभाव डाल सकती हैं। अनुसन्धान संस्थानों, स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं और दवा उद्योगों के बीच सहयोग से रोग की रोकथाम, निदान और उपचार में सफलता मिल सकती है। स्वास्थ्य देखभाल अनुसन्धान में निवेश करके, झारखण्ड स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवता में सुधार कर सकता है और राष्ट्रीय और वैश्विक स्वास्थ्य प्रगति में योगदान दे सकता है। एक औद्योगिक केंद्र के रूप में झारखण्ड को पर्यावरणीय प्रभाव और टिकाऊ औद्योगिक प्रथाओं से संबंधित चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। उद्योगों के पर्यावरणीय प्रभाव की निगरानी और उसे कम करने, हरित प्रौद्योगिकियों को विकसित करने और टिकाऊ प्रथाओं को बढ़ावा देने पर केंद्रित अनुसन्धान महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकते हैं।

डिजिटल परिवर्तन के युग में, प्रभावी प्रशासन और समावेशी विकास सुनिश्चित करने के लिए ई– गवर्नेस और डिजिटल समावेशन में अनुसन्धान अनिवार्य है।[3] ई–गवर्नेस में डिजिटल साक्षरता, सुलभ ऑनलाइन सेवाओं और साइबर सुरक्षा पर ध्यान केंद्रित करने वाली परियोजनाएं पारदर्शी और नागरिक–केंद्रित शासन में योगदान कर सकती हैं। शोधकर्ताओं, सरकारी एजेंसियों और प्रौद्योगिकी विशेषज्ञों के बीच सहयोग से मजबूत डिजिटल बुनियादी ढांचे का विकास हो सकता है। ई–गवर्नेस में अनुसन्धान को बढ़ावा देकर, झारखण्ड सार्वजनिक सेवाओं की दक्षता बढ़ा सकता है, डिजिटल सशक्तीकरण की

सुविधा प्रदान कर सकता है और शहरी–ग्रामीण डिजिटल विभाजन को पाट सकता है।

विज्ञान संचार में अनुसन्धान वैज्ञानिक अवधारणाओं और खोजों की सार्वजनिक समझ को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। विज्ञान शिक्षा, विज्ञान पत्रकारिता और इंटरैक्टिव विज्ञान संचार पर ध्यान केंद्रित करने वाली परियोजनाएं वैज्ञानिक अनुसन्धान और सार्वजनिक जागरुकता के बीच की खाई को पाट सकती हैं। इस क्षेत्र में अनुसन्धान को प्राथमिकता देकर झारखण्ड वैज्ञानिक रूप से साक्षर और सूचना–सशक्त समाज का निर्माण कर सकता है।

निष्कर्ष

ऊपर उल्लिखित अनुसन्धान मार्गों की विविध श्रृंखला झारखण्ड में अनुसंधान–संचालित पहलों की व्यापक क्षमता को दर्शाती है। बहु–विषयक दृष्टिकोण अपनाकर और विभिन्न हितधारकों के बीच सहयोग को बढ़ावा देकर राज्य व्यापक और सतत विकास का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। इन विविध क्षेत्रों में अनुसन्धान में निरंतर निवेश न केवल झारखण्ड के विकास में योगदान देगा बल्कि राज्य को नवाचार और समावेशी विकास में अग्रणी के रूप में स्थापित करेगा। वस्तुतः झारखण्ड में अनुसन्धान के लिए निरंतर प्रतिबद्धता, दूरदर्शी नेतृत्व और समाज के सभी क्षेत्रों से सक्रिय भागीदारी की आवश्यकता है। अनुसन्धान पहल की सफलता के लिए सरकार से निरंतर समर्थन, शिक्षा जगत, उद्योग और स्थानीय समुदायों के बीच सहयोग और नवाचार को बढ़ावा देने की प्रतिबद्धता आवश्यक है। जैसे–जैसे झारखण्ड सतत विकास के पथ पर आगे बढ़ रहा है, अनुसन्धान इसके निवासियों के लिए सकारात्मक बदलाव, आर्थिक विकास और जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए उत्प्रेरक बन सकता है। स्थानीय शक्तियों और वैश्विक विशेषज्ञता के बीच तालमेल अनुसन्धान पहल के प्रभाव को बढ़ा सकता है जिससे झारखण्ड एक गतिशील राज्य के रूप में स्थापित हो सकता है।

<u>सन्दर्भ ग्रंथ सूची</u>

1. https://www.jharkhand.gov.in/dept-of-information-technology-jharkhand
2. The Jharkhand Gazette Extraordinary, Published By Authority Of Industries Department.
3. https://www.jharkhand.gov.in/dept-of-information-technology-jharkhand

प्रो0 (डॉ0) तपन कुमार शांडिल्य कुलपति

डॉ0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी

विश्वविद्यालय, राँची

झारखण्ड

15

आधुनिक समय में सम्बन्धों के बदलते मानदण्ड

मधु सिंगला

सारांश

आधुनिक अर्थात आज का। अन्य शब्दों में वर्तमान समय ही आधुनिक काल है। मुख्य रूप से 19वीं शताब्दी से आधुनिक काल का प्रादुर्भाव माना जाता है क्योंकि इसी समय में देश में व्यापक स्तर पर परिवर्तन आये। औद्योगिक क्रांति और वैज्ञानिक प्रगति ने सामाजिक व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन किए। जिसका प्रभाव भारतीय संस्कृति पर भी हुआ तथा जनमानस की संकुचित मानसिकता में भी बदलाव आया। पुरुष –प्रधान समाज में नारी को भी स्थान मिलने लगा और तब प्रत्येक क्षेत्र में न केवल प्रगति हुई बल्कि देश की समृद्धि में भी बदलाव आया। समय की गतिशीलता के साथ –साथ आधुनिकता में भी परिवर्तन आया। जिसके कारण परंपरागत विचारों, मूल्यों एवं जीवन –शैली में अंतर होने लगा।

''साहित्य और समाज दोनों का घनिष्ठ संबंध है। यह दोनों एक –दूसरे के सहयोगी हैं। एक के अभाव में दूसरा अधूरा है। साहित्य को समाज से अलग नहीं किया जा सकता और न ही साहित्य समाज को साहित्य से क्योंकि साहित्य का केंद्र मानव रहता है और मानव एक सामाजिक प्राणी है। साहित्यकार अपने साहित्य में मानव की भावनाओं, अनुभूतियों एवं विचारों को लिपिबद्ध करता है। साहित्य में समाज के हर पहलू पर विवचे न एवं चिंतन किया जाता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार –साहित्य में उन सभी बातों का जीवंत विवरण होता है जिसे मनुष्य ने देखा है, अनुभव किया है,सोचा है और समझा है। समाज निर्माण व उसके प्रदर्शन का उत्तरदायित्व भी साहित्य पर ही है।''

साहित्य ने बदलते परिवेश की वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत की। साहित्य ने न केवल आधुनिक समय में पनपती समस्याओं को दर्शाया बल्कि समस्याओं के समाधान भी प्रस्तुत किए। परिवार एवं समाज को सर्वाधिक प्रभावित नारी की स्थिति करती है। पारिवारिक धुरी होने के कारण बहुत से रिश्ते उसकी स्थिति अनुसार बनते –बिगड़ते हैं। आधुनिक काल में नारी की स्वतंत्रता, आर्थिक स्वावलंबन ने जहाँ उसमें नया आत्मविश्वास जगाया तो कहीं नारी में अभिमान की भावना भी जाग्रत होने लगी। पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव और भौतिकता की लालसा में मनुष्य पथभ्रष्ट होने लगा।

''आधुनिक युग एक संक्रमण का युग है। समाज में परिवर्तन इतनी तीव्र गति से हो रहा है कि उसको ठीक प्रकार से नियंत्रित कर सकना प्रत्येक समाज के लिए संभव नहीं। प्रत्येक देश के सामने यह समस्या है कि किस प्रकार सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा किया जाये।आये दिन जिस अनुपात में आवश्यकतायें बढ़ रही हैं उस अनुपात में साधनों के वृद्धि संभव नहीं।''

आधुनिक साहित्य का स्वरूप भी प्राचीन साहित्य से सर्वथा भिन्न है। बदलते समय के साथ साहित्यकारों की भी व्यक्तिगत और समष्टिगत प्रतिक्रियाओं में परिवर्तन आया है।

आधुनिक व्यक्ति क्षणवादी है, भौतिकतावादी है,स्वार्थी है और तर्क –वितर्क करने का पक्षधर है। इसी तर्क –वितर्क की अधिकता के कारण आधुनिक मानव में आध्यात्मिकता की अनुभूति को अनुभूत करने का न समय है न ही इच्छा। अध्यात्म का संबंध मानवता से,नैतिक मूल्यों एवं सिद्धांतों से है।जिस पर विभिन्न संबंध जीव –पर्यंत टिके रहते हैं। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में जितनी तेजी से संबंधों का मानदंड परिवर्तित हो रहा है उसमें सकारात्मक जीवन के संकेत कम है। अपनी संस्कृति से विमुख होकर पश्चिमी संस्कृति को अपनाने की चाहत में आधुनिक मानव किसी एक संस्कृति के प्रति समर्पित नहीं हो पा रहा और इसीलिए संबंधों में कुंठा, निराशा और घुटन बढ़ती जा रही है। पश्चिमी संस्कृति की स्वतंत्रता और भारतीय संस्कृति की सात्विकता में सामंजस्य न होने के कारण उसका प्रभाव खराब होता जा रहा है। मानवीय संबधं दिनोदिन पतन की ओर उन्मुख हो रहे हैं। मशीनीकरण के युग में मनुष्य मशीनों का दास है और प्रतिस्पर्धा की अंधी दौड़ में असंयमित व्यवहार उसकी संस्कृति के सर्वथा विपरीत है। आधुनिक समय में संबंधों में परिवर्तन का मूलाधार संयुक्त परिवारों का तेजी से कम होना है। गाँवो में अपेक्षाकृत इस प्रकार की स्थिति कम है परंतु महानगरों में परिवार की परिभाषा ही पति –पत्नी और उनकी एक या दो संतानों तक सीमित हो चुकी है। ''निःसन्देह आधुनिक युग में तेजी से बदलते हुए सामाजिक मूल्यों और आदर्शों ने परिवार जैसी सामाजिक सस्ं था को प्रभावित किया है।आधुनिक प्रवृत्तियो से प्रभावित परिवार दिन –प्रतिदिन प्राचीन मानमूल्यों, आदर्शों व सयं ुक्त परिवार की एकता को खो बैठे हैं। संयुक्त परिवार आज इसलिए टूट रहे हैं कि आधुनिक प्रवृत्तियो से उनका सामंजस्य नहीं हो पा रहा है।के.पी. चट्टोपाध्याय ने लिखा है –आणविक परिवार एक ऐसी गृहस्थ इकाई है,जो पति –पत्नी और बच्चों में ही केंद्रित है और जिसमें संयुक्तता का अभाव है।''

वर्तमान में एकल परिवारों मे मानसिक शांति एवं खुशी एक भ्रम की स्थिति ही कही जा सकती है। सम्मान, सहयोग और संयम की ऊर्जा के स्रोत जो संयुक्त परिवारों में बड़े–बुजुर्गों के रूप में होते थे अब नहीं होते। सामाजिक तालमेल के अभाव में असामाजिक कार्यों में लगातार वृद्धि हो रही है। बदलती जरूरतों और परिस्थितियों के कारण

विद्वत समाज भी एकांगी परिवार को अहमियत और आदर्श परिवार की संज्ञा देने लगे हैं। आधुनिक समय में नगरों–महानगरो ं की महंगी जीवनशैली, स्वतंत्र जीवन की चाह, आवासीय कमी तथा अन्य कई कारणो ं का प्रभाव सबंधो ं पर पड़ने लगा है। दिनोंदिन आवश्यकता का बढ़ता दायरा, कृत्रिम एवं सुख–सुविधाओ ं से पूर्ण जीवन की चाहत के कारण अर्थोपार्जन का कार्य स्त्री –पुरुष समान रूप से करने लगे हैं। दोनो ं की अत्यधिक व्यस्तता ने युवा पीढ़ी को विशेष रूप से प्रभावित किया है। बाल्यावस्था से ही मनमर्जी एवं ख्वाहिशो ं के पूरी होने की आदी हो चुकी युवा पीढ़ी के लिए ज्यादा अहमियत केवल पैसे की रह जाती है। माता–पिता द्वारा किया गया किसी प्रकार का विरोध उन्हें विद्रोह की ओर ले जाता है। समरसता का अभाव और मूल्यों में आई विविधता के कारण पारिवारिक संगठन शिथिल हो गए हैं, और होते जा रहे हैं। महानगरों में आर्थिक आत्मनिर्भरता का प्रभाव इतना अधिक है कि पति–पत्नी के रूप में अथवा अभिभावक के रूप में स्त्री–पुरुष स्वयं भी स्वतंत्र जीवन की चाहत रखते हैं। उनकी यह इच्छा इतनी प्रबल रहती है कि वे बाहरी दुनिया को ही वास्तविक दुनिया मान लेते हैं। उनका वही आचरण आगे उनकी संतान अपना लेती है और जिस प्रकार आजकल का वातावरण है कि व्यक्ति एक समय पर नितांत अकेलापन महसूस करने लगता है। उसका कारण यही है कि बाहरी दुनिया सत्य रूप में बाहरी ही रह जाती है। जिसका अनुभव विषम परिस्थितियों में कष्टकारी रहता है।युवा पीढ़ी में बढ़ता क्रोध, प्रतिस्पर्धा, ईर्ष्या, अहंकार, असहनशीलता के भाव मानसिक विकृतियों को बढ़ावा देते हैं। परिवार में अपनत्व के अभाव में युवा पीढ़ी में कुंठा, निराशा और वेदना के दबे भाव आत्महत्या, अवसाद और अन्य गंभीर बीमारियों के रूप मे ं दिखाई देते हैं।

हिंदू धर्म में पति –पत्नी का संबंध सर्वाधिक अटूट संबंध माना जाता है परंतु आधुनिक परिप्रेक्ष्य में इनके मानदंडों में भी इतने परिवर्तन आ रहे हैं कि संबंध मात्र बंधन बनकर रह
गया है।

''विवाह के आधार में भी परिवर्तन हुए हैं। नयी पीढ़ी विवाह को एक समझौता मानने लगी है। विवाह–विच्छेद को आजकल बुरा नहीं समझा जाता। विवाह का आधार प्रेम व श्रद्धा की भावना न रहकर, भौतिकता की भावना हो चुकी है। इसके अतिरिक्त अंतरजातीय विवाह भी पारिवारिक विघटन के प्रमुख कारणों में हैं। अधिकांश युवक–युवतियाँ बिना सोचे–समझे गलत चुनाव करके,प्रेम विवाह रचा बैठते हैं और बाद में एक–दूसरे की रुचियाँ, मानसिक स्तर पर भिन्न पाने पर एक–दूसरे से दूर भागते हैं।''

सनातन संस्कृति के अनुसार किसी भी हिन्दू ग्रंथ में विवाह –विच्छेद जैसा कोई विषय ही नहीं है अर्थात इसके लिए किसी एक शब्द तक का निर्माण नहीं किया गया परंतु आधुनिक काल में नैतिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों की अवहेलना युवा पीढ़ी को तनिक भी विचलित नहीं करती। परिवर्तन होना सहज प्रक्रिया है और परिवर्तन के अनुसार स्वयं को ढालना समय की आवश्यकता। परंपरागत रूढ़ियों और अंधविश्वासो ं को छोड़ देना सही है परंतु संस्कारों से विमुख होना सही नहीं है। आज भी ऐसे परिवार हैं जहाँ अंधविश्वासों और रूढ़ियों को प्रश्रय दिया जाता है परंतु आधुनिक पीढ़ी जब उन्हे ं अपनाने से इकांर कर देती है तो पुरानी पीढ़ी के बुजुर्गों का सख्त रवैया नई पीढ़ी से तादात्म्य बैठाने में असफल रहती है। आधुनिक काल में संबधों की गरिमा को बनाए रखने में प्राचीन पीढ़ी को, मध्यम पीढ़ी से और मध्यम पीढ़ी को आज के युवा पीढ़ी से औचित्यपूर्ण सामंजस्य बनाए रखना अत्यावश्यक है। जिसके लिए समय एवं संयम जरूरी है।

महानगरो ं में जिस प्रकार से वृद्ध आश्रम बढ़ रहे हैं और वृद्धों की संख्या में भी वृद्धि हो रही है वह सामंजस्यता न होने का परिचायक है। लोभ–लालच, आर्थिक समस्याएं, स्वतंत्र जीवन की चाहत में आधुनिक संबंध दम तोड़ रहे हैं।

कुछ मामलो ं में देखा जाए तो वे अभिभावक जिनकी संतान बोर्डिंग मे ं पढ़ती है या विदेश चली जाती है वह वहीं बस जाती है। तब वृद्धावस्था में उनकी देखभाल को कोई नहीं रह जाता परंतु ज्यादातर इनमें वही अभिभावक होते हैं जो बाल्यावस्था या किशोरावस्था में अपनी संतान को समय नहीं देते। अभिभावक संतान के भविष्य के प्रति चिंतित रहते हुए वर्तमान को गंवा देते हैं। इसके अलावा माता –पिता की अपेक्षाएं, कार्य की व्यस्तता, बनावटी जीवन–शैली और प्रतिस्पर्धा के कारण संतान प्राकृतिक रूप से बड़ी नहीं होती। जिसके कारण आपसे संबंधो ं मे ं तनाव अत्यधिक होने लगा है एक पीढ़ी से, दूसरी पीढ़ी के बीच के अंतर को सही प्रकार से न समझने के कारण आधुनिक सबं धो ं में विघटन की स्थिति उत्पन्न हो गई है। ''माता–पिता भी परिवर्तित मानमूल्यों व सिद्धांतों के साथ समझौता करने को तैयार नहीं होते। वे नई पीढ़ी से आशा करते हैं कि उनकी जीर्ण –शीर्ण मान्यताओं को, रूढ़िवादिता को वे सहर्ष स्वीकार कर जीवन में अपनायें। नियंत्रण में रहे। लेकिन जब उनकी इच्छाओं के विरुद्ध पीढ़ी मनमाना आचरण करती है तो वृद्धजन उनके कटु आलोचना करते हैं जो पारिवारिक वातावरण को दूषित करती है।''

वर्तमान समय में बंधी–बंधाई परिपाटी पर रिश्तों को चलाना मुमकिन नहीं। रहन–सहन की, आने–जाने की, आजीविका की, विवाह संबंधी, रीति–रिवाज संबंधी सीमाएं एक हद तक आवश्यक है। संबंधों में नकारात्मक बदलाव का कारण अत्यधिक ढील या जरूरत से ज्यादा सम्बन्धो को बांधकर रखना है।

भौतिकतावादी युग में प्रेम – विवाह होना और टूटना आम बात है

और कुछ ऐसा हाल अब परिवार द्वारा तय किये गए रिश्ते में होता जा रहा है क्योंकि व्यक्ति के लिए आर्थिक सक्षमता पारिवारिक जीवन से ज्यादा महत्वपूर्ण हो गई है। लिव–इन–रिलेशनशिप में रहना आजकल महानगरो ं में बढ़ता जा रहा है क्योंकि वैवाहिक जीवन की पवित्रता में विश्वास का स्थान रिक्त होता जा रहा है। उम्र के बंधनों को नकारते हुए आधुनिक परिप्रेक्ष्य में संबंध चाहे पति–पत्नी के हो या अभिभावक के या अन्य कोई भी, सब में परिवर्तन स्पष्ट परिलक्षित होता है। इनमें परिवर्तन या तो रूढ़िग्रस्तता के अत्यधिक दबाव के कारण है या अत्यधिक स्वच्छंदता के कारण।

निष्कर्ष

समग्रतः परिवारो ं के छोटे होने से व्यक्ति की सोच भी छोटी अर्थात् आत्मकेद्रित रह गई है। केवल कुछ प्रतिशत संबंधों में ही गंभीरता और प्रेम का भाव विद्यमान है। धर्म के प्रति आस्था, रीति–रिवाजों का निर्वहन, पारिवारिक समस्याओं के प्रति सयुंक्त निवारण जो भारतीय संस्कृति का प्रतीक है वह आज भी है, भले ही कम हो। युवा पीढ़ी पश्चिमी संस्कृति से प्रभावित तो है परंतु फिर भी कहीं–न–कहीं अपनी संस्कृति से जुड़ाव भी महसूस करती है। जब तक यह जुड़ाव की भावना है तब तक समय कितना भी आधुनिक हो जाये परंतु संबंध बने रहेगे।

1. मंजू, डॉ० रामरती, डॉ० मुक्ता के कथा साहित्य में सामाजिक संवेदना, ,पृष्ठ संख्या –111
2. डॉ० के.के मिश्र, आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन, पृष्ठ संख्या–165
3. चौहान बाजूभाई सी, अमृतलाल नागर के उपन्यासों में पारिवारिक विघटन
4. चौहान बाजूभाई सी, अमृतलाल नागर के उपन्यासों में पारिवारिक विघटन
5. चौहान बाजूभाई सी, अमृतलाल नागर के उपन्यासों में पारिवारिक विघटन

मधु सिंगला
शोध छात्रा
सिंघानिया विश्वविद्यालय
पचेरी बड़ी झुंझनु (राजस्थान)

16

मन्नू भण्डारी की कहानियों में वैवाहिक समस्या

डॉ0 सुधा कुमारी

सारांश

मन्नू भण्डारी हिंदी साहित्य की स्त्री रचनाकारों में एक ऐसा नाम है जो बदलते समय के साथ बदलते रिशतों की कहानियों को बिना किसी लाग –लपेट के सहज भाव से उकेरा है। आजादी के बाद सिर्फ देश की स्थिति नहीं बदलीं बल्कि भारतीय समाज की पारिवारिक व्यवस्था भी बदलने लगीं, इस व्यवस्था की मूल इकाई स्त्री का जीवन एक ऐसी दुनिया में प्रवेश करने लगा जहाँ उसके पिढियो से दबी इच्छाएँ आकार लेने लगीं, जिसे स्त्री ना हाथों से पकड़ पा रही थी ना ही उसे छोड़ सकती थी, जिसके कारण घर–द्वार में उलझी रहने वाली स्त्री अब घर की दुनिया में सिमटना नहीं चाहतीं थी ब्लिक अपनी एक अलग पहचान बनाने के लिए रास्ते तलाशने लगतीं है। स्त्री के इस बदलाव को समाज एवं परिवार सहजता से नहीं स्वीकारता ब्लिक उसके समक्ष चुनौतीपूर्ण स्थितियों के रूप में ही सदा दिखता है जिसे मन्नू भण्डारी ने बहुत बारीकी से उभारा है। इन्होंने स्त्री जीवन से जुड़ी अनेक समस्याओं को कलमवद्ध तो किया ही है लेकिन विवाह से उत्पन्न समस्या एवं उससे जुड़े विभिन्न पहलुओं को मन्नू भण्डारी ने जिस सहजता व तीक्ष्णता के साथ उल्लेखित किया है वह अन्यत्र कहीं भी नहीं मिलता।

मन्नू भण्डारी हिंदी साहित्य का एक ऐसा नाम हैं जिन्होंने स्त्री जीवन के विभिन्न पहलुओं को कहानियों के माध्यम से सजगता के साथ चिन्हित किया है। जिसमें प्रमुखता के साथ उन्होंने नारी जीवन में आई विस गति तथा चुनौती को वैवाहिक जीवन के सापेक्ष उभारा हैं। मन्नू भण्डारी की रचनाओं में जहाँ एक ओर स्त्री आधूनिक जीवन शैली को अपनाते हुए अपने अस्तित्व के प्रति सजग एवं सचेत दिखाई पड़ती हैं वहीं अपने टूटते–बिखरते रिश्तों के समक्ष अपने को बेबस और लाचार पाती हैं, उसकी विवशता , उसकी मजबूरी कभी –कभी इतना बढ़ जाता हैं कि उसे वैवाहिक संबंध उसके लिए बेमानी तथा बोझ बन जाते हैं। वैवाहिक संबंधो से मिली यात्रणा तथा कडवाहट से बाहर निकलने के लिए सब धो से अलग होने के अलावा उनके पास अन्य कोई विकल्प नहीं बचता जिसे श्बद दराजों के साथश कहानी कि नायिका मण्जरी इस प्रकार व्यक्त करतीं हैं––––––––––––––जिस तटस्थता से उसने सब कुछ झेला और अपने को टूटने नहीं दिया, उससे उसे लगने लगा था, अनायास ही उसकी उम्र के दस साल कहीं चले जाते। –––––––––––––––––– दिनों ने गुजरकर उसकी उम्र की संख्या में जरूर वृद्धि कर दी है पर भावनाएँ आज भी अछूती है। जिन्दगी के वे सुनहरे दिन, जब उसे अपनी भावनाओं पर खर्च करना था, मरे हुए सम्बन्धों की लाश ढोने में ही बीत गए।[1]

मन्नू भण्डारी की रचनाओं का केंद्र स्त्री जीवन तथा उससे जुड़ीं समस्याएं रहीं हैं जो उनकी अधिकांष रचनाओं में आसानी से देखें जा सकते हैं। समकालीन भारतीय समाज में हो रहें परिवर्तन और उससे प्रभावित नारी का जीवन अनेक स्तरों पर परिवर्तित होने लगता हैं, सिर्फ उसके आचार––विचार जीवन–शैली, तथा सामाजिक व आथिर्क स्थिति ही नहीं बदलतीं बल्कि उसके रिश्तो की सबसे मजबूत डोर भी टूटने लगतीं है। रिश्तों की उलझनों में ऊलझी नारी के चरित्र व उसके टूटने की पीड़ा अनेक स्त्री पात्रों के माध्यम से मन्नू भण्डारी ने चित्रित किया हैं,। चाहे वह श्कील और कसकश कहानी कि रानी हो अथवा श घुटन की प्रतिमा दोनों ही अपने वैवाहिक जीवन के दंश से मुक्ति चाहती हैं। रानी अपने पति कैलाश के रुखे व्यवहार से इतनी आहत थीं कि वह––––––––––––––––कैलाश के जातें ही फूट–––फूटकर रोने लगी। विवाह से लेकर आज तक, वह अनेक प्रकार से अपने मन को समझाती आई है, पर आज उसका मन, बुद्धि और तर्कों के जाल को तो तोड़ कर पूरी शक्ति के साथ विद्रोह कर उठा।[2]

स्वात्योतर हिंदी कथा साहित्य में वैवाहिक जीवन से जुड़ी समस्याओं को स्त्री के परिपेक्ष्य में देखने एवं परखने का भरपूर प्रयास किया गया है। अधिकांश स्त्री रचकारो ने इस बिषय को ना सिर्फ कलमवद्ध किया ब्लिक उसे प्रमुखता के साथ बिना किसी लाग–लपेट के ज्यों का त्यों चित्रित किया है। मन्नू भण्डारी ने भी नारी की मनोदशाओं को, उसके टूटते विशवास को, व उनसे उपजी व्यथा को अलग– अलग पात्रों के द्वारा चिन्हित किया है। कभी वो ष्तीसरा आदमीष् कहानी कि ष्शकुनष् के रूप में तो कभी तीन निगाहों की एक तस्वीरश कि दंशना के रूप में अभिव्यक्त होती हैं। पात्र बदलते रहते हैं परंतु सबकी समस्या कमोबेश एक जैसी ही रहतीं हैं, कारण कुछ भी हो, स्थितियाँ –परिस्थितियाँ भिन्न– भिन्न होने के बावजूद भी स्त्री अपने परिवार और उसके भावनात्मक सम्बन्ध को जोडे रखने में स्वयं को लाचार व विवश पाती हैं। क्योंकि ये सभी सम्बन्ध उसकी चाहनाओ पर निर्भर नहीं करता ब्लिक अपनी इच्छाओं के पूर्ति के लिए उससे जुड़े रहते है , जिसके कारण वैवाहिक संबंध में दरार उत्पन्न होने लगता हैं। ष्दरार भरने की दरारष् कहानी कि नायिका श्रुतिदी एक विख्यात चित्रकार हैं जिसका अपने पति विभुदा से वैचारिक मतभेद इतना ज्यादा बढ़ जाता हैं कि वह अपने पति से अलग होना चाहतीं हैं वह नदी से कहती हैं कि––––––––––––––––खाने के लिए

अपनी नौकरी पर निर्भर करती हूँ, और जीने के लिए कला पर, तेरे पास घर मिल गया तो संकट–मुसीबत के समय तुझ पर निर्भर करूँगी, विभु इन सबमें आते कहाँ हैं। [3]

बदलती आथिर्क एवं सामाजिक परिस्थितियाँ परिवार के मजबूत डोर को ना सिर्फ कमजोर करतीं हैं, ब्लिक रिश्तों में कडवाहट इस कदर भर देतीं हैं कि अलगाव, दुराव, एवं घुटन वैवाहिक जीवन का प्रयार्य बन जाते हैं। बंद दराजों के साथकि नायिका मंजरी विपीन को छोड़कर दिलीप को अपनाती हैं, परन्तु इस रिश्ते में भी दरार उत्पन्न होने लगा , टूटते–बिखरते रिश्तों की उलझनों में उलझी मंजरी को लगता हैं कि ————————————बाहर से कुछ नहीं बदला था, न बातचीत में, न व्यवहार में। पर अनजाने और अनचाहे ही भीतर से जैसे मन बंट गए थे, जिन्दगी बंट गई थी, हर बात हालांकि प्रसंग और स्थितयां दूसरी थी, पर बंटने की पीड़ा वही थी, वैसी ही थी (4) मंजरी जीवन के अकेलेपन से उबकर नयें रिश्ते के साथ जुडती है क्योंकि तीन साल का उसका बेटा, उसके जीवन कि उस रिक्तता को नहीं भर पाता हैं जो उसे विपीन ने दिया है। विपीन से मिले धोखे को मण्जरी दिलीप के प्रेम एवं विशवास के सहारे भूलना चाहती है, लेकिन वहाँ भी मंजरी को वह नहीं मिलता जिसकी अपेक्षा में उसने दिलीप से की थी। इस पीड़ा से मंजरी अकेली नहीं जुझ रही हैं बल्कि कमोबेश हर आधुनिक नारी कि यहीं समस्या है जो वैवाहिक रिशतों की उलझनों में उलझकर रह जाती हैं और अततः मण्जरी की तरह इस रिश्ते से अलग होना ही बेहतर समझती हैं। जैसे मंजरी कहती हैं कि———————— ————————————इस युग में आशा करना ही मूर्खता है, क्योंकि आज जिन्दगी का एक ही पहलू हर स्थिति और हर सम्बन्ध एक सम्सयाहीन समस्या होकर ही आता है, जिसे सुलझाया नहीं जा सकता है [5]

भारतीय समाज में लगातार हो रहें परिवर्तन तथा आधुनिक होती सामाजिक वयवस्था, समाज के लगभग सभी घटकों को प्रभावित करता है, जिससे नारी भी अछूती नहीं रहती, शिक्षित होती स्त्री अपने स्व के प्रति तो सजग हैं ही ,साथ ही वह अपने उन अधिकारों को लेकर भी सचेत है, जो उसके अस्तित्व के लिए आवश्यक है। नारी का जीवन अनेक आयामों से जुडता हुआ, विभिन्न क्षेत्रों में कदम रखने लगता हैं। जिसके कारण वह घर की दहलीज लांघकर नई दुनिया से परिचित होतीं हैं, साथ ही नए रिश्ते , नई सोच के साथ जीवन को जीना चाहती हैं। लेकिन उसकी इच्छा व परिवार के तौर–तरीके के बीच इतना बड़ा फासला होता है जिसे पाटना तो दूर उसके साथ जीवन काटना भी चुनौतियों से भरा होता है। नारी जीवन में आए इन विसंगतिओ को मन्नू भंडारी ने अपनी कहानी के नारी चरित्रों के माध्यम से सहजता के साथ उकेरा है। ष्दीवार बच्चे और बरसातष् कहानी में आधुनिक व शिक्षित नारी कि इसी सम्सया पर प्रकाश डाला गया है,,जहाँ परिवार तथा समाजद दोनों ही उसके नए स्वरूप को स्वीकार नहीं करना चाहते हैं ————————————————

ये पढी–लिखी जो न करें सो थोड़ा है। ————————————मैं तो सच्ची बात कहूँ हूँ, इस पढाई, निगोड़ी ने औरतों का धरम–करम तो सब डुबो दिया!————————अरे, पढाई बिचारी क्या करैं, यह तो अपने विचार की बात है। ————————————————अब दोस जिसे चाहे दो, हम तो यह जाने है पहले की लड़कियां ऐसा नहीं करैं थीं। ————————————हद कर दीनी उसनें तो। ————————————मैंने तो तभी अम्मा से कह दीनी कि लड़की का चाल–चलन अच्छा नहीं लगे हैं, रानी बीबी से ज्यादा मेलजोल मत बढने दो। लड़की की जात को बिगड़ते कित्ती देर लगै है भला (6)

समकालीन परिवेश तथा परिस्थितियों के प्रति सजग मन्नू भंडारी अपनी कहानियों में स्त्री जगत में आए लगभग सभी परि वर्तन को चिन्हित किया है, जिसमें उसके टूटते वैवाहिक संबंधों के दंश को नारी की मनोदशा के अनुरुप चित्रित किया है। उन्होंने नारी पात्रों के माध्यम से एक ओर उसके जीवन में आए बदलाव को दर्शाने का प्रयास किया है, वही दूसरी तरफ टूटते पारिवारिक संबंध के कारण जीवन में आई कडवाहट को भी सजगता से चित्रित किया है। आधुनिक जीवन शैली स्त्री तथा पुरूष दोनों के जीवन समान रूप से प्रभावित करता है, जिसके कारण उनके वयक्तित्व को बहुत हद तक जिद्दी, स्वकेंद्रित तथा उदासीन प्रवृति वाला बनाते हैं, जो जीवन के बिषम परिस्थितियों से थककर, ऊबकर, जीवन के संत्रास भोगने के लिए विवश दिखते हैं।

निष्कर्ष

व्यक्ति की बढ़ती इच्छा, अकांझा तथा आवश्यकताओं के कारण जहाँ परिवार की उपेक्षा उसकी मजबूरी है, वही वह अपने रिश्तों को संभालने में असमर्थ दिखता है। व्यक्ति का यंत्रवत जीवन उसके संबंधो में दूरियो कारण बना, वही स्त्री परिवार के बीच में भी स्वयं को अकेला पाती है। स्त्री के इसी विवशता तथा वर्तमन की तड़प को मन्नू भण्डारी ने वैवाहिक जीवन के संदर्भ में चित्रित किया है। बिखरते रिश्तों के बीच स्वयं को तलाशती नारी के मनोभाव को मन्नू भण्डारी ने संवेदना के साथ अभिव्यक्ति किया है। स्त्री की विवशता तथा उसके अर्तमन की तड़प को मन्नू भण्डारी ने अपनी कहानियों में बिशेष रूप अभिव्यक्त किया है।

संदर्भ –सूची

1. बंद दराजों के साथ (मन्नू भण्डारी सम्पूर्ण कहानियाँ) पृ संख्या–337
2. मै हार गई (कील और कसक) पृ संख्या–121
3. मन्नू भंडारी सम्पूर्ण कहानियाँ (दरार भरने की दरार) पृ संख्या

– 373

4. मन्नू भण्डारी की सम्पूर्ण कहानियाँ (बंद दराजों के साथ) पृ संख्या –341
5. मन्नू भण्डारी की सम्पूर्ण कहानियाँ (बंद दराजों के साथ) पृ संख्या–342
6. में हार गई(दीवार श्बच्चे और बरसात) पृ संख्या –93

सम्पर्क –सूत्र

डॉ0 सुधा कुमारी

(अतिथि प्रवक्ता राजकीय महाविद्यालय बसई नवाब)

ए–7/183

सेक्टर–17, रोहिणी नई दिल्ली–110089

मोबाइल संख्या–8010164469

17

ऐतरेय उपनिषद में मूल्य : एक अंतर्दृष्टि

डॉ0 सुमन

सारांश

भारतीय आध्यात्मिकता के समृद्ध संदर्भ में, उपनिषदों में प्रकाशमय मूल्यों को मनुष्य के उज्ज्वल जीवन जीने के लिए निर्देशक सिद्धांतों का रूप माना जाता है। वे जन्म और मृत्यु के चक्र (संसार) से मुक्ति (मोक्ष) पाने के लिए आत्म–ज्ञान, नैतिक चरित्र और आध्यात्मिक साधना की आवश्यकता पर बल देते हैं।

उपनिषद हिंदू धर्म के सबसे प्राचीन ग्रंथ–रत्न हैं जो कि चिंतनशील एवं सृजनशील ऋषियों की दार्शनिक काव्य रचनाएँ हैं। उपनिषद, वास्तव में हमारे सबसे प्राचीन और पवित्र वेदों का ही विश्लेषण हैं, ये वेदों के गर्भ में निहित मूल्यों के ज्ञान को उजागर करने का प्रयास करते हैं। उपनिषद ने भारतीय दर्शन और आध्यात्मिकता को गहराई से प्रभावित किया है तथा ये ही वेदांत के विचार का मूल हैं, जो ब्रह्म को सर्वोच्च सत्य मानता है और मानव जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य उस सर्वोच्च सत्य को प्राप्त करना है। उपनिषदों में उल्लिखित अद्वैत की विचारधारा ने आदि शंकराचार्य की शिक्षाओं के साथ–साथ, अन्य भारतीय दार्शनिक परंपराओं को भी प्रभावित किया है और ये वर्तमान समय में भी प्रासंगिक हैं। उपनिषद कई महत्वपूर्ण मूल्यों को स्पष्ट करता है जो वास्तविकता की प्रकृति, स्वयं और मानव अस्तित्व के अंतिम उद्देश्य में गहन अंतर्दृष्टि का वर्णन करते हैं।

ऋग्वेद में समाहित, स्वयं (आत्मन्) और परम वास्तविकता (ब्राह्मन्) की प्रकृति पर दार्शनिक अंतर्दृष्टि और शिक्षाओं का उल्लेख मुख्यतः ऐतरेय उपनिषद में मिलता है। इनमें ध्यान, स्वयं की प्रकृति और व्यक्तिगत आत्मा (जीवात्मा) और सार्वभौमिक आत्मा (परमात्मा) के बीच संबंध पर शिक्षाएं शामिल हैं। यह उपनिषद, ऋग्वेद से जुड़े होने के बावजूद, वेदों के नाम से जाने वाले साहित्य के व्यापक निकाय का भी हिस्सा हैं और अपनी गहन दार्शनिक और आध्यात्मिक शिक्षाओं के लिए पूजनीय हैं।

ऐतरेय उपनिषद, गहन दार्शनिक अवधारणाओं को उजागर करता है और मानवता की आध्यात्मिक यात्रा के लिए प्रासंगिक अमूल्य ज्ञान प्रदान करता है। ऐतरेय उपनिषद, ऋग्वेद का एक हिस्सा, भारतीय दर्शन और आध्यात्मिकता में सबसे पुराने और सबसे प्रतिष्ठित ग्रंथों में से एक है। इसे तीन अध्यायों में विभाजित किया गया है । यह उपनिषद स्वयं की प्रकृति, ब्रह्मांड और परम वास्तविकता सहित विभिन्न दार्शनिक पहलुओं पर प्रकाश डालता है। यह तथ्यों, स्वयं के अस्तित्व और ब्रह्मांड की प्रकृति में गहराई से उतरता है, यह आध्यात्मिक साधकों के लिए व्यावहारिक मार्गदर्शन प्रदान करता है।

ऐतरेय उपनिषद में महत्वपूर्ण मूल्य :–

स्वयं (आत्मन्) की अवधारणा :– ऐतरेय उपनिषद की शिक्षाओं का केंद्र स्वयं (आत्मन्) की प्रकृति की खोज है। यह इस विचार को उजागर करता है कि व्यक्तिगत आत्म, परम वास्तविकता (ब्राह्मन्) से अलग नहीं है, बल्कि वास्तव में, उसके समान है। व्यक्ति और ब्रह्म के बीच एकता की इस अनुभूति को भारतीय दर्शन में मुक्ति (मोक्ष) की कुंजी माना जाता है। आदि शंकराचार्य द्वारा एतरेय उपनिषद पर रचित भाष्य में भी स्पष्ट है कि "सम आत्मा ब्रहास्मीत्येवं विद्यात्" अर्थात् सभी प्राणियों में स्थित आत्मा ही ब्रह्म है। इसी प्रकार बृहदारण्यक उपनिषद में भी उल्लेख मिलता है कि "अहम् ब्रह्मास्मि" अर्थात् सभी व्यक्तियों में ब्रह्म है।

ऐतरेय उपनिषद की केंद्रीय शिक्षाओं में से एक ब्राह्मन् की अवधारणा है, जो सभी प्राणियों के अस्तित्व को रेखांकित करती है। ऐतरेय उपनिषद की यह शक्तिशाली घोषणा व्यक्तिगत 'स्व' और 'परम' वास्तविकता के बीच पहचान के गहन सत्य को समाहित करती है। यह प्रत्येक प्राणी के भीतर अंतर्निहित दिव्यता और अस्तित्व की परस्पर संबद्धता को चिन्हित करती है। ब्रह्म को ब्रह्मांड में प्रत्येक वस्तु के स्रोत और सार के रूप में वर्णित किया गया है।

अस्तित्व की एकता (अद्वैत) :– ऐतरेय उपनिषद अद्वैत के दर्शन की व्याख्या करता है, जो वास्तविकता की एकरूपता की प्रकृति पर जोर देता है । यह सिखाता है कि केवल एक ही परम वास्तविकता (ब्रह्म) है और दुनिया में सभी स्पष्ट भेद और विभाजन महज भ्रम हैं। एकता की यह अनुभूति आध्यात्मिक मुक्ति की प्राप्ति के लिए केंद्रीय है। एतरेय उपनिषद के तृतीय अध्याय के प्रथम खंड में कहा गया है कि 'प्रज्ञानं ब्रह्म', अर्थात् ब्रह्म रूपी सत्य को जानने की चरम सीमा ही प्रज्ञान है। ऐतरेय उपनिषद चेतना (प्रज्ञान) और ब्रह्म के बीच की पहचान पर प्रकाश डालता है। यह ब्रह्मांड की अंतर्निहित वास्तविकता के रूप में चेतना की आंतरिक प्रकृति को रेखांकित करता है। ब्रह्मांड में सब कुछ आपस में जुड़ा हुआ है और अंततः व्यक्तिगत स्व और परम वास्तविकता के बीच कोई अलगाव नहीं है। यह शिक्षा सभी प्राणियों के प्रति एकता और करुणा की भावना को बढ़ावा देती है, एक सामंजस्यपूर्ण और संतुलित जीवन शैली को बढ़ावा देती है।

आध्यात्मिक शुद्धि और आत्म–अनुशासन :– यह उपनिषद आध्यात्मिक शुद्धि और आत्म–अनुशासन पर भी प्रकाश डालता है। इसमें ध्यान और आत्म–नियंत्रण शामिल हैं जिससे व्यक्ति अपनी भौतिक सीमाओं को पार कर सकते हैं और अपने उच्च स्व से जुड़ सकते हैं, जिससे आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त हो सकता है। जब प्राणी अपनी आत्मा को अपने मन, वचन और कर्म के द्वारा परमात्मा की ओर ले जाता है तो वहां मन, वचन और कर्म शुद्ध होते हैं, जिसके कारण जीवन में अनुशासन आता है।

यह उपनिषद स्वयं की वास्तविक प्रकृति को समझने के

अग्रदूत के रूप में आंतरिक परिवर्तन के महत्व पर जोर देता है। यह सिखाता है कि मुक्ति बाहरी अनुष्ठानों या कार्यों से नहीं बल्कि मन की शुद्धि और आध्यात्मिक ज्ञान से प्राप्त होती है। स्वयं की वास्तविक प्रकृति को समझकर, व्यक्ति जन्म और मृत्यु (संसार) के चक्र को पार कर सकता है और मुक्ति (मोक्ष) प्राप्त कर सकता है। व्यक्ति स्वयं को आत्म–जांच और आत्मनिरीक्षण के माध्यम से इस सत्य को महसूस करने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है। व्यक्ति परम शांति और खुशी प्राप्त कर सकता है। आत्म–साक्षात्कार को मानव जीवन के अंतिम लक्ष्य के रूप में देखा जाता है और इसे सत्य पूर्णताः की कुंजी माना जाता है।

नैतिक आचरण (धर्म) :– ऐतरेय उपनिषद एक धार्मिक और सदाचारी जीवन जीने में नैतिक आचरण (धर्म) के महत्व को रेखांकित करता है। यह सिखाता है कि आध्यात्मिक विकास और आत्म–प्राप्ति के लिए नैतिक सिद्धांतों और धार्मिकता का पालन आवश्यक है। यह दुनिया में सद्भाव और संतुलन बनाए रखने में धार्मिक आचरण के महत्व को रेखांकित करता है।

वैराग्य (वैराग्य) :– उपनिषद, सांसारिक इच्छाओं और आसक्तियों से रहित वैराग्य के गुण की प्रशंसा करता है। यह वर्णित करता है कि सच्ची खुशी और संतुष्टि, भौतिक संपत्ति के प्रति लगाव को छोड़कर आध्यात्मिक विकास पर ध्यान केंद्रित करने से आती है। ऐतरेय उपनिषद की शिक्षाएँ, विशेष रूप से वैराग्य और स्वयं की अनित्यता से संबंधित शिक्षाएँ, बौद्ध धर्म की शिक्षाओं के समान हैं। बौद्ध धर्म दुख से मुक्ति पाने के साधन के रूप में नैतिक आचरण, ध्यान और आत्म–बोध के महत्व पर ही जोर देता है।

ज्ञान (विद्या) :– ऐतरेय उपनिषद मुक्ति प्राप्त करने में ज्ञान (विद्या) के महत्व पर जोर देता है। यह सिखाता है कि सच्चा ज्ञान केवल बौद्धिक समझ नहीं है, बल्कि ब्रह्म के समान स्वयं (आत्मन्) की प्राप्ति है। आचरण और परिचर्या तो केवल अंतर शुद्धि के लिए हैं, परन्तु ज्ञान के बिना कोई भी मुक्त नहीं हो सकता। जीव ज्ञान, गुरु की शरण से, शास्त्रों के अध्ययन से, विचार–ध्यान से, निर्विकल्प समाधि आदि द्वारा प्राप्त करके अपने आत्मस्वरूप को जान पाता है और ब्रह्म के साथ एकत्व को प्राप्त करता है। ऐतरेय उपनिषद ज्ञान के अधिकारी को ही संन्यासी मानता है।

योग :– ऐतरेय उपनिषद में सिखाए गए आत्म–बोध, नैतिक आचरण और वैराग्य के मूल्य भी योग में मूलभूत सिद्धांत हैं। योग, जैसा कि पतंजलि के योग सूत्र में बताया गया है, का उद्देश्य ध्यान और आसन जैसी प्रथाओं के माध्यम से मन, शरीर और आत्मा का एकीकरण करना है। इन प्रथाओं का उद्देश्य आत्म–बोध प्राप्त करना और जन्म और मृत्यु के चक्र से मुक्ति पाना है।

एकता और सद्भाव :– अस्तित्व की एकता और प्रकृति के साथ सद्भाव में रहने का मूल्य, जैसा कि ऐतरेय उपनिषद में उल्लेखित किया गया है, का पर्यावरणीय नैतिकता और स्थिर जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। यह सभी जीवन रूपों के अंतर्संबंध और पर्यावरण के सम्मान और संरक्षण के महत्व पर जोर देता है।

कर्म का सिद्धांत :– ऐतरेय उपनिषद कर्म के सिद्धांत पर भी चर्चा करता है, जो कहता है कि प्रत्येक कर्म का फल मनुष्य को भोगना पड़ता है, हमारा जीवन हमारे द्वारा किए गए कर्मो का ही परिणाम होता है , हम जो बोते हैं वही काटते हैं। यह धार्मिक कार्यों (धर्म) को करने और नैतिक जीवन जीने के महत्व पर जोर देता है। कर्म का सिद्धांत व्यक्तिगत जिम्मेदारी के विचार पर प्रकाश डालता है और ईमानदारी तथा सदाचार का जीवन जीने के महत्व को रेखांकित करता है।

विश्व का भ्रम (माया) :– उपनिषद माया, दुनिया के भ्रम की अवधारणा पर भी चर्चा करता है। यह शिक्षित करता है कि दुनिया वैसी नहीं है जैसी दिखती है और अंतिम वास्तविकता इंद्रियों की समझ से परे है। यह शिक्षा व्यक्ति को जीवन के सतही और क्षणिक पहलुओं से परे देखने और उससे परे गहरे सत्य की तलाश करने के लिए प्रोत्साहित करती है।

ध्यान व चिंतन :– ऐतरेय उपनिषद स्वयं की वास्तविक प्रकृति को समझने के साधन के रूप में ध्यान के महत्व पर जोर देता है। यह ज्ञान देता है कि ध्यान के माध्यम से, व्यक्ति मन की सीमाओं को पार कर सकता है और ब्रह्म की शाश्वत और अपरिवर्तनीय वास्तविकता का अनुभव कर सकता है। ध्यान को आध्यात्मिक विकास और आत्म–खोज के लिए एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में देखा जाता है।

ऐतरेय उपनिषद में उद्धृत मूल्य भारतीय दर्शन और आध्यात्मिकता के समृद्ध संदर्भ में उत्कृष्ट स्थान रखते हैं। ये मूल्य वेदांत, योग और बौद्ध धर्म सहित विभिन्न दार्शनिक शाखाओं और आध्यात्मिक पद्धतियों का अवलंब बनते हैं तथा द्वैत वेदांत , अद्वैत वेदांत व विशिष्टाद्वैत वेदांत सहित विभिन्न दार्शनिक परंपराओं को गहराई से प्रभावित करते है। ऐतरेय उपनिषद में अस्तित्व की प्रकृति और जीवन के उद्देश्य को समझने के लिए दार्शनिक आधार का स्तंभ विद्यमान है। यह प्राणियों को अहंकार की सीमाओं को पार करने और स्वयं की वास्तविक प्रकृति को समझने के लिए एक मार्गदर्शन प्रदान करता है।

इसके अतिरिक्त, ऐतरेय उपनिषद में कथित नैतिक मूल्य, एक सद्वृत्तिशील और अर्थपूर्ण जीवन जीने के लिए मार्गदर्शक सिद्धांतों के रूप में कार्य करते हैं। ये मूल्य, सृष्टि के साथ सद्भाव रखते हुए प्राणी के भीतर सत्यता, धार्मिकता, अनुशासन इत्यादि गुणों को उन्नत करने के महत्व पर जोर देते हैं।

निष्कर्ष :–

ऐतरेय उपनिषद, वास्तविकता और स्वयं की प्रकृति में अपनी गहन अंतर्दृष्टि के साथ, एकता, आत्म–बोध, नैतिक आचरण, वैराग्य और ज्ञान जैसे मूल्यों के महत्व पर अनमोल शिक्षाएँ प्रदान करता है। भारतीय दर्शन और आध्यात्मिकता में गहराई से विद्यमान ये मूल्य प्राणियों को आध्यात्मिक विकास और ज्ञानोदय के मार्ग पर

प्रेरित करते रहते हैं। ये हमें प्राचीन धर्मग्रंथों में विद्यमान शाश्वत ज्ञान तथा सार्थक व पूर्ण जीवन की दिशा में मार्गदर्शन करने में उनकी प्रासंगिकता की याद दिलाते हैं। ऐतरेय उपनिषद में वर्णित मूल्यों को स्वयं में आत्मसात करके और उन्हें अपने जीवन में एकीकृत करके, व्यक्ति आत्म–खोज और आध्यात्मिक प्राप्ति की ओर सरलता से अग्रसर हो सकता है।

संदर्भ :–

एतरेयोपनिषद् , सानुवाद–शांकरभाष्यसहित, गीताप्रेस, गोरखपुर।

वैदिक साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डॉ० जयदेव विद्या अलंकार, हरियाणा साहित्य अकादमी, चंडीगढ़।

उपनिषदः एक परिचय, वेम्पटि कुटुम्बशास्त्री,राष्ट्रीय संस्कृत संस्थानम् , नई दिल्ली।

उपनिषदों का संदेशः, महात्मा आनंद स्वामी सरस्वती, विजय कुमार गोविंदराम हसनंद, नई दिल्ली।

उपनिषद् वाणी, स्वामी विष्णुतीर्थ जी महाराज, योग श्री पीठ आश्रम, ऋषिकेश।

ऐतरेय उपनिषद, स्वामी गम्भीरानन्द, अद्वैत आश्रम, कोलकाता।

डॉ0 सुमन

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत

आदर्श महिला महाविद्यालय, भिवानी।

(हरियाणा)

18

हिन्दी साहित्य में नारी विमर्श तथा इसकी महत्ता

रेनू

सारांश

हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री विमर्श जिसमें नारी जीवन की अनेक समस्याएं देखने को मिलती हैं।'नारी विमर्श' पर लिखने वाली पहली लेखिका महादेवी वर्मा है। हिन्दी साहित्य में छायावाद काल से स्त्री विमर्श का जन्म माना जाता है। महादेवी की रचना'श्रृंखला की कड़िया' नारी सशक्तिकरण का सुन्दर उदाहरण है।

प्रेमचन्द्र से लेकर आज तक अनेक पुरूष लेखकों ने स्त्री समस्या को अपना विषय बनाया लेकिन उस रूप में नहीं लिखा जिस रूप में स्वयं महिला लेखिकाओं ने लिखी है। अतः शुरूआती गुंज पश्चिम में देखने को मिला। सन् 1960 ई. के आस पास नारी सशक्तिकरण जोर पकड़ी जिसमें चार नाम चर्चित हैं– उशा प्रियवंदा, कृष्णा सोबती, मन्नू भण्ड़ारी एवं शिवानी आदि लेखिकाओं ने नारी मन की अन्तर्द्वन्द्वों एवं आप बीती घटनाओं को उकेरना शुरू किया और आज स्त्री–विमर्श एक ज्वलत मुद्दा है।

आठवें दशक तक आते–आते यही विषय एक आन्दोलन का रूप ले लिया जो शुरूआती स्त्री–विमर्श से ज्यादा शक्तिशाली सिद्ध हुआ। आज मैत्रेयी पुष्पा तक आते–आतेमहिला लेखिकाओं की बाढसी आ गयी जो पितृसत्ता समाजको झकझोर दिया। नारी मुक्ति की गुंज अब देह मुक्ति के रूप में परिलक्षित होने लगा।

सामाजिक सरोकारों से लैस बुद्धिजीवियों औरकार्यकर्ताओं के बीच लंबे समय से यह लगातार चर्चा और चिंता का विषय रहा है किहिन्दी में स्त्री प्रश्न पर मौलिक लेखन आज भीकाफी कम मात्रा में मौजूद है। स्त्री विमर्श की सैद्धान्तिक अवधारणाओं एवं साहित्य में प्रचलित स्त्री विमर्श की प्रस्थापनाओ की भिन्नता या एकांगीपन के संदर्भ में पहला प्रश्न यह उठता है कि हिन्दी साहित्य जगतमें स्त्री–विमर्श के मायने क्या है?साहित्य जिसे कथा, कहानी, आलोचना, कविता इत्यादि मानवीय संवेदनाओं की वाहक विधा के रूप में देखा जाता है वह दलित, स्त्री, अल्पसंख्यक तथा अन्य हाशिए के विमर्शो को किस रूप में चित्रित करता है। साहित्य अपने यथार्थवादी होने के दावे के बावजूद क्या स्त्री–विमर्श की मूल अवधारणाओं को रेखांकित कर उस पर आम जन के बीच किसी किस्म की संवेदना को विकसित कर पाने में सफल हो पाया है।

स्त्री के प्रश्न हाशिए के नहीं, बल्कि जीवन के केंद्रीय प्रश्न है। हिंदी साहित्य में मुख्यधारा जिसे वर्चस्वशाली पुरूष लेखन भी कहा जा सकता है, में स्त्री प्रश्नों अथवा स्त्री मुद्दों की लगातार उपेक्षा की जाती रही है। इसका अर्थ यह नहीं है कि स्त्री अथवा स्त्री प्रश्न सिरे से गायब है बल्कि यह है कि स्त्री की उपस्थिति या तो यौन(Sexual object)के रूप में है या यदि वह संघर्ष भी कर रही है तो उसका संघर्श बहुत अधिक पितृसत्तात्मक, मनोसंरचना अख्तियार किए होता है। संघर्ष करने वाली स्त्री की निर्मिति ही पितृसत्तात्मक होती है। साहित्य की पितृसत्तात्मक परम्परा में लगातार स्त्री प्रश्नों का हास होता क्यों दिख रहा है?क्या स्त्री विमर्श को देह केंद्रित विमर्श के समकक्ष रखकर स्त्री–विमर्श चलाने के दायित्वों का निर्वाह किया जा सकता?यदि साहित्य का कोई सामाजिक दायित्व है तो हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श के नाम स्त्री देह को बेचने व स्त्री को सेम्सुअल ऑब्जेक्ट अथवा मार्केट के उत्पाद के रूप में तब्दील कर दिए जाने की जो पूँजीवादी पितृसत्तात्मक बाजारवादी रणनीति काम कर रही है उस मानसिकता से यह मुक्त क्यों नहीं है?उसको पहचानकर उसके सक्रिय प्रतिरोध से वास्तविक स्त्री– विमर्श संभव है। सत्तर के दशक में नवसामाजिक आंदोलन के रूप में समतामूलक समाज निर्माण के स्वप्न को लेकर उभरे स्त्रीवादी आंदोलनों की चेतना एवं अनेक मुद्दों को जाने–अनजाने नजरअंदाज करने का प्रयास किया जा रहा है।

साहित्य में महिला लेखन के रूप में उपलब्ध विभिन्न कहानियों, कविताओं तथा आत्मकथाओं में स्त्री की दैहिक पीड़ा से परे जाकर उसकी वर्गीय, जातीय एवं लैंगिक पीड़ा का वास्तविक स्वरूप प्रतिबिंबित नहीं हो पा रहा है।

साठ के दशक में पुरूष वर्चस्ववाद की सामाजिक सता और संस्कृति के विरूद्ध उठ खड़े हुए स्त्रीयों के प्रबल आंदोलन को नारीवादी आंदोलन का नाम दिया गया। वस्तुतः नारीवादी आंदोलन एक राजनीतिक आंदोलन है जो स्त्री की समाजिक, आर्थिक राजनीतिक एवं दैहिक स्वतंत्रता का पक्षधर है। स्त्री मुक्ति अकेले स्त्री की मुक्ति का प्रश्न नहीं है बल्कियह संपूर्ण मानवता की अनिवार्य शर्त है। दरअसल यह अस्मिता कीलड़ाई हैं इतिहास ने यह साबित भी किया है कि आधी आबादी की शिरकत के बगैर क्रांतियाँ सफल नहीं हो सकती।

भारतीय राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौर में अपनी जातीय अस्मिता की पहचान और जनता के अधिकारों की माँग के साथ–साथ स्त्री मुक्ति का स्वपन भी देखा जा रहा था। औरत पर आर्थिक, सामाजिक, यौन उत्पीड़न अपेक्षतया अधिक गहरे, व्यापक, निरंकुश और संगठित रूप से कायम है। स्त्री आंदोलनों को इन समस्त चुनौतियों से लड़कर ही अपनी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करना होगा। निश्चित रूप से इसका स्वरूप अन्य मुक्तिकामी आंदोलनों से किसी रूप में भिन नहीं है जो वर्गीय, जातीय, नस्लीय आधार पर समाज में हो

रही हिंसा एवं असमानता के प्रति संघर्षरत है तथा एक समतामूलक समाज निर्माण हेतु प्रतिबद्ध है।

हिन्दी साहित्य स्त्री समस्या

हिंदी साहित्य में स्त्री–विमर्श की शुरूआत छायावाद काल से माना जाता हैमहादेवी वर्मा की कविताओं में वेदना का विभिन्न रूप देखने को मिलता है। महादेवीवर्मा की रचना 'श्रृंखला की कड़िया' स्त्री सशक्तिकरण का सुंदर उदाहरण है। जिसमें नारी–जागरण एवं मुक्ति के सवाल को उठाया गया है। ऐसा साहित्य जिसमें स्त्री जीवन की अनेक समस्याओं का चित्रण ही स्त्री विमर्श कहलाता है।

प्रेमचन्द से लेकर राजेन्द्र यादव तक अनेक लेखकों ने नारी समस्या को उकेरा है। लेकिन उस रूप में नहीं जिस रूप में स्वयं महिला लेखिकाओं ने लेखनी चलायी है।हिन्दी कथा–साहित्य मे नारी मुक्ति को लकर स्त्री–विमर्श की गुंज 1960ई० में हुआ था। जिसमे चार नाम चर्चित है– उशा, प्रियवंदा, कृश्णा सोबती, मन्नू भण्ड़ारी एवं शिवानी। ये नारी मन के छिपे शक्तिओं को पहचान और नारी की दिशाहीनता, दुविधाग्रस्तता, कुण्ठा आदि का विश्लेशण किया।

हिंदी पद्य व गद्य में नारी विमर्श

समाज के दो पहलू स्त्री–पुरूष एक दूसरे के पूरक है। किसी एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व नहीं है। उसके बाद भी पुरूश ने महिला समाज को अपने बराबर की समानता से वंचित रखा। यही पक्षपात दृष्टि ने शिक्षित नारियों को आंदोलन करने को मजबूर किया जो आज ज्वलंत मुद्दानारी –विमर्श के रूप में दृष्टिगोचर है।

आदिकाल से ही नारियों की दशा दयनीय एवं सोचनीयथी। स्त्रियों की दशाको देखकर विवेकानंदकहते हैं– स्त्रियों की अवस्थाको सुधारे बिना जगत के कल्याण की कोई सम्भावना नहीं है। पक्षी के लिए एक पंख से उड़ना संभव नहीं है।''[1]

मां–बाप ने पैदा किया था गूंगा
परिवेश ने लंगड़ा बना दिया
चलती रही परिपाटी पर
बैसाखियां चरमराती है।
अधिक बोझ से अकुलाकर
विस्कारित मन हुंकारता है
बैसाखियों को तोड़ दूं।।''[2]

उपर्युक्त कविता स्त्री–जीवन की वास्तविकता को प्रदर्शित रही है। स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी गद्यकार एवं कवि रघुवीर सहायजी नारी जीवन की वास्तविकता को दर्शाते है।

रघुवीर सहाय जी ने अपने काव्य में स्वतंत्रता के बाद स्त्री जीवन की अनेक समस्याओं को विषय बनाया है। जिस भारत में स्त्री वैदिक काल में ''यत्र नार्यस्तु पूज्यंते तंत्र रमंते देवता'' कहा जाता था। आज वही अनेक शोषण का शिकार हो रही है। वह कहता है–

''नारी बेचारी है
पुरूष की मारी
तन से क्षुदित है
लपक कर झपक कर
अंत में चित्त है।''[3]

प्रस्तुत पंक्ति में कविवर सहाय जी नारी को बेचारी कहकर दयनीय दशा का वर्णन करते है जो अपने अधिकारों के लिए लड़ नहीं पाती। लेकिन वर्तमान में यह स्थिति परिवर्तित नजर आती है।

नारी लेखिकाओं का योगदान

हिन्दी कथा साहित्य में नारी विमर्श का जोर आठवें दशक तक आते–आते एक आंदोलन का रूप ले लिया आठवे दशक के महिला लेखिकाओं में उल्लेखनीय है – ममता कालिया, कृष्णा अग्निहोत्री, चित्रा मुद्दल,मणिक मोहनी, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, रमणिका गुप्ता, प्रभा खेतान आदि ये सभी लेखिकाओं ने नारी मन की गहराईयों, अन्तर्द्वन्द्वों तथा अनेक समस्याओं का अंकन किया है

नारी की स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए ब्रह्म समाज आर्य समाज थियोसोफिकल सोसायटी रामकृष्णमिशन तथा अनेक सरकारी संगठनों ने नारी शिक्षा पर जोर दिया, जिसका सकारात्मक परिणाम आया।

वंदना विथिका के शब्दों में

नारियों के लिए सबसे बड़ा अभिशाप उनकी अशिक्षा थी और उनकी परतंत्रका का प्रमुख कारण उनकी आर्थिक स्वतन्त्रता का अभाव था। आज स्थिति परिवर्तित हुई है। आज हर क्षेत्र का द्वार लड़कियों के लिए खुला है। वे हर जगह प्रवेश पाने लगी हैं– जमी से आसमां तक पृथ्वी से चांद तक (कल्पना चावला, सुनिता विलियम) उनकी पहुंच है।''[4]

स्त्री विमर्श वस्तुतः स्वाधीनता के बाद की संकल्पना है। स्त्री के प्रति होने वाले शोषण के खिलाफ संघर्ष है। डॉ. संदीप रणभिरकर के शब्दों में ''स्त्री–विमर्श स्त्री के स्वयं की स्थिति के बारे में सोचने और निर्णय करने का विमर्श है। सदियों से होते आए शोषण और दमन के प्रति स्त्री चेतन ने ही स्त्री–विमर्श को जन्म दिया है।''[5]

पितृसतात्मक व्यवस्था ने स्त्री समाज को हमेशा अंधकारमय जीवन जीने को मजबूर किया है। नारी अस्तित्व को लेकर अपने–अपने समय पर कई विद्वानों ने चिन्ता व्यक्त किया है। तुलसीदास जी ने ''ढोल गंवार, शूद्र पशु, नारी–सकल ताड़ना के अधिकारी'' कहकर नारी को प्रताड़ना के पात्र समझा है तो मैथलीशरण गुप्त जी ने–

''अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी

आंचल में है दूध और आंखों में पानी।''

कहकर नारी की स्थिति पर चिन्ता व्यक्त किया है।

डॉ ज्योति किरण के शब्दों में– इस समाज में जब स्त्रियाँ अपनी समझ और काबिलियत जाहिर करती है तब वह कुलच्छनी मानी जाती हैं, जब वह खुद विवेक से काम करती है तब मर्यादाहीन समझी जाती है। अपनी इच्छाओं, अरमानों के लिए जब वह आत्मविश्वास के साथ लड़ती है और गैर समझौतावादी बन जाती है, तब परिवार और समाज के लिए वहचुनौती बन जाती है।''[6]

निष्कर्ष

अतः कहा जा सकता है कि नारी आदिकाल से ही पीडित एवं शोषित रही है। पुरूष प्रधान समाज मान मर्यादा के आड़ में सदा उसे दबाकर रखना चाहा।कभी घर की इज्जत कहकर तो कभी देवी कहकर चार दीवारों के अन्दर कैद ही रखा। इन्हीं परम्परागत पितृसत्तात्यक बेड़ियों को लांघने की लड़ाई है स्त्री–विमर्श।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. आजकल मार्च 2013 –पृष्ठ 20
2. वहीं पृष्ठ 29
3. पंचशील शोध–समीक्षा –पृष्ठ– 82
4. आजकल मार्च 2013 पृष्ठ– 27
5. पंचशील शोध–समीक्षा पृष्ठ 87
6. पंचशील शोध समीक्षा पृष्ठ 61

रेनू पत्नी श्री सोनू मोर

एम०ए० (हिन्दी) Net,

गाँव–लुदाना,

जिल–जींद (हरियाणा)

फोन नं० –9728136065

बदलते भूमि उपयोग प्रतिरूप का कृषि पर प्रभावः रेवाड़ी जिले का एक भौगोलिक अध्ययन

19

अंजु, डॉ दीपा

सारांश

शोध सारः विविध आधारभूत प्राकृतिक संसाधनों में भूमि जिस पर सम्पूर्ण जीव–जगत् निर्भर करता है, एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है। यह मानव के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रगति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भूमि ही वह मंच है जिस पर मानवीय क्रियाकलाप होते हैं और मानव जाति का अस्तित्व और समृद्धि इसके इष्टतम उपयोग पर निर्भर है। भारत वर्ष में पर्याप्त भूमि क्षेत्र है लेकिन उसे उपयोगी और शाश्वत बनाये रखने के लिए उचित देखभाल की आवश्यकता है। इस शोध–पत्र में 2011–12 से 2021–22 के मध्य अध्ययन क्षेत्र के बदलते भूमि उपयोग प्रतिरूप का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन क्षेत्र मे अत्यधिक जनसंख्या दबाव के कारण भूमि उपयोग प्रतिरूप में असंतुलन बढ़ रहा है। चरागाह एवं अन्य चराई भूमि दिन–प्रतिदिन घट रही है। अकृष्य कार्यों में प्रयुक्त भूमि में 2.7ः की वृद्धि हुयी है। इस शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य अध्ययन काल (2011–12 से 2021–22) के दौरान भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन की रूपरेखा तैयार करना है।

शब्द कुंजी : प्राकृतिक संसाधनों, सांस्कृतिक, क्रियाकलाप, भूमि उपयोग प्रतिरूप, चरागाह,असंतुलन, समृद्धि, रूपरेखा।

प्रस्तावना :–

मानव एवं पशुओं की आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु खाद्यान्न, ईंधन, चारे एवं विभिन्न अन्य उत्पादों के लिए भूमि एक अत्यन्त मूल्यवान प्राकृतिक संसाधन है (NRSA] 2007)। यह एक सीमित, खण्डित एवं अनव्यकरणीय संसाधन है। जिसका उपयोग मानव सभ्यता के विकास के साथ ही खाद्य आपूर्ति एवं आवास के रूप में किया जाने लगा। भूमि ही वह मंच है जिस पर मानवीय क्रियाकलाप होते हैं और मानव जाति का अस्तित्व और समृद्धि इसके इष्टतम उपयोग पर निर्भर है। भूमि विभिन्न प्रकार के उपयोगों की अनुमति देती है और विभिन्न प्रकार के उद्देश्यों को पूरा कर सकती है। भूमि उपयोग की एक क्रिया–आधारित (।बजपअपजल–ईंमक) परिभाषा आर्थिक और पर्यावरणीय दोनों प्रभावों के विस्तृत मात्रात्मक विश्लेषण की अनुमति प्रदान करती है, साथ ही विभिन्न भूमि उपयोगों को विशिष्ट रूप से पहचान करने में सक्षम बनाती है (ष्।६ 1998)।

भूमि उपयोग का स्वरूप मानव सभ्यता के विकास और मानव की आवश्यकता के अनुसार परिवर्तित एवं परिमार्जित होता रहा है और होता रहेगा। यह परिवर्तन कृषि विकास और कृषि की अवस्थाओं के रूप में लक्षित हुआ है और साथ ही भविष्य में भी होता रहेगा। कृषि कार्य की विविधता एवं विशिष्टता भूमि–उपयोग के विकास कार्य एवं कम को व्यक्त करती है, जो व्यक्ति के जीवन–यापन की आवश्यकताओं से लेकर उसके आर्थिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक विकास को पूर्णतया प्रभावित किये हुए हैं (तिवारी, आर. सी. – सिंह, बी.एन. 2019)। रेवाड़ी क्षेत्रफल के आधार पर हरियाणा राज्य का बड़ा जिला है। भूमि संसाधनों पर बढ़ते भारी दबाव के फलस्वरूप कृषि के उत्पादन में गिरावट तथा भूमि की मात्रा एवं गुणवत्त में भी क्षय होता है जिससे भूमि प्राप्ति के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है। भारत में भूमि उपयोग सर्वेक्षण का कार्य मुख्यतः प्रो० स्टाम्प द्वारा ब्रिटेन में प्रयुक्त की गई भूमि उपयोग सर्वेक्षण सम्बन्धी शास्त्रीय विधि द्वारा प्रेरित हुआ है। देश में सर्वप्रथम भूमि उपयोग सर्वेक्षण एवं शोधकार्य का सूत्रपात प्रो० एस०पी० पटजी (1945–1952) द्वारा पश्चिम बंगाल के चौबीस परगना और हावड़ा जिलों में किया गया। आगे चलकर प्रो० वी०एल०एस० प्रकाशराव, प्रो० ओ०पी० भारद्वाज, प्रो० एम० शफी आदि विद्वानों ने भूमि उपयोग के क्षेत्र में महत्वपूर्ण शोध कार्य किये हैं। वर्तमान समय में भारत में भूमि उपयोग के अध्ययन में भौगोलिक सूचना प्रणाली और सुदूर संवेदन तकनीक का प्रयोग किया जाने लगा है। इस तकनीक द्वारा भूमि उपयोग का अध्ययन करने वाले भारतीय विद्वानों में प्रकासम (2010), त्रिपाठी – कुमार (2012, 2019), रावत एट.अल. (2013), जैसवाल – वर्मा (2013) आदि प्रमुख हैं।

इस शोध पत्र में रेवाड़ी जिले के भूमि उपयोग प्रतिरूप में हो रहे परिवर्तन का भौगोलिक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है तथा इस शोध पत्र में भूमि उपयोग परिवर्तन की गतिशीलता और कारणों का भी विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र :– रेवाड़ी जिला भारत के हरियाणा राज्य के 22 जिलों में से एक है। इसे 1 नवम्बर 1989 को हरियाणा सरकार द्वारा गुडगांव जिले से अलग किया गया था। यह राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र का भी हिस्सा है। जिले का प्रशासनिक मुख्यालय रेवाड़ी शहर है। जो जिले का सबसे बड़ा शहर भी है। मध्ययुगीन काल में, यह एक महत्वपूर्ण बाजारी शहर था। यह दक्षिणी हरियाणा में स्थित है। 2011 तक यह पंचकूला के बाद हरियाणा का दूसरा सबसे कम आबादी वाला जिला है। रेवाड़ी जिला 28°10′48′′ उत्तर से 76°3712′′ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। रेवाड़ी जिले का कुल क्षेत्रफल 1594 वर्ग किलोमीटर (615 वर्ग मील) है। इसकी कुल जनसंख्या 900332 है। जनसंख्या घनत्व 560 प्रति वर्ग कि.मी. (1.500 वर्ग मील) है। रेवाड़ी जिले का इतिहास दिल्ली के इतिहास का समकालीन है। महाभारत काल में रेवत नाम के एक राजा थे उनकी एक बेटी थी जिसका नाम रेवती था। लेकिन राजा प्यार से उसे रीवा बुलाते थे। राजा ने अपनी बेटी के नाम पर ''रीवा वाड़ी'' नामक शहर की स्थापना की। रीवा का विवाह भगवान कृष्ण के बड़े भाई बलराम के साथ हुआ और राजा ने ''रीवा वाड़ी'' शहर को अपनी बेटी को दहेज के रूप में दान कर दिया। बाद

में रीवा वाड़ी शहर रेवाड़ी बन गया। रेवाड़ी जिले में 7 ब्लाक खंड है, बावल, डहीना, धारूहेड़ा, जादूसाना, खोल, नाहर और रेवाड़ी है।

मानचित्र 1.1: अध्ययन क्षेत्र की अवस्थिति एवं विस्तार

स्रोत : आर्क जीआईएस पर आधारित

उद्देश्य =प्रस्तुत शोधपत्र के निम्नलिखित मुख्य उद्देश्य हैं

1. अध्ययन क्षेत्र में बदलते भूमि उपयोग प्रतिरूप का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. भूमि उपयोग प्रतिरूप में आ रहे परिवर्तनों के कारणों को जानना ।
3. भूमि उपयोग प्रतिरूप और जनदबाव के बीच अन्तर्सम्बन्ध का अध्ययन करना।
4. भूमि उपयोग प्रतिरूप में आये परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव जानना ।

ऑकड़ों के स्त्रोत तथा शोध विधि तंत्र :–

प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक ऑकड़ों पर आधारित है। भूमि उपयोग प्रतिरूप संबंधी ऑकड़े सांख्यिकीय पुस्तिका, अर्थ एवं संख्या प्रभाग राज्य नियोजन संस्थान, रेवाड़ी से प्राप्त किये गये है। राष्ट्रीय जनगणना 2011 तथा आर्थिक सर्वेक्षण 2020–21, रेवाड़ी से भी ऑकड़े लिये गये है।

यह शोधपत्र व्याख्यात्मक और विश्लेषणात्मक अनुसंधान पर आधारित हैं। भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन 2020–21 वर्षों के अध्ययन से प्राप्त कर विश्लेषण किया गया है। सांख्यिकीय गणना,तालिका, पाई चार्ट और मानचित्र का निर्माण कम्प्यूटर द्वारा किया गया है। तालिका संख्या 1.1 में रेवाड़ी जिले में भूमि उपयोग का विवरण दिया गया है।

तालिका संख्या 1.1: रेवाड़ी जिले में भूमि उपयोग (2020–21)

क्रम संख्या	भूमि उपयोग संवर्ग	क्षेत्रफल (000 हेक्टेयर में)	कुल प्रतिशत
1	वन	2000	1.25
2	कृषि योग्य बंजर भूमि	4000	2.50
3	वर्तमान परती भूमि	12000	7.52
4	अन्य परती भूमि	2000	1.25
5	ऊसर एवं कृषि के अयोग्य भूमि	104000	6.83
6	चरागाह	960	0.60
7	उद्योनो, बागों, वृक्षों एवं झाड़ियों का क्षेत्रफल	1240	0.77
8	शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	114200	71.13
9	कृषि के अतिरिक्त अन्य भूमि उपयोग	13000	8.15
	कल प्रतिवेदित क्षेत्रफल	159400	100:

स्रोत : जिला सांख्यिकी कार्यालय रेवाड़ी

भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तनः

वन : रेवाड़ी जिले में वनों का क्षेत्रफल 2000 हेक्टेयर है जो सम्पूर्ण क्षेत्रफल का 1.25 प्रतिशत है जिसमें ग्रामीण वनों का क्षेत्रफल 1638 हेक्टेयर तथा नगरीय वनों का क्षेत्रफल 362 हेक्टेयर है। सम्पूर्ण क्षेत्र में वनों के वितरण में असमानता देखने को मिलती है रेवाड़ी विकास खण्ड में सम्पूर्ण क्षेत्र के सर्वाधिक 1.21 प्रतिशत भाग पर वन है इसके बाद रेवाड़ी विकास खण्ड के 2.41 प्रतिशत, बावल विकास खण्ड के 6.43 प्रतिशत, नाहड़ विकास खण्ड के 5.62 प्रतिशत, जादुसाना विकास खण्ड के 5.20 प्रतिशत भाग पर वन है। इस क्षेत्र के सम्पूर्ण वनों का विकास भूमि संरक्षण के लिये किया गया है और उनको 'संरक्षित वनों की श्रेणी में रखा गया है।

कृषि योग्य बंजर भूमिः इसकी अंतर्गत वह भूमि आती है जो कृषि के लिए उपलब्ध थी अथवा जिस पर कृषि की जाती थी परंतु पिछले 5 वर्षों से उसे पर कृषि नहीं की जा रही है ऐसी भूमि प्रति होती है अथवा झाड़ियां जंगलों से ढकी होती है जिसका किसी कार्य हेतु प्रयोग नहीं करते हैं। 2020–21में यह 4000 हेक्टेयर जो कुल हेक्टेयर का 2.50: थी विभिन्न भूमि सुधार प्रक्रियाओं को अपनाकर इसे कृषि योग्य बनाया जा सकता है।

वर्तमान परती भूमिः इसके अंतर्गत वह कृषिगत क्षेत्र आता है जिस पर वर्तमान वर्ष में कृषि नहीं की गई है वर्तमान परती भूमि चक्रीय क्रम से किसानों द्वारा छोड़ी जाती है ताकि वह उन्हें अपनी उर्वरता को प्राप्त कर सके। रेवाड़ी जिले में 12000 हेक्टेयर क्षेत्र पर परती भूमि उपयोग में लाई जाती हैं जो कुल क्षेत्रफल का 7.52: हैं। वर्तमान परती वर्षा सिंचाई सुविधा एवं फसल चक्रण द्वारा प्रभावित होती है।

ऊसर एवं कृषि के अयोग्य भूमिः इसके अंतर्गत बंजर और कृषि के योग्य भूमियों जैसे पर्वत,मरुस्थलीय क्षेत्र, लवणीय मिट्टी आदि आती हैं ऐसी भूमि को कृषिगत भूमि में इन्हें परिवर्तित करने में अत्यधिक लागत आती है। अध्ययन क्षेत्र में अध्ययन क्षेत्र में ऊसर एवं कृषि की योग्य भूमि 104000 हेक्टेयर क्षेत्र पर पाई जाती है जो कुल क्षेत्रफल का जो कुल क्षेत्रफल का 6.83 प्रतिशत है।

चारागाहः जो भूमि चराई के लिए प्रयुक्त होती है चारागाह कहलाती है इस प्रकार की भूमि पर ग्राम पंचायत या सरकारों का स्वामित्व रहता है ग्रामीण क्षेत्रों में सार्वजनिक भूमि पर चराई के लिए प्रयोग करते हैं।अध्ययन क्षेत्र में 0.60: क्षेत्रफल पर चारागाह पाई जाती है।

इसके अतिरिक्त उद्यानों, बागानों, वृक्षों आदि कृषि के लिए अन्य भूमि उपयोग किया जाता है।

निष्कर्षः

अध्ययन क्षेत्र में जनाधिक्य एवं उनकी कृषि पर निर्भरता ने भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन किया है घटना कृषिगत क्षेत्र और बढ़ती जनसंख्या खाद्य संकट का कारण बन रहा है वन क्षेत्र और उसकी सदांता में तेजी से कमी हो रही है जिस कारण मृदा अपरदन, जल चक्र में व्यवधान, जैव विविधता की हानि, बाढ़, सूखा एवं जलवायु परिवर्तन आदि जैसी समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं यह विदित है कि वन्य केवल पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखते हैं बल्कि

ग्लोबल वार्मिंग को भी नियंत्रित करते हैं चरागाह एवं अन्य चिरई भूमि दिन प्रतिदिन घट रही है जिस कारण ग्रामीण क्षेत्रों में पशुपालन में समस्याएं आ रही हैं। एक कृषि कार्यों में प्रयुक्त भूमि में वृद्धि का मुख्य कारण औद्योगिकरण नगरीकरण एवं अवसंरचनात्मक विकास जैसे– सड़क, रेलवे, तालाब, बांध, आवास इत्यादि हेतु भूमि का प्रयोग करना है। निसंदेह नगरीकरण एवं विभिन्न विकास कार्यो ने लोगों के जीवन स्तर को सुधार है रोजगार दिए हैं परंतु इसके साथ कई समस्याएं जैसे कृषि भूमि वन क्षेत्र में कमी नगरीय जलाशयों पर अतिक्रमण प्रदूषण आदि भी उत्पन्न हुई हैं।

उपयुक्त समस्याओं से निपटने हेतु हमें योजना पर तरीके से भूमिका उपयोग करना होगा जिससे उपलब्ध भूमि का अनुकूलतम उपयोग किया जा सके सर्वप्रथम रेवाड़ी के निवासियों को परिवार नियोजन एवं प्रदेश सरकार की नई जनसंख्या नीति के विषय में जानकारी देकर जागरूक किया जाए जिससे जनसंख्या वृद्धि दर को कम से काम किया जा सके भूमि उपयोग प्रबंधन हेतु निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं।

(प) नगरीय विस्तार को सीमित करना।

(पप) कृषि में रासायनिक खाद के स्थान पर जैविक खाद को बढ़ावा देना।

(पपप) औद्योगिक कार्यों हेतु उन भूमिका प्रयोग किया जाए जो बंजर एवं अकृष्य हैं।

(पअ) निर्वनीकरण को रोकना एवं वृक्षारोपण को बढ़ावा देना।

(अ) कृषि हेतु आधुनिकतम विधियों एवं तकनीक का प्रयोग।

(अप) भूमि उपयोग की मानिट्रिग करना।

सन्दर्भ सूची

1- Azharuddin] S-K- 2015& Land use pattern in wastern Uttar Pradesh] Indian Journal of Research] Vol- 4 ¼12½- ISSN% 2250&1991-

2- Economic survey U-P- 2020&211

3- FAO ¼1998½- Aquaculture Production on statistics] 1987&1996- FAO] Rome- FAO Fisheries Circular No- 815] Rev&10] 197-

4- FAO/UNEP ¼1999½- Terminology for integrated resources Planning and management- FAO Rome

5- Jaiswal] J-K- & Verma] N- 2013- Land use change detection in Baragaon Block] Varansi district using remote sensing]

6- Kumar] I- ¼1986½ Land usc analysis% A Case study of Nalanda District- Bihar] India Publication- New Delhi] 64-

7- Lal] R-- ¼1995½ Erosion & Crop productivity relationships for soil of Africa- Soil sci-soc- A-M-J-] Vol- 59] PP- 661&667

8- NRSA] ¼2007½ Nation Wide Mapping of Land Degradation Using Multitemporal satellite Manual] Data Soils Division] National Remote Sensing Agency] Hyde rapad-

9- Prakasam] C- 2010& Land used and Land cover change detection through Remote sensing Approach- A case study of Kodaikanal Taluk] Tamilnadu] India

10- Rawat] J-S-] Biswas] V- & Kumar] M- 2013- Quantifying land use/ cover dynamics of nainital town ¼India½ using remote sensing and GIS techniques- Asian J- Geoinf- 13¼2½ 7&12-

11- Sharma] V-N- & Tiwari] A-K- 2013- Land use Pattern% Eastern Uttar Pradesh- Radha Publications-

12- Tripathi] D-K- & Kumar] M- 2012- Remote Sensing based analysis of land use/land cover Dynamics in Takula block] Almora district ¼Uttarakhand½- Journal of human ecology] Vol- 38 ¼3½] pp- 207&2012-

13- Tripathi] D-K- 2019- Land use/Land cover change detection using remote sensing and geographic information system] International Journal of Research in social sciences] Vol- 9¼3½ ISSN% 2249&2496-

14- Young] A- ¼1998½- Land Resources% Now and for the future- Cambridhe University Press] 319-

15- चौरसिया, महीप (2020) जनपद जौनपुर (300) में भूमि उपयोग प्रतिरूप का एक भौगोलिक अध्ययन,प्श्रत्तै, टवस. 08.

16. तिवारी, आर सी० और सिंह, बी० एन0 (2018) कृषि भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन, प्रयागराज पेज 75–971

अंजु[1], डॉ दीपा[2]

शोधार्थी[1], असिस्टेंट प्रोफेसर[2]

भूगोल विभाग

बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय

अस्थल बोहर,रोहतक

20

विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन में नारी सशक्तिकरण की आधारशिलाः सीता– एक समीक्षात्मक अध्ययन

रीतू रानी, प्रो० एस.के.वर्मा

सारांश

स्वामी विवेकानंद जी महिला सशक्तिकरण के समर्थक थे। स्वामीजी पर 'रामायण' की माता सीता के जीवन–दर्शन का विशेष प्रभाव था। इसलिए उन्होंने भारतकी नारीशक्ति को सशक्त बनाने के लिए माता सीता के विशेष गुणों जैसे ज्ञान, आत्मनिर्भर, वीरता,सहिष्णुता,सतीत्व,धर्म परायणता, ब्रह्मचारिणी बनने आदि की चर्चा अपने अनेक व्याख्यानों,पत्रों एवं वार्तालापों में की।उनका मानना था कि अगर हमारे देश की माँ, बेटी और बहनें माता सीता के जीवन से प्रेरणा लेकर और आधुनिक शिक्षा के माध्यमसे आत्मनिर्भर होकर जीवन पथ पर अग्रसर होंगी तो वे अपनी संतति,परिवार, समाज तथा राष्ट्र के लिए बेहतर संबल प्रदान करने का काम करेंगी।

स्वामी जी महिलाओं की शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। उनके अनुसार भारत में बालकों की शिक्षा के समान ही बालिकाओं को भी शिक्षा मिलनी चाहिए दोनों की शिक्षा में किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं होना चाहिए।

नारी शिक्षा की आवश्यकता क्यों?

स्वामी जी का जन्म गुलाम भारत में हुआ था। उस समय भारतीय नारियों की स्थिति अत्यंत चिंताजनक थी। परंतु वे जानते थे कि वैदिक काल से लेकर लंबी अवधि तक भारत में महिलाएँ अत्यंत शिक्षित, आदरणीय, चरित्रवान, पवित्र और महत्त्वपूर्ण थीं परंतु विदेशियों के विचारों के संक्रमण से भारतीय महिलाओं की स्थिति दयनीय हो गई। उन्होंने भारतीय महिलाओं के उत्थान के लिए शिक्षा को सबसे महत्त्वपूर्ण हल बताया। शिक्षा में भारतीय धर्म को केंद्र में रखने की उन्होंने अनुशंसा की। महिलाओं के लिए आर्थिक दबाव, सामाजिक दबाव, चिंता, कुपोषण, अशुद्ध–वायु, व्यायाम का अभाव, अज्ञानता एवं अंध–विश्वास जैसी समस्याएँ रोग, विषाद तथा अकाल मृत्यु का कारण बनती हैं। सभी प्रकार की समस्याओं का निदान एवं सम्मानजनक जीवन प्राप्त करने के लिए उन्होंने महिलाओं से शिक्षित होने का आह्वान किया।

स्वामी विवेकानंद के नारी–शिक्षा संबंधी उपयोगी विचार :

उन्होंने सीता के गुणों के माध्यम से स्त्री चरित्र का वर्णन इस प्रकार किया–

पवित्र एवं शुद्ध चरित्र :

स्वामी जी ने कहा, "सीता पवित्र थीं, यह कहना ईश निंदा है, वह तो स्वयं साकार पवित्रता थीं, सुंदरतम चरित्र को कभी पृथ्वी पर हुआ। भारतीय स्त्रियों को उनके जैसा पवित्र और शुद्ध होना चाहिए– सीता की पवित्रता अद्वितीय थी। सीता ने विपरीत परिस्थितियों में भी पवित्रता का दामन नहीं छोड़ा।"**जानासि च यथा भुद्धा सीता तत्त्वेन राघव।**

अर्थात् रघुनंदन वास्तव में तो आप जानते ही हो कि सीता शुद्ध चरित्र है।

निश्पापिनी / निरपराधीः

स्वामी जी ने महिलाओं को पाप–कृत्यों से दूर रहने की सलाह दी। उन्होंने सीता के समान निश्पाप जीवन बिताने का संदेश दिया। सीता के द्वारा जीवन में किसी भी प्रकार का अपराध बोध दिखाई नहीं देता, वे स्वयं कहती हैं–

ईर्श्यां रोशं बहिश्कृत्य भुक्त□शमिवोदकम्।
नय वां वीर विस्त्रब्धंः पापं मयि न विद्यते।।8।।

अर्थात् वीर! आप ईर्श्या और रोश को दूर करके पीने से बचे हुए जल की भाँति मुझे बिना किसी शंका के अपने साथ वन में ले चलिए। मुझमें ऐसा कोई पाप–अपराध नहीं है, जिसके कारण आप मुझे यहीं अयोध्या में त्याग कर चले जाएँ।

पतिव्रता :

सीता ने अपने जीवन में किसी अन्य पुरुष के शरीर का स्पर्श तक नहीं किया। वह पतिव्रता स्त्री थीं। नारी में नारीत्व का जो गुण है, वह सीता है। वे पवित्रता, निर्मलता, धैर्य एवं शांति की साक्षात् देवी थीं।

भर्ता तु खलु नारीणां गुणवान् निगुणोऽपिवा।
धर्म विमृशमानानां प्रत्यक्षं देवि दैवतम्।।8।।

(राजा दशरथ रानी कौशल्या से कहते हैं) पति गुणवान हो या गुणहीन, धर्म का विचार करने वाली सती नारियों के लिए प्रत्यक्ष देवता है।

सहिष्णुता :

स्वामी जी ने विश्व के अनेक देशों की यात्रा की और वहाँ के स्त्री–पुरुषों की व्यवहारगत और दार्शनिक विशेषताओं का बारीकी से अध्ययन किया और पाश्चात्य तथा भारतीय महिलाओं के अंतर पर प्रकाश डालते हुए कहा कि,'पश्चिम कहता है– कर्म करो,कर्म द्वारा अपनी शक्ति दिखाओ।' भारत कहता है,'सहिश्णुता द्वारा अपनी शक्ति दिखाओ।'मनुष्य कितने ज्यादा भौतिक पदार्थों का मालिक बन सकता है, इस विचारधारा का समर्थन पश्चिम ने किया और मनुष्य इतने कम साधनों में सुखी और संतुष्ट हो सकता है– इस प्रश्न का उत्तर भारत ने दिया।

न च मे भविता तत्र क□चत् पथि परिश्रमः।
पृश्ठतस्तव गच्छन्त्या विहार□ायनेश्विव।।11।।

(वन में राम के साथ जाने की जिद करने पर सीता कहती हैं) जैसे

है। भगवान बुद्ध के संदेश का उदाहरण देते हुए स्वामी जी कहते हैं– यदि तुम्हें कोई आहत करता है और तुम भी बदले की भावना से उसे नुकसान पहुँचाते हो तो क्या तुम्हारे घाव को इससे आराम मिलेगा? शायद नहीं। हाँ! दुनिया में एक पापकर्म में बढ़ोत्तरी अवश्य हो जाएगी। सीता इसी आदर्श की प्रतिनिधि थीं। पति के अत्याचारों का विरोध करने का उसके मन में तनिक भी विचार नहीं आया क्योंकि वह पतिव्रता थीं।

न पिता नात्मजो वात्मा न माता न सखीजनः।
इह प्रेत्य च नारीणां पतिरेको गतिः सदा।।

(सीता राम से प्रार्थना करते हुए कहती हैं) नारियों के लिए दोनों लोकों में एकमात्र पति ही आश्रय देने वाला है। पिता, पुत्र, माता, सखियां तथा स्वशरीर भी सच्चा सहायक नहीं है।

प्रासादाग्रे विमानैवां वैहायसगतेन वा।
सर्वावस्थागता भर्तुः पादच्छाया विशिश्यते।।9।।

(सीता राम से कहती हैं) ऊँचे–ऊँचे महलों में रहना, विमानों पर चढ़कर घूमना अथवा अणिमा आदि सिद्धियों के द्वारा आकाश में विचरना इन सबकी अपेक्षा स्त्री के लिए सभी अवस्थाओं में पति के चरणों की छाया में रहना विशेष महत्त्व रखता है।

भ्युश्रूशामेव कुर्वीत भर्तुः प्रियहिते रता।
एश धर्मः स्त्रिया नित्यो वेदे लोके श्रुतः स्मृतः।।27।।

(श्री राम वन में जाते समय माँ कौशल्या को पतिव्रता धर्म समझाते हुए कहते हैं) नारी को चाहिए कि वह पति के प्रिय एवं हित साधन में तत्पर रहकर सदा उनकी सेवा ही करें, यह स्त्री का वेदांत और सनातन धर्म है।

भर्ता तु खलु नारीणां गुणवान् निगुणोऽपि वा।
धर्म विमृशमानानां प्रत्यक्षं देवि दैवतम्।।8।।

(राजा दशरथ रानी कौशल्या से कहते हैं) पति गुणवान हो या गुणहीन, धर्म का विचार करने वाली सती नारियों के लिए प्रत्यक्ष देवता है।

सहिष्णुता

सीता ने कभी भी अपने दुःखों की चिंता नहीं की। वे सदा अपने पति के हित की मंगलकामना करती रहती थीं। उन्होंने अपने को राम में केंद्रीयभूत कर लिया था। वह समस्त दुःखों को झेलने वाली थीं। सीता में प्रतिहिंसा कभी नहीं थी। चाहे राम द्वारा इनका निर्वासन हो या वन में जंगली जानवरों और राक्षस–राक्षसियों का हिंसात्मक रवैया, उन्होंने कभी भी उग्र रूप धारण नहीं किया। वह भारतीय समाज के लिए सहिश्णुता के उच्चतम आदर्श के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

स्वामी जी ने विश्व के अनेक देशों की यात्रा की और वहाँ के स्त्री–पुरुषों की व्यवहारगत और दार्शनिक विशेषताओं का बारीकी से अध्ययन किया और पाश्चात्य तथा भारतीय महिलाओं के अंतर पर प्रकाश डालते हुए कहा कि, 'पश्चिम कहता है– कर्म करो, कर्म द्वारा अपनी शक्ति दिखाओ।' भारत कहता है, 'सहिश्णुता द्वारा अपनी शक्ति दिखाओ।' मनुष्य कितने ज्यादा भौतिक पदार्थों का मालिक बन सकता है, इस विचारधारा का समर्थन पश्चिम ने किया और मनुष्य इतने कम साधनों में सुखी और संतुष्ट हो सकता है– इस प्रश्न का उत्तर भारत ने दिया।

न च मे भविता तत्र कि□चत् पथि परिश्रमः।
पृश्ठतस्तव गच्छन्त्या विहार□ायनेश्विव।।11।।

(वन में राम के साथ जाने की जिद करने पर सीता कहती हैं) जैसे बगीचे में घूमने और पलंग पर सोने में कोई कश्ट नहीं होता, उसी प्रकार आपके पीछे–पीछे वन के मार्ग पर चलने में मुझे कोई परिश्रम नहीं जान पड़ेगा।

कुशकाशशरेशीका ये च कण्टकिनो द्रुमाः।
तूलाजिनसमस्पर्शा मार्गे मम सह त्वया।।12।।

रास्ते में जो कुश–कास, सरकंडे, सींक और काँटेदार वृक्ष मिलेंगे, उनका स्पर्श मुझे रूई और हिरण के चमड़े के समान सुखद महसूस होगा।

सती–साध्वी

सीता सतीत्व की प्रतिमूर्ति थीं। उन्होंने विपरीत परिस्थितियों में भी अपने सतीत्व की रक्षा की। राजा जनक की बेटी और राजा दशरथ की पुत्रवधू होकर भी उन्होंने वन में राजसी वस्त्रों के साथ जाना उचित नहीं समझा जबकि वनवास की आज्ञा तो केवल राम को दी गई थी। उन्होंने वन में पूर्ण रूप से साध्वी जीवन व्यतीत किया। रावण द्वारा अपहरण कर लिए जाने पर उन्होंने रावण की पत्नी बनना स्वीकार नहीं किया।

स्वयं तु भार्यां कौमारी चिरमध्युशितां सतीम्।
भौलूश इव माँ राम परेभ्यो दातुमिच्छसि।।8।।

श्री राम! जिनका कुमारावस्था में ही आपके साथ विवाह हुआ है और जो लंबे समय तक आपके साथ रही है उस मुझे अपनी सती–साध्वी पत्नी को आप औरत की कमाई खाने वाले नट की भाँति दूसरों के हाथ में सौंपना चाहते हैं?

अनुकरणीय एवं पूजनीय

छात्राओं के सामने सीता, सावित्री, दमयंती, अहिल्याबाई, मीराबाई जैसे आदर्श नारी चरित्रों को पढ़ाया जाना चाहिए जिससे वे भी उनके जैसा बनने का प्रयास करें। उनके त्याग का उपदेश देना होगा। युवक–युवतियों के अपरिपक्व मन के लिए सीता–राम तथा शिव–पार्वती उपासक प्रसंग सुनाना उपयोगी रहेगा, जिससे उनकी भी उच्चतम महत्त्वाकांक्षा सीता के समान शुद्ध, पवित्र और पतिपरायण बन जाए।

स्वामी जी के अनुसार देश में अन्य कोई पौराणिक कथा ऐसी नहीं है जिसने सीता की भाँति पूरे राष्ट्र को प्रभावित किया हो। सीता का चरित्र भारतीय जनमानस की नस–नस में, रक्त की एक–एक बूँद में प्रवाहित है। वह आगे कहते हैं, 'तुम संसार के समस्त प्राचीन साहित्य को छान डालो और भविष्य में भी संसार–साहित्य का मंथन कर सकते हो, किंतु तुम्हें सीता जैसा दूसरा चरित्र नहीं मिलेगा। यह अद्वितीय चरित्र भारत का केंद्रीय भाव है। इसलिए येसदा हमारी

बगीचे में घूमने और पलंग पर सोने में कोई कश्ट नहीं होता, उसी प्रकार आपके पीछे–पीछे वन के मार्ग पर चलने में मुझे कोई परिश्रम नहीं जान पड़ेगा।

सती–साध्वी :

सीता सतीत्व की प्रतिमूर्ति थीं। उन्होंने विपरीत परिस्थितियों में भी अपने सतीत्व की रक्षा की। राजा जनक की बेटी और राजा दशरथ की पुत्रवधू होकर भी उन्होंने वन में राजसी वस्त्रों के साथ जाना उचित नहीं समझा जबकि वनवास की आज्ञा तो केवल राम को दी गई थी। उन्होंने वन में पूर्ण रूप से साध्वी जीवन व्यतीत किया। रावण द्वारा अपहरण कर लिए जाने पर उन्होंने रावण की पत्नी बनना स्वीकार नहीं किया।

स्वयं तु भार्यां कौमारी चिरमध्युशितां सतीम्।
भौलूश इव माँ राम परेभ्यो दातुमिच्छसि।।8।।

श्री राम! जिनका कुमारावस्था में ही आपके साथ विवाह हुआ है और जो लंबे समय तक आपके साथ रही है उस मुझे अपनी सती–साध्वी पत्नी को आप औरत की कमाई खाने वाले नट की भाँति दूसरों के हाथ में सौंपना चाहते हैं?

अनुकरणीय एवं पूजनीयः

स्वामी जी के अनुसार देश में अन्य कोई पौराणिक कथा ऐसी नहीं है जिसने सीता की भाँति पूरे राष्ट्र को प्रभावित किया हो। सीता का चरित्र भारतीय जनमानस की नस–नस में, रक्त की एक–एक बूँद में प्रवाहित है। वह आगे कहते हैं,'तुम संसार के समस्त प्राचीन साहित्य को छानडालो और भविष्य में भी संसार–साहित्य का मंथन कर सकते हो, किंतु तुम्हें सीता जैसा दूसरा चरित्र नहीं मिलेगा। यह अद्वितीय चरित्र भारत का केंद्रीय भाव है। इसलिए येसदा हमारी राष्ट्रीय देवी भी बनी रहेगीं। स्त्री–चरित्र में जितने गुण एवं आदर्श होने चाहिए वे सब सीता की ही देन हैं। राम अनेक हो गए पृथ्वी पर सीता एक ही हुई।'भारत का बच्चा–बच्चा सीता के चरित्र से अवगत है, इसलिए मुझे अधिक बताने की आवश्यकता नहीं है। स्वामी जी आगे कहते हैं, चाहे हमारे सारे पुराण नष्ट हो जाएँ, यहाँ तक की हमारे वेद विलुप्त हो जाएँ किंतु जब तक भारत में ग्रामीण भाषा बोलने वाले पाँच भी हिंदू रहेंगे, तब तक सीता की कथा विद्यमान रहेगी। सीता का प्रवेश हमारी अस्थि मज्जा में हो चुका है। हम भी सीता की संतानें हैं। हमारी नारियों को आधुनिक भावों में रँगने की जो चेश्टाएँ हो रही हैं, सीता–चरित्र के आदर्श से भ्रष्ट करने की जो चेष्टा हो रही है, वे इसमें कभी सफल नहीं होंगे।

धर्मज्ञ एवं धर्म–परायणाः

हिंदू स्त्रियाँ बहुत ही आध्यात्मिक और धार्मिक होती हैं। कुमारियों को धर्म–परायण और नीति–परायण बनाना पड़ेगा, जिससे वे भविष्य में अच्छी गृहणी बनें। जिनकी माताएँ शिक्षित, धर्म–परायण और नीति–परायण होती हैं, उनके घर में बड़े लोग (महापुरुष) जन्म लेते हैं और आगे चलकर उनकी संतानें इन विषयों में और भी उन्नति कर सकेंगी। ये महिलाएँ साक्षात् महामाया माता जगत जननी का ही प्रतिरूप हैं। इन स्त्रियों का उत्थान न होने से क्या समाज की उन्नति होगी?

समान शिक्षा परमावश्यक :

पॅसाडेना, कैलिफोर्निया के शेक्सपियर क्लब हाउस में 18 जनवरी, 1900 को 'हिंदू नारी' विषय पर दिए गए भाषण में स्वामी जी ने कहा–सनातन धर्म में तो स्त्रियों को शिक्षा देने का निषेध नहीं है। लड़कियों को भी लड़कों के ही समान पढ़ाना चाहिए पुराने ग्रन्थों में तो यह भी लिखा मिलता है कि विद्यापीठों में दोनों साथ–साथ पढ़ने जाते थे।

वेदों में नर–नारी के बीच भेद नहीं किया गया है। उन्होंने गार्गी जैसी महान विदुषी का प्रसंग छेड़ते हुए कहा, आपको याद होगा कि किस प्रकार राजा जनक के दरबार में ब्रह्मवादिनी गार्गी ने याज्ञवल्क्य से प्रश्नपूछे थे, जिन्हें सुनकर वहाँ उपस्थित सभी विद्वान पुरुष हतप्रभ रह गए थे। इस तरह के प्रसंग तत्कालीन विदुशियों के माध्यम से नारी शिक्षा की उच्च व्यवस्था की ओर इशारा करते हैं तथा हमें यह शिक्षा देते हुए कहते हैं कि बेटे और बेटियों की शिक्षा समान रूप से होनी चाहिएँ'अभिज्ञान शाकुंतलम्' की 'शकुंतला' की विद्वत्ता का उदाहरण क्या भारत में प्राचीन काल से नारी शिक्षा के समर्थक होने का पुश्ट प्रमाण नहीं है?

वे मानते थे कि माना भारतीय महिलाओं की अनेक समस्याएँ हैं, परंतु उनमें से एक भी ऐसी नहीं है, जिनका हल जादुई शब्द 'शिक्षा' से न हो, परंतु इसके लिए 'वास्तविक शिक्षा' की व्यवस्था करनी होगी। स्त्रियों की अवस्था को बिना सुधारे दुनिया के भले की कोई आशा नहीं दिखती क्योंकि पक्षी के लिए एक पंख से उड़ना संभव नहीं है।

आत्मशक्ति का विकास :

स्वामी जी से एक बार प्रश्न पूछा गया कि आप नारियों की स्थिति से पूर्णतया संतुष्ट हैं?तो उन्होंने कहा,'हमें केवल नारियों के लिए शिक्षा का प्रचार और व्यवस्था करनी चाहिए। उस शिक्षा से नारियों को इतना सामर्थ्यशाली बना देना चाहिए कि वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से सुलझा लें। उनको अपनी समस्याओं को सुलझाने का अवसर प्रदान करो। किसी को उनके बीच में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। अपने जीवन की बाधाओं को अल्पतम करने की क्षमता भारतीय महिलाओं में भी उतनी ही है जितनी संसार की अन्य नारियों में।'प्रत्येक बालिका में ब्रह्म का दर्शन करो, उनकी ब्रह्म शक्ति को पहचानो और उनका विकास करो। अब तक तो उन्होंने

पराश्रित भाव से जीवन–यापन करना, छोटी–छोटी समस्याओं की आशंका पर आँसू बहाना सीखा है– अब उन्हें शिक्षा द्वारा आत्मनिर्भर एवं स्वाभिमानी बनना होगा।

सतीत्व की भावना का विकास :

वे मानते थे कि हिंदू स्त्रियाँ 'सतीत्व' के अर्थ को भली–भाँति समझती हैं क्योंकि सतीत्व उन्हें परंपरागत विरासत के रूप में मिला हुआ है। नारी के हृदय में सतीत्व का आदर्श सर्वोपरि रहना चाहिए जिससे वे इतनी दृढ़चरित्र बन जाएँकि चाहें वे विवाहित हों या कुमारी जीवन की हर अवस्था में अपने सतीत्व को डिगने से बचा सकें।

ब्रह्मचारिणी बनो :

स्वामी जी महिलाओं की धार्मिक शिक्षा पर विशेष बल देते थे इसलिए महिलाओं को ब्रह्मचर्य का पालन करने की सलाह देते थे, परंतु उन्होंने कड़े शब्दों में यही बात पुरुषों के लिए भी कही कि उन्हें भी ब्रह्मचर्य का पालन करना होगा, तभी समान रूप से धर्म की स्थापना होगी।

वेदैश्च ब्रह्मचर्यैश्च गुरूभिश्चोपकर्शितः।
भोगकाले महत्कृच्छ्रं पुनरेव प्रपत्स्यते।।84।।

(कैकयी द्वारा राम को वनवास का वर माँग लिए जाने पर राजा दशरथ विलाप करते हुए कहते हैं) हाय! अब तक तो श्री राम वेदों का अध्ययन करने, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने तथा अनेकानेक गुरुजनों की सेवा करने में संलग्न रहने के कारण दुबले होते चले आए हैं। अब जब सुखोपभोग का समय आया तो वन चले जाएँगे।

भुञ्शूशमाणा ते नित्यं नियता ब्रह्मचारिणी।
सह रंस्ये त्वया वीर नवेशु मधुगन्धिशु।।13।।

(सीता द्वारा वन में अपने साथ ले चलने की राम से प्रार्थना करने पर) वीर! नियमपूर्वक रहकर ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करूंगी और सदा आपकी सेवा में लगी रहूँगी। आपके साथ सुगंध से भरे हुए वनों में विचरुँगी।

देशभक्तिनी बनो:

स्वामी जी से जब नारियों के लिए संदेश देने को कहा गया तो उन्होंने कहा,'पुरुषों की भाँति नारियों को भी भारतवर्ष में विश्वास करना चाहिए, भारतीय धर्म में विश्वास करो, शक्तिशाली बनो, आशावान बनो और संकोच छोड़ो।'

अस्माभिर्दे□धर्मस्तु पूज्यताम्।।

(सीताराम को वन में वन के अहिंसामय धर्म का पालन करने का निवेदन करते हुए कहती है) हम लोगों को देश धर्म का ही आदर करना चाहिए।

विज्ञान एवं इतिहास का अध्ययन करें:

महिलाओं को विज्ञान, तकनीकी, शिल्प एवं गृहविज्ञान जैसे विषयों का ज्ञान दिया जाए जिससे वे इन विशयों से अपना भी भला करें और समाज का भी कल्याण करें।

परोपकारी बनो :

बालिकाओं के सामने बाल्यावस्था से ही परोपकार के उदाहरण प्रत्यक्ष रूप से प्रस्तुत करने चाहिए जिससे उनके अंदर परोपकार की भावना पल्लवित हो जाए। कोई भी कार्य जो परोपकार की भावना से किया जाना हो ऐसे कार्य के लिए भारतीय महिलाएँ बड़ी प्रसन्नता से और सफलतापूर्वक कोई भी विषय आसानी से सीख लेंगी और दूसरों का उपकार करने में खुशी–खुशी योगदान देंगी।

मातृत्व की भावना :

नारी में मातृ–प्रकृति का विकास अधिक है। वे ईश्वर की उपासना भी बालस्वरूप में करना पसंद करती हैं। वे माँगने में नहीं, देने में विश्वास करती हैं। इसलिए प्राथमिक शिक्षा देने के लिए महिला शिक्षिकाओं का कार्य अत्यधिक सराहनीय होता है। भारत में स्त्री पहले माता है बाद में कुछ और। इन मातृरूपा स्त्रियों की पूजा, सम्मान एवं प्रमाण करने से ही मनुष्य को मुक्ति मिलती है। गृह–लक्ष्मियों की पूजा के उद्देश्य से, उनमें ब्रह्म विद्या के विकास के निमित्त उनके लिए मठ बनवाकर जाऊँगा।

स्वामी जी ने भारत के समस्त नारियों को शिक्षित करके एक ऐसे नारी वर्ग का सपना देखा जिसमें भारतमाता एवं स्वयं नारियों का संपूर्ण कल्याण निहित हो, वह सपना था–

- भारत की आवश्यकतानुरूप महान निर्भीक नारियाँ तैयार करेंगे, जो वीरों को जन्म देकर गौरवशाली माता बनाने के योग्य हों। स्वामी जी ने नारियों से ऐसी अपेक्षा इसलिए की क्योंकि वे पवित्र और आत्मत्यागी होती हैं और उस शक्ति से परिपूर्ण हैं, जो भगवान के चरण छूने से आती हैं।
- नारियों की मानसिक स्थितियों का विकास करेंगे (शब्दों का रटना मात्र नहीं) जिससे वह इच्छा अनुसार विषयों में दक्षता का प्रशिक्षण ले सकें।
- ऐसी नारियों को तैयार करेंगे जो संघमित्रा, अहिल्याबाई, लीलाबाई, सीता तथा मीराबाई जैसी परम विदुषियों की परंपराओं को चालू रख सकें।
- वे पुरुषों के समान नारियों की शिक्षा में भी 'धर्म' को अंतरतम एवं अनिवार्य अंग मानते थे तथा शिक्षकों से अपील करते थे कि वे बालिका शिक्षा के आरंभ के दिनों में ही धार्मिक शिक्षा का बीज बो दें और उसे इस योग्य बनाएँ कि उसके जीवन की बाधाओं को वह अल्पतम करने में समर्थ हो सकें।
- उन्हें बहादुर बनाना होगा इसलिए आत्मरक्षा के गुण

सिखाने होंगे जिससे वे भी लक्ष्मीबाई की भाँति वीरांगना बन सकें।

उपसंहारः

'रामायण' हिंदू धर्म का अत्यंत प्राचीन धर्म ग्रंथ है,परंतु उसमें वर्णित सीता का व्यक्तित्व वर्तमान समय की महिलाओं के लिए आज भी आदरणीय, पूजनीय एवं प्रासंगिक है। वर्तमान समय मेंविज्ञान और भौतिकता का बोलवाला है जिसकी वजह से महिलाएं आत्मनिर्भर हुई हैं और उनकी स्थिति बेहतर वआधुनिक तोमानी जाने लगी है परंतु आज भी उनके जीवन में अनेक मनोवैज्ञानिक,सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक और आर्थिक समस्याएं चुनौती बनकर उनकी चिंता और परेशानियों को बढ़ा रही हैं।समाज महिलाओं से यहअपेक्षा करता है कि वे सीता की भांति गुणवती हों और महिलाएं समाज से यह अपेक्षा करती हैं कि वह उनको सीता के समान आदर, श्रद्धा, सम्मान और स्वाभिमानके साथ जीवन जीने का अधिकार दें। यह दोनों ही अपेक्षाएं तभी पूर्ण हो सकती हैं जब प्रत्येक नारी को सीता जैसी महान नारियों के व्यक्तित्व का अनुसरण करने का अवसर मिले। शिक्षा एक ऐसा हथियार है जिसमें किसी भी बालिका के सर्वांगीण विकास की पूर्ण क्षमता होती है इसलिए संपूर्ण शिक्षा–प्रक्रिया में नारी शिक्षा के न केवल व्यापक प्रबंध होने चाहिए बल्कि प्राचीन भारत की महान एवं विदुषी नारियों को पाठ्यक्रम में समुचित स्थान देकर वर्तमान नारियों के संतुलित व्यक्तित्व निर्माण में सहायता प्रदान की जानी चाहिए। पाठ्यक्रम में स्थान देने के साथ–साथ स्वयंमाताओं एवं महिला शिक्षिकाओं को सीता के गुणों को आत्मसात करके बालिकाओं के सामनेआदर्श प्रस्तुत करना होगा।

स्वामी जी के अनुसार सीता वास्तव में जन्मी थीं या नहीं, रामायण की कथा किसी ऐतिहासिक तथ्य पर आधारित है या कपोल कल्पित यह हम नहीं जानते पर इतना तो सत्य है कि सहस्त्रों वर्षों से सीता का चरित्र भारतीय राष्ट्र का आदर्श रहा है।

स्त्रियों की अवस्था को बिना सुधारेजगत के कल्याण की कोई संभावना नहीं है जगत् रूपी पक्षीके लिए एक पंख से उड़ना संभव नहीं है।

1.विवेकानंद साहित्य, खंड–1, पृष्ठ 301, खंड–7, पृष्ठ 144

2.श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, उत्तरकांड, अड़तालीसवाँ, सर्ग, पृष्ठ 803

3.श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण,अयोध्याकांड, सत्ताईसवाँ सर्ग, पृष्ठ 312

4.श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण,अयोध्याकांड, बासठवाँ सर्ग, पृष्ठ 409

5.विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–7, पृष्ठ 144

6.श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण,अयोध्याकांड, तीसवाँ सर्ग, पृष्ठ 318

7. विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–7, पृष्ठ 144

8. विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–6, पृष्ठ 37,181

9. विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–4, पृष्ठ 267–268, 317

10. विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–4 (267), खण्ड–7 (76),खण्ड–8 (277)

11. विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–4, पृष्ठ 269

12. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण,अयोध्याकांड, बारहवाँ सर्ग, पृष्ठ 262

13.श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण,अयोध्याकांड, सत्ताईसवाँ सर्ग, पृष्ठ 313

14.विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–4, पृष्ठ 269

15.श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण,अरण्यकाण्ड, पृष्ठ 572

16.विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–8, पृष्ठ 278

17.विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–3, पृष्ठ 277

18.विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–6, पृष्ठ 182

19विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–4, पृष्ठ 268

20विवेकानन्द साहित्य, खण्ड–8, पृष्ठ 277

शोधकर्त्री

रीतू रानी

शिक्षा विभाग, मानविकी संकाय

बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय

अस्थल बोहर, रोहतक

शोध–निर्देशक

प्रो० एस.के.वर्मा

शिक्षा विभाग, मानविकी संकाय

बाबा मस्तनाथ विष्वविद्यालय,

अस्थल बोहर, रोहतक

21

मॉरीशस में हिंदी और भारतीय संस्कृति,

डॉ0 उमेश कुमार सिंह

सारांश

मॉरीशस देश आप्रवासियों का देश है। मॉरीशसवासी किसी न किसी देश से विस्थापित रहे हैं। इस देश को आजादी बिना खून–खराबे के मिली थी 12 मार्च 1968 को मिली थी। इसलिए इस देश के लोग आपस में कभी नहीं लड़ते–झगड़ते हैं। इसका सबसे बड़ा कारण इनके पूर्वजों ने बहुत सी मुसीबतों का सामना किया है तथा मॉरीशसवासी अपने पूर्वजों की उन मुसीबतों से अनभिज्ञ नहीं हैं। इस देश में अफ्रीकी, चीनी, फ्रेंच, ब्रिटिश और भारत के लोगों की मिश्रित जनसंख्या वाले लोग निवास करते हैं किन्तु भारतीय मूल के लोग की संख्या दूसरे देशों के आप्रवासियों की तुलना में कहीं अधिक है. इसीलिए यहाँ पर बहुतायत में भोजपुरी मिश्रित हिंदी, क्रियोल, फ्रेंच, और इंग्लिश आदि भाषाएँ बहुतायत से बोली और समझी जाती है।

भारतीयों के आगमन के संबंध में विदेशी लेखक बरन ग्रंट ने अपने लेखन में जिक्र किया है कि 1769 में हिन्दुस्तान से बहुत से मद्रासी पांडिचेरी से तथा सन 1758 में बंगाल से बंगाली लोग आकर मॉरिशस में बस गए थे किन्तु इस देश में हिंदी का प्रारम्भ 1834 से माना जा सकता है क्योंकि इस वर्ष पहले भारतीय आप्रवासी ने आप्रवासी घाट पर अपना कदम रखा था। हिन्दुस्तान से शर्तबंदी कुली मजदूर के रूप में पहले तीन वर्ष के गिरमिट करार पर किन्तु बाद में पांच वर्ष के करार पर लाए गए थे। आज पूरे देश में ग्यारह भाषाएँ बोली जाती हैं जिनमें भोजपुरी, खड़ी बोली, तमिल, उर्दू, तेलुगू, मराठी, गुजराती, अंग्रेजी, फ्रेंच, चीनी तथा मिश्रित भाषा क्रियोल आदि प्रमुख हैं।

मॉरीशस में, अथवा मिरिच देश में भारत वंशियों को अधिक मजदूरी और पत्थर खोदकर सोना निकलने की बात कहकर धोखे से लाया गया था। "सोनवा के खातिर गइली विदेशवा, गलि गैलन सोनवा सरीर " अपने दुख और असहनीय कराह, पीड़ा को व्यक्त करते हुये गिरमिटिया मजदूर भोजपुरी में कहता है। उनकी इस आत्मग्लानि, पीड़ा और संवेदना की कसक को हमारे पूर्वज ही समझ सकते हैं जिंहोने यह पीड़ा भोगी होगी। वे कहते हैं कि मैं और मेरे जैसे सभी जहाजिया भाई सोने और अधिक मजदूरी के लालच में परदेश आए थे। मुझे और मेरे साथियों को सोना तो नहीं मिला किन्तु अब यह मेरा सोने जैसा शरीर गल चुका गई।

समाजिकता भारतवासियों की प्रमुख विशेषता होती है समाजिकता के अभाव में उनका जीवन संभव नहीं हो सकता है इसी कारण भारतवंशी लोग बहुत सामाजिक थे। वे दिन भर खेतों में कठोर परिश्रम करते थे और फिर शाम के समय सभी साथ मिलते थे, किस्सा–कहानियाँ सुनाते थे। उनका बैठने यही स्थान बैठका के नाम से जाना जाने लगा था, यह एक प्रकार से सामाजिक–सांस्कृतिक संस्था की तरह ही विकसित हुई। जहां वे लोग एक दूसरे से मिलते, एक दूसरे के साझीदार बनाते और अपनी थकान मिटाते थे।

मोहनदास करमचंद गांधी सन 29 अक्तूबर 1901 को डरबन से लौटते समय नौशेरी नामक जहाज से मॉरीशस में आए थे। वे पोर्ट लुईस में बन्दरगाह के निकट 21 दिन तक रुके थे। इतिहास इसका गवाह है कि गांधीजी ने मॉरीशस में रह–रहे भारतवंशियों को उनकी हिंदुस्तानी भाषा अर्थात हिंदी में संबोधित किया था। इस भाषण में उन्होने मॉरीशस के भारतीय मजदूर रह–वासियों को कुछ महत्वपूर्ण बातें बतलाई थीं जिनमें प्रथम बात अपने बच्चों को उचित शिक्षा दिलवाना तथा दूसरी बात देश की राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेना। उनकी इन बातों का समावेश अभिमन्यु अनत से अपने उपन्यास "गांधीजी बोले थे" में किया गया है। उसी समय मोहनदास करमचंद गांधी ने मॉरीशस के मोका डिस्ट्रिक्ट में भी भारतीय कुली मजदूरों को भी संबोधित किया था, उसी स्थान पर सन 1978 में महात्मा गांधी संस्थान की स्थापना की गई है।

भारत से हमारे पूर्वज मॉरीशस में शर्तबंद अथवा गिरमिटिया मजदूर के रूप में 1834 से लाने प्रारम्भ हुये थे, और यह सिलशिला 1934 तक जारी रहा था। यहाँ पर 19 वीं सदी का सबसे बड़ा विस्थापन हुआ था जिसमें 4 लाख पचास हजार मजदूरों का यहाँ लाकर बसाया गया था। आज मॉरीशस वासियों की जनसंख्या 14 लाख हो गई है। मॉरीशस को आज मॉरीशस को कुल 09 जिले में विभक्त किया जा चुका हैं जिनमें 1 फलक 2 ग्रेंड पोर्ट 3 मोका, 4 पम्प्लेमुस, 5 रिव्योर ज्यू राम्पार, 6 रिव्योर नौयर (ब्लेक रिवर) 7 सावन, 8 पोर्ट लुईस 9 पलेनस विलहम तथा इन सभी जिलों में 150 के लगभग आधुनिक गाँव हैं।

भारत के अतिरिक्त देशों में बोली जाने वाली हिंदी की दृष्टि से मॉरिशस सबसे आगे है। यही वह देश है जहां सबसे पहले हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति जागरूकता आई थी। इस देश में भारत से मोहनदास करमचंद गांधी द्वारा डॉक्टर मणिलाल को सन 1907 में भेजा गया था। देश का प्रथम हिन्दी समाचार पत्र 'हिन्दुस्तानी'डॉक्टर मणिलाल ने सन 1909 में पत्र प्रकाशित किया गया था। यह पत्र अंग्रेजी एवं हिंदी में एक साथ छपता था। इस पत्र के प्रथम संपादक डॉक्टर मणिलाल थे। इस समय तक गांधी जी की श्रीकृति से विश्व में फैल चुकी थी। इस पत्र के प्रकाशन से मॉरीशस के लोगों में अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूकता आई थी। डॉक्टर मणिलाल वेरिस्टर होने के नाते कुली मजदूरों की बात, उनकी हिन्दी भाषा में सुनकार सरकार के समक्ष बात रखते थे। इस पत्र प्रकाशन के बाद मजदूरों पर कोठी के मालिकों के द्वारा होने वाले अत्याचारों में कुछ

कमी अवश्य आई थी।

आज इस देश में भारतीय मूल के गिरमिटिया भारतवंशियों की पाँचवीं और छठी पीढ़ी निवास कर रही है। इस देश के लोग 1968 तक अर्थात स्वतंत्र होने से पूर्व तक भारत का राष्ट्रीय गान "जन गण मन अधिनायक जय हो, भारत भाग्य विधाता" बड़े सोहार्द्र और प्रेम पूर्वक राष्ट्रगान को गा कर और मन में गुन गुनाकर गर्व का अनुभव किया करते थे। आज विश्व में मॉरीशस की एक देश रूप में तथा भारत के लिए सामरिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण एवं प्रजातांत्रिक देश है। इस देश के लोग मीठी बातें करते हैं इसका कारण संभवतः पूरे देश में गन्ने कि खेती करने का कारण समझा जा सकता है।

हिंदी के विकास के सन्दर्भ में मॉरिशस में "बैठका" कैसे अस्तित्व में आई और वह कैसे हिंदी के साथ जुड़ गई। 'बैठका' के अस्तित्व में आने के इतिहास पर एक दृष्टि डालना अति आवश्यक हो जाता है क्योंकि भारत में 'बैठक' वह स्थान है जहाँ पर पुरुष समाज के लोग अपने समाज के अन्य लोगों के साथ बैठकर चर्चा–परिचर्चा अथवा दूसरे शब्दों में विचार विनिमय किया करते हैं। मॉरिशस के लेखक पूजानंद नेमा ने बैठका की परिभाषा इस प्रकार दी है "बैठक भारतीय आप्रवासियों के सामाजिक जीवन में न केवल एक शैक्षिक संस्था है, बल्कि भारतवंशियों के सम्पूर्ण विकास का स्रोत भी है.

अब हम इस देश की हिंदी बैठकाओं के बारे में चर्चा करेंगे। इन चीनी मिलों में काम करने वाले गिरमिट कुली मजदूर शाम को काम के बाद खाने के उपरांत बैठक में मिलते थे, वही पर अपने दुःख दर्द और कथा भागवत, सलाह–मशबिरा और हिंदी की चर्चा आदि किया करते थे । यही वह बिंदु है जहां से हिंदी सीखने सिखाने का सूत्रपात हुआ था। इसी स्थान से हिंदी गई तो धर्म गया का नारा पैदा हुआ था। इस कार्य से चीनी कोठियों के मालिक नाराज रहा करते थे। उन्होंने कुछ समय उपरांत इस बैठका पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया था किन्तु इस सबके बाद भी कुलियों ने आपस में मिलना जुलना नहीं छोड़ा था। पहले वे खुलकर एक दूसरे से मिलते थे, किन्तु प्रतिबन्ध लगाने के बाद वे सभी छिपकर मिला करते थे। इस बैठका की बदौलत आज मॉरिशस में हिंदी, भोजपुरी जीवित ही नहीं है बल्कि उनमें जागरूकता भी आई है. इस बात का जिक्र अभिमन्यु अनत ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास लाल पसीना में भी किया है। इस प्रकार साहित्य में इन साक्ष्यों की उपस्थिति के प्रमाण देखे जा सकते हैं।

आज मॉरिशस में हिंदी की जो स्थिति और प्रचलन है, उसके पीछे सही मायने में 'बैठका' से हिंदी की शुरुआत हुई थी, इस बात की पुष्टि इतिहास के कुछ तथ्यों एवं साक्ष्यों के द्वारा की जा सकती है. इस देश में आज हिंदी के शिक्षण प्रशिक्षण के लिए चार संस्थाएं कार्य कर रही हैं जिनमें हिंदी प्रचारिणी सभा, आर्य सभा, आर्य रवि वेद सभा एवं महात्मा गाँधी संस्थान इत्यादि, हम इन संस्थाओं में से किसी के कार्य को कम अथवा अधिक नहीं माप सकते हैं क्योंकि हिंदी शिक्षण प्रशिक्षण के इस महायज्ञ में इन संस्थाओं ने भरपूर योगदान दिया है. इसके लिए पूरा समाज उनका ऋणी रहेगा । इन स्वयं सेवी संस्थाओं और सभाओं का संक्षिप्त विवरण जानकारी के लिए प्रस्तुत की जा रहा है।

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि श्री तुलसीदास कृति श्री रांचरितमानस के सस्वर पाठ और महात्मा गांधी और उनके विचारों से ऊर्जा पाकर मॉरीशस वासियों में चेतना जाग्रत हुई थी, हिंदी प्रचारिणी सभा मॉरिशस की हस्तलिखित पत्रिका दुर्गा के प्रथम अंक फरवरी 1935 से लेकर 1937 तक के अंक हाथ से लिखकर निकाले गए थे। उस पत्रिका के मुख पृष्ठ पर "भाषा हिंदी गई तो संस्कृति गई" मूल संदेश लिखा हुआ है।यह संस्था मॉरीशस में आज तक निरूशुल्क हिंदी का प्रचार– प्रसार का कार्य करती है। इस हिंदी संस्था पर प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से गांधीजी का प्रभाव परिलक्षित होता है। इस संस्था को श्री मंगर भगत ने अपनी जमीन दान देकर 1934 में भारत वंशियों की संतानों के पठन पाठन के लिए स्थापित किया था।

'हिंदी प्रचारिणी सभा मॉरीशस' संस्था का मुख्यालय लोंग माउंटेन, मॉरिशस में स्थित है वर्तमान में इस संस्था के प्रधान श्री यंत्रदेव बुद्दू है जो हिंदी को नई ऊंचाइयों पर ले जाने के लिए दृढ़ संकल्पित हैं. इस संस्था के संस्थापक श्री रामलाल मंगर हैं जिन्होंने इस सभा की स्थापना 26 जून 1926 को की थी। किन्तु संस्था का पंजीकरण 1934 में हुआ था। उसके तत्काल बाद से यह संस्था हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए कार्य कर रही है पूरे देश में इसकी कुल 187 शाखाएं हैं जिनमें हिंदी के पठन–पाठन का कार्य किया जा रहा है।

आर्य सभा मॉरिशस का मुख्यालय पाई, मॉरिशस में स्थित है इसकी स्थापना वर्ष 1910 हुई थी। प्रारंभ में इसका उद्देश्य आर्य सभा के उद्देश्यों का प्रचार – प्रसार करना था और इस प्रचार के लिए उन्होंने हिंदी भाषा को अपनाया था। इसके लिए सन 1934 में तिलक विद्यालय को एक राष्ट्रीय संस्था का रूप दिया गया। बाद में इसका नाम परिवर्तित करके हिंदी आर्य सभा कर दिया गया था। वर्तमान में इसके प्रधान डॉ. उदय नारायण गंगू जी है. इसकी पूरे देश में 400 शाखाएं हैं जिनमें से 175 शाखाओं में हिंदी के पठन–पाठन का कार्य चल रहा है।

आर्य रविवेद प्रचारिणी सभा, के वर्तमान में प्रधान श्री सत्यम गती हैं। यह संस्था, सादे मांस, पोस्ट ऑफिस के सामने, पोर्ट लुईस, मॉरिशस में स्थित है इस संस्था की स्थापना 1934 में हुई थी परन्तु पंजीकरण सन 1956 में हुआ था। तब से लेकर यह संस्था हिंदी के प्रचार प्रसार में लगी हुई है इस संस्था की पूरे देश में 130 शाखाएं है जिनमें हिंदी शिक्षण का कार्य किया जाता है। उनकी संख्या कुल 42 है तथा 14 शाखाएं छात्र न मिलने के कारण बंद हो गई हैं आज हिंदी बैठाकाओं के बंद होने की स्थिति का सामना लगभग सभी संस्थाएं कर रही हैं।इस देश में हिंदी के भविष्य के लिए चिंता जनक स्थिति है । इसके लिए अधिक से अधिक स्वयं सेवकों की आवश्यकता है जो सेवा भाव से हिंदी का प्रचार –प्रसार

कर सकें ।

मॉरीशस में महात्मा गांधी संस्थान मोका में ही संस्थान के दूसरी तरफ एक विशेष प्रकार का प्रशिक्षण संस्थान खोला गया है। यह उन विद्यार्थियों के लिए जो अधिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते हैं अथवा अधिक पढ़ नहीं पते हैं। उनके शिक्षण प्रशिक्षण के लिए एक विशेष प्रकार का विद्यालय महात्मा गांधीजी के नाम पर सरकार द्वारा खोला गया है जिसमें विद्यार्थियों के लिए दस्तकारी का प्रशिक्षण दिया जाता है ताकि वे छात्र भी समाज में अपना स्थान बनाने के साथ–साथ अपनी आजीविका कमाकर स्वावलंबी बन सकें।

मॉरिशस में मूर्त रूप से प्रत्यक्षतरू हिंदी तथा अन्य विषयों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए महात्मा गाँधी संस्थान, मोका का मॉरीशस का एकमात्र शिक्षण संस्था है इस संस्थान में सभी भाषाओँ के विशेषज्ञों की उपलब्धता है। यह संस्थान हिंदी के अतिरिक्त विभिन्न भाषाओँ और संस्कृतियों का प्रतिनिधित्व करता है. इसकी आधारशिला 3 जून 1970 को भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी तथा मॉरिशस के प्रधानमंत्री सर शिवसागर रामगुलाम के कर कमलों द्वारारखी गई थी. आज महात्मा गाँधी संस्थान, मॉरिशस में उच्च शिक्षा में हिंदी अध्ययन एवं अध्यापन के लिए पायोनीयर एवं अग्रणी संस्था मानी जाती है. वर्तमान में इस संस्थान के अध्यक्ष पद पर श्री जयनारायण मितू कार्यरत हैं. महानिदेशक के पद पर श्रीमती सूर्यकान्ति गयान, निदेशक के पद पर श्रीमती विद्योतमा कुंजल जी तथा रजिस्ट्रार के पद पर श्रीमती उमा कॉवलेसर जी सफलता पूर्वक कार्य कर रही हैं जिनके कुशल निर्देशन में यह संस्थान हिंदी शिक्षा के क्षेत्र में नित नए मानक स्थापित कर रहा है।

इस संस्थान की प्रगति के आकलन के आधार पर कहा जा सहता है कि आज यह संस्थान स्वतंत्र विश्वविद्यालय के रूप में कार्य करने की क्षमता रखता है तथा अध्ययन, अध्यापन और शोध के क्षेत्र में विकास की नित नई ऊंचाइया छू रहा है। आज यह संस्थान अपने छात्रों को मॉरिशस यनिवर्सिटी से डिग्री प्रदान करता है। इस संस्थान में बी. ए, एम. ए, एम. फिल तथा पी–एच.डी आदि की हिंदी की पढाई करने के लिए मॉरिशस में एकमात्र संस्था है इसके अतिरिक्त हिंदी के साथ–साथ उर्दू, तमिल, तेलगू, संस्कृत, फ्रेंच, इंग्लिश, भाषाओँ के विशेषज्ञ भी उपलब्ध हैं.

मॉरिशस में महात्मा गाँधी संस्थान, भारत सरकार के द्वारा स्थापित एक संस्था है परन्तु इसके अतिरक्त अन्य सभी संस्थाएं समाज द्वारा समाज के उत्थान के लिए खड़ी की गई थीं।

आज मॉरिशस में हिंदी के कई रूप देखने को मिल सकते हैं लेकिन आज जो रूप हिंदी का मॉरिशस में देखने को मिलता है उसमें फ्रेंच, अंग्रेजी,भोजपुरी और क्रियोल के शब्दों का प्रयोग भी यत्र तत्र दृष्टिगोचर होता है। मेरी दृष्टि में इस तरह का प्रचलन स्थानीय लोग अपनी सुविधा के लिए बेहिचक करते हैं। महात्मा गाँधी संस्थान में मुझे हिंदी चेयर के रूप में हिंदी पढ़ने और शोध कार्य किया था। संस्थान के वाहन चालक श्री के डू, श्री मांटू जी मुझसे हिंदी में ही बात करते थे, उनके द्वारा बोली जाने वाली हिंदी भी हिंदी का एक अलग रूप मां लिया जाय तो अतिशयोक्ति न होगी। जैसे – डोक्तेर पोर्ट लुईस में बड़का बड़का जहाज आता है।

मॉरीशस में गंगा तालाब को बहुत पवित्र माना जाता है जैसे भारत में गंगा को पवित्र माना जाता है. उसी तरह मॉरीशस में भी एक गंगा तालाब है। इन दोनों में अंतर इतना है। गंगा नदी है और गंगा तालाब एक तालाब है। उस तालाब को पवित्र मानते हुए शिवरात्रि के पवन पर्व के अवसर पर उस तालाब से पैदल जल लेकर, कांवर लेकर और कार से अपने गाँव में स्थित शिवालय में जल चढ़ाते हैं।उस अवसर पर पूरे मॉरीशस में वातावरण भक्तिमय हो जाया करता है। रास्तेभर खाना, फल, मिनरल वाटर, जूस, मिठाई, लोग बांटते हैं तथा उनके आराम करने के लिए शामियाने लगवाये जाते है। उस अवसर पर लोग पूजा अर्चना करते हैं। गंगा तलब पर ही शिवाजी की विशालकाय मूर्ति स्थापित की गई है। उस मूर्ति के पास की श्री नव दुर्गा की मूर्ति शेर पर सवार लगाई गई है। इतना ही नहीं गंगा तलब पर श्रीराम मंदिर, श्रीकृष्ण मंदिर, काली मंदिर, सरस्वती मंदिर आदि आने मंदिरों की स्थापना की गई है। उस दृश्य की देशकर भारत की छवि परिलक्षित होती है।

मॉरीशस में गंगा स्नान से तात्पर्य समुद्र पर समुद्र स्नान से होता है। सभी हिन्दू छुट्टी लेकर नहाने जाते हैं और खूब परिवार के साथ एंजॉय करते हैं।समुद्रतट पर भारत की तरह ही छोटे–छोटे तम्बू लगाए जाते है और अपनी धोतियाँ बांधकर एक घेरा बनाते हैं उसी में अपना खाना और कपड़े रखते हैं किंतु आज कुछ लोग समृद्धशाली हो गए हैं। वे अपना तम्बू लेकर आते हैं। यह सिलसिला शाम तक चलता है शाम को सभी अपनी अपनी करें लेकर अथवा बस द्वारा घर की ओर प्रस्थान करते हैं। समुद्र स्नान के समयऔर खाने के समय भारत की छवि उभरकर आती है। इस अवसर पर भारत में होने का भ्रम पैदा होता है

मॉरीशस में गणेशजी की पूजा भी बड़े भक्तिभाव के साथ की जाती है और प्रतिदिन आरती होती है। इसके बाद महाप्रसाद भोज भी दिया जाता है तथा अंतिम दिन श्रीगणेश प्रतिमा को सागर में सरकार की देख–रेख में सागर में अथवा किनारे पर प्रतिमा का विसर्जन किया जाता है। सभी नर नारी सागर तट पर पूजा करते हैं और अपनी बारी का इंतजार बड़े धैर्य के साथ करते हैं।

मॉरीशस में हर तरफ भारतीय संस्कृति के दर्शन होते हैं। यहाँ भारतीय सांस्कृतिक रीति–रिवाजों और परंपरा के अनुसार ही भारतीय त्योहार मानाए जाते हैं, पूजा–पाठ, कथा–वार्ता, यज्ञ–हवन आदि करते हैं। शादी–विवाह भारतीय रीति–रिवाज के साथ करते हैं। भारत वासियों की तरह ही पहनावा कुर्ता–धोती, साड़ी, सलवार सूट पहने नर–नारियां हर तरफ परिलक्षित होते हैं। ऐसा नहीं लगता है कि हम भारत में नहीं हैं। होली दिवाली, महाशिवरात्रि गंगा स्नान, दुर्गा पूजा, आदि बड़े उत्साह और उमंग के साथ मनाये जाते हैं। आज उस समाज में उनकी एक बड़ी विशेषता लड़की और

लड़के की शादी में दहेज न लेना और देना कही जा सकती है।

निष्कर्षः

मॉरीशस के लोगों के आचार–विचार, रहन–सहन, खान–पान और इतिहास में उपलब्ध साक्ष्यों के साथ–साथ "गांधीजी बोले थे" उपन्यास आदि पूरी तरह से गांधी विचार और भारतीय जीवन के प्रति मॉरीशस वासियों की आस्था का चित्र ही नहीं प्रस्तुत नहीं करते हैं बल्कि यह उनके विचार, संकल्प, श्रम, त्याग और प्रेम संबंध उच्च मानवीय आदर्शों की स्थापना करते हैं और जो किसी भी संकरमणशील जाति के लिए प्रेरणाश्रोत हो सकते हैं। गांधी विचार के मूल आधार स्तम्भ सत्य और अहिंसा, सर्वोदय सत्याग्रह एवं रामराज्य तीन आदर्श थे। आज भी मॉरीशस में वहाँ के रहवासियों में भारतीय संस्कृति और धर्म के प्रति अटूट आस्था, विचारों में विश्वास, श्रद्धा, और गांधी विचारों में अटूट विश्वास परिलक्षित होता है। मोहनदास करमचंद गांधी के आगमन के बाद देश में कुली मजदूरों पर हो रहे अत्याचार और शोषण मुक्ति तो नहीं हुई थी किन्तु उनमें शिथिलता अवश्य आने के संकेत मिलने लगे थे। इतना ही नहीं श्रमिकों में जागरूकता की शक्ति का संचार हुआ था। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है।

संदर्भः

1 अभिमन्यु अनत, गांधी जी बोले थे, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. 1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग,नई दिल्ली–110002, प्रथम संस्करण वर्ष 1984

2 अभिमन्यु अनत, लाल पसीना, राजकमल प्रकाशन, प्रा. लि. 1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली–110002, प्रथम संस्करण वर्ष 1984

3 अभिमन्यु अनत, हम प्रवासी, प्रभात प्रकाशन, 2ध्11, आसफ आली रोड, न्यू दिल्ली 110002 प्रथन संस्करण वर्ष 2004

4 अभिमन्यु अनत, और पसीना बहता रहा, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. 1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली–110002, प्रथम संस्करण वर्ष 2008

5 प्रहलाद रामशरण, रंसगरन मॉरीशस भारतीय संस्कृति का हरावल दस्ता,

6 पं. आत्माराम विश्वनाथ, मॉरीशस का इतिहास, सं प्रह्लाद रामशरण, आत्माराम एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली–110006 प्रथम संस्करण वर्ष–1923, द्वातीय वर्ष–1998

7 डॉ. उदय नारायण गंगू, मॉरीशस की संस्कृति और साहित्य, यश पब्लिकेशन्स, 1ध्10753, सुभाष पार्क, नवीन शाहदरा, दिल्ली 110032, वर्ष 2017

8 डॉ मुनीशवरलाल चिंतामणि, मॉरीशसीय हिन्दी साहित्य, एक परिचय, हिन्दी बूक सेंटर, 4ध्5–बी, नई दिल्ली–110002, संस्करण वर्ष–2001

9 डॉ. इन्द्रदेव भोला, इन्द्रनाथ, मॉरीशस हिन्दी लेखक संघ का इतिहास(1961–2017) स्टार पब्लिकेशन, प्रा. लि.4/5–बी, आसफअली रोड, नई दिल्ली–110002, प्रथम संस्करण वर्ष 2017

डॉ० उमेश कुमार सिंह

एसोशिएट प्रोफेसर, हिंदी साहित्य विभाग,
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय,
गांधी हिल्स, वर्धा–442001, महाराष्ट्र, भारत,
दूरभाषः 91–9423307797 (India)

जय हिन्द, जय भारत

प्रो० उमेश कुमार सिंह,

हिंदी चेयर,
महात्मा गांधी संस्थान, मोका,
(एम.जी.आई) मॉरीशस

22

बौद्ध प्रतीत्यसमुत्पाद का स्परूप : एक विश्लेषण

डॉ0 धन्नजय कुमार सिंह

सारांश

बोद्ध दर्शन भारत का एक प्राचीन और बृहत् दर्शन है। जिसका प्रभाव कभी पूरे भारत पर था और यही एक दर्शन है जो विदेशों मे भी जोरो से फैला। गौतम बुद्ध के उपदेशों से बौद्ध दर्शन की उत्पत्ति हुई है। भगवान बुद्ध मनष्य के रोग, बुढ़ापा, मृत्यु तथा अन्यान्य दुःखों को देखकर अत्यन्त पीडित हुए थे। जीव के दुःखों के कारण को समझने तथा उनकों दूर करने के उपायों को जानने के लिए उन्होने वर्षो तक अध्ययन, तप, और चिन्तन किया। अन्त में उन्हें बोधि या ज्ञान प्राप्त हुआ जिसका सार उनके चार आर्य सत्यों मे निहित है। ये सत्य है–दुःख है, दुःख का कारण है, दुःख का अन्त सम्भव है और दुःख दूर करने के उपाय है।

पंचस्कन्ध

सभी भरतीय दर्शनिको ने इस सत्य को किसी–न–किसी रूप मे स्वीकार किया है कि दुःख है। किन्तु बुद्ध को सुक्ष्म दृष्टि द्वारा यह अनुभव हुआ कि दुःख केवल विशेश अवस्थाओं में ही नहीं, प्रत्युत् संसार के सभी जीवों को सभी अवस्थाओं में विद्यमान है। सब कुछ दुःखमय है। जन्म में दुःख है, नाश में दुःख है, रोग दुःखमय है, अप्रिय से संयोग दुःखमय है तथा प्रिय से वियोग दुःखमय है। जीवन के कार्यो के पाँच साधक है– शरीर (Body), अनुभूति (Feeling), प्रत्यक्ष (Preception), इच्छा (Will), विचार शक्ति (Reason)। बुद्ध का विचार है कि ये पंचस्कन्ध अपने साथ दुःख ही लाते है अतः मानव तथा मानवेतर जीवन दुःखों से परिपूर्ण है।

दुःखसमुदाय

द्वितीय आर्यसत्य दुःखसमुदाय है। समुदाय का अर्थ है–कारण। यदि दुःख के कारण की हम पहचान कर लेते है और इसे दूर कर देते है तो दुःख स्वतः ही लुप्त हो जायेगा। भगवान बुद्ध के अनुसार दुःख का कारण सामान्यतः जीने की इच्छा अर्थात् तृष्णा है। मनुष्य को जहाँ सुख एवं आनन्द मिलता है, वहाँ उसकी प्रवृति होती है। उसकी यह प्रवृति या चाह ही तृष्णा कहलाती है। धम्मपद् में कहाँ गया है कि तृष्णा से शोक उत्पन्न होता है, उसी से भय उत्पन्न होता है, तृष्णा से मुक्त को शोक नहीं, फिर भय कहाँ से ?इस प्रकार मूल रूप से तृष्णा ही दुःख की उत्पत्ति का तात्कालिक कारण है, यही विशयो को भोगने की प्यास उत्पन्न करती है। यदि विषयों की प्यास हमारे हृदय में न हो, तो हम इस संसार में न पड़े और न दुःख भोगें। तृष्णा सबसे बड़ा बन्धन है जो हमें संसार तथा संसार के जीवों से बांधे हुए है। मकड़ी जिस प्रकार अपने ही अन्दर से सारा जाल बुनती है और स्वम् उसी में बंधी रहती है, उसी प्रकार लोग तृष्णा से जुड़े रहते है, तृष्णा नाना प्रकार के विशयों में राग उत्पन्न करता है और इसी राग में अपने को बाँधकर लोग दिन–रात कष्ट उठाते है। काम तृष्णा अर्थात नाना प्रकार के विषयों की कामना, भवतृष्णा अर्थात् संसार की सत्ता बनाये रखना और विभवतृष्णा अर्थात उच्छेद–दृष्टि, संसार का नाश। अतः तीनों तृष्णाऐं पृथक–पृथक रूप से दुःख के कारण कहे गये है।

प्रतीत्युसमुदाय का अर्थ

बुद्ध ने दूसरे आर्य सत्य के सहारे दृःख के कारण को जानने का प्रयास किया है जिसे 'प्रतीत्यसमुत्पाद' कहा जाता है। प्रतीत्य अर्थात इसके होने पर तथा समुत्पाद अर्थात् यह उत्पन्न होता है। दुसरे शब्दों में, इसके नही होने पर अर्थात् निरोध से यह नही होता है अर्थात निरूद्ध भी हो जाता है। अतः प्रत्येक उत्पत्ति सकारण है, अकारण नही। संसार का कोई विषय बिना कारण के नहीं है, सभी के कुछ–न–कुछ कारण हैं। प्रतीत्यसमुत्पाद का अर्थ है प्रत्ययों से उत्पत्ति का नियम। इसका तात्पर्य है कि प्रत्येक उत्पाद या उत्पत्ति का कोई प्रत्यय या कारण हैं। प्रत्यय या कारण वह है जो किसी वस्तु की उत्पत्ति में सहायक हो। यह नियम कारणतावाद का नियम है। इसे 'हेतु प्रत्ययवाद' भी कहा जाता है। जिसका सीधा अर्थ है–इसके होने पर ऐसा होता है, इसके नही होने पर ऐसा नही होता। अतः कहा जा सकता है कि प्रतीत्यसमुतपाद का सिद्धान्त ही संसारिक वस्तुओं की अनित्यता, क्षणभंगुरता का आधार है। चूँकि सभी वस्तुऐं कारणोत्पन्न हैं तथा उत्पन्न होने से विनाश भी हैं, इसलिए उत्पत्ति और विनाश से सभी वस्तुओं की अनित्यता तथा क्षणभंगुरता सिद्ध होती हैं।

प्रतीत्यसमुत्पाद का विश्लेशण

प्रतीत्यसमुत्पाद द्वारा ही बुद्ध ने संसारिक जीवन की सम्यक् व्याख्या की और दुःखों का कारण समझाया। इसी कारण प्रक्रिया के अन्वेषण का विकसित रूप 12 निदानों की श्रृंखला मे दिखलाई पड़ता है। इन 12 अंगो का वर्णन बौद्ध ग्रन्थों में इस प्रकार मिलता है–'' अविद्या प्रत्यय से संस्कार, संस्कार प्रत्यय से विज्ञान, विज्ञान प्रत्यय से नामरूप, नामरूप प्रत्यय से शड़ायतन, शड़ायतन प्रत्यय से स्पर्श, स्पर्श प्रत्यय से वेदना, वेदना प्रत्यय से तृष्णा, तृष्णा प्रत्यय से उपादान, उपादान प्रत्यय से भव, भव प्रत्यय से जाति, जाति प्रत्यय से जरामरण। इस प्रकार समस्त दुःख स्कन्ध का समुदाय होता है, यही प्रतीतयसमुत्पाद है।'' बुद्ध के उपदेशों मे द्वादशांग कहीं संक्षिप्त और कहीं विस्तृत है। '' कहीं एक से बारह, कहीं सात से बारह, कही बारह से एक, कहीं आठ से एक, कहीं तीन से बारह, और कही पाँच से आठ निदानों का वर्णन है।'' इन उद्धरणों से ऐसा लगता है कि तथागत ने विभिन्न समयों में दुःखोपत्ति के कारणों को विविध रूप में प्रस्तुत किया था और उन सभी को 12 निदानों में संकलित कर दिया गया। यह समूचा संकसन महानिदान सुत्तन्त में उपलब्ध होता है। एक अन्य

धारणा के अनुसार अविद्या और संस्कार अतीत से अर्थात भूत जीवन से सम्बन्धित हैं, जाति और जरामरण का सम्बन्ध भविश्य जीवन से है और शेश का सम्बन्ध वर्तमार जीवन से है। अतः सम्पूर्ण द्वादशांग अर्थात द्वादश निदान तीनों जीवन में व्याप्त रहता है जिसका विस्तृत विश्लेशण अपेक्षित है :–

1 अविद्या :– यह पूर्वजन्म की जटिल अवस्था है। अविद्या से केवल अज्ञान अभिप्रेत नही है, अपितु पूर्वजन्म की सन्तति अर्थात् अपने पाँच स्कन्धों के साथ अभिप्रेत है जो कलेशावस्था में होती है। दुसरे शब्दों में, जो वस्तु अवास्तविक है, उसे वास्तविक समझना, जो वस्तु दुःखमय है, उसे सुखमय समझना, जो वस्तु आत्मा नहीं है, अर्थात् अनात्मा है, उसे अत्मा समझना अविधा का प्रतीक है।

2 **संस्कार** :– यह पूर्वजन्म की कर्मावस्था है। अतीत जीवन के कर्मों के प्रभाव के कारण ही संस्कार निर्मित होते है।

3 विज्ञान :– यह प्रतिसन्धि क्षण के स्कन्धों की अवस्था है। उत्पति के क्षण में पाँच स्कन्ध ही विज्ञान हैं। जब नवजात शिशु माँ के गर्भ में रहता है तब विज्ञान के कारण ही नवजात शिशु का शरीर एवं मन विकसित होता है। यदि गर्भावस्था में विज्ञान (Consciousnen) का अभाव होता है तब संभवतः शिशु के शरीर एवं मन का विकास रूक जाता।

4 नामरूप :– विज्ञान क्षण से लेकर शड़ायतन की उत्पति तक पाँच स्कन्धों की अवस्था नामरूप है। दुसरे शब्दों में, मन और शरीर के समूह को नामरूप कहा जाता है। इन्द्रियों का निवास शरीर एवं मन में होता है। यदि नामरूप का अस्तित्व नहीं रहता तब इन छः इन्द्रियों का प्रादुर्भाव नहीं हो सकता था।

5 शड़ायातन :– पाँच ज्ञानेन्द्रियों और मन के संकलन को शडायतन कहा जाता है। पाँच बाह्मय इन्द्रियाँ है और मन आन्तरिक इन्द्रिय है। ये छः इन्द्रियां ही विशयों को ग्रहण करती है। इन्द्रियों के प्रादुर्भाव काल से इन्द्रिय, विशय और विज्ञान के सन्निपात काल तक शड़ायतन है।

6 स्पर्श :– सुख–दुःखादि के कारण ज्ञान की शक्ति के उत्पाद से पूर्व की अवस्था स्पर्श है। बालक सुख–दुःखादि को समझने में पूर्णतः समर्थ नहीं होता। उसकी ना समझी की अवस्था स्पर्श है।

7 वेदना :– जबतक मैथुनराग का उत्पाद नहीं होता तब तक की अवस्था वेदना है क्योंकि यहाँ वेदना के कारणों का प्रतिसंवेदन होता है।

8 तृष्णा :– यह भोग और मैथुन की कामना करने वाले पुद्गल की अवस्था है। इस अवस्था में काम भोग और मैथुन के प्रति राग का उदय होता है।

9 उपादान :– यह पुद्गल की अवस्था है जो भोगों को पाने के लिए यथेश्ट दौड–धूप करता है। दुसरे शब्दों में, संसारिक विशयों से लिपटे रहने की अभिलाशा अथवा संसारिक विशयों से आसक्त रहने की चाह ही उपादान है।

10 भव :– भोगने के लिए पुनः जन्म लेने की प्रवृति भव है। मानव को जन्म इसलिए ग्रहण करना पडता है कि उसमें जन्म ग्रहण करने की प्रवृति विद्यमान रहती है। यही प्रवृति उसे जन्म ग्रहण करने के लिए प्रेरित करती है।

11 जाति :– फिर से जन्म लेना जाति है। मरण के पश्चात् प्रतिसन्धि काल के पाँच स्कन्ध जाति है। यदि मानव शरीर नही धारण करता तब उसे संसारिक दुःखों का सामना नहीं करना पडता। मानव का सबसे बडा दुर्भाग्य जन्म ग्रहण करना अर्थात शरीर धारण करना।

12 जरा–मरण :– जाति से वेदना तक जरा–मरण है। जरा का अर्थ वृद्धावस्था और मरण का अर्थ मृत्यु होता है। यधपि जरा–मरण का शाब्दिक अर्थ बुढ़ापा और मौत है, फिर भी जरा–मरण संसार के समस्त दुःख अर्थात् रोग, निराशा, शोक, उदासी इत्यादि का प्रतीक है।

स्पष्ट है कि बुद्ध की दृष्टि में सभी वस्तुएँ प्रतीत्य समुत्पन्न हैं अर्थात् हेतु प्रत्ययों से उत्पन्न हैं। जो प्रतीत्यसमुत्पन्न नहीं है, वह वस्तु ही नहीं, अपितु अवस्तु है। फलतः आत्मा, ईश्वर आदि जो नित्य हैं, वे अवस्तु हैं, काल्पनिक हैं। जो हेतु प्रत्ययों से उत्पन्न होगा, वह अवश्य ही नश्वर होगा क्योंकि उत्पन्न का विनाश होना स्वाभाविक है। जो नश्वर हैं अनित्य है, वह अवश्य दुःखात्मक है। अतः सभी वस्तुएँ अनित्य, अनात्म और दुःखों से परिपूर्ण है। वस्तु का लक्ष्ण है अर्थक्रियाकारी होना। क्षणिक वस्तु ही अर्थक्रियाकारी हो सकती हैं। नित्य पदार्थ या तो अर्थक्रिया नहीं करेंगे या एक साथ करेंगे और दोनों ही स्थितियों अयुक्त संगत एवं विरूद्ध है। अतः जो क्षणिक नहीं, उसकी सत्ता ही बौद्ध–दृष्टि में नहीं मानी जाती। यह प्रतीत्यसमुत्पाद दृष्टि ही सम्यक् दृष्टि है और यही बौद्ध धर्म की विशेषता है।

तुलना :– बौद्ध धर्म में वर्णित प्रतीत्यसमुत्पाद की तुलना जैन धर्म से की जा सकती है। जैन साहित्य **उत्तराध्ययन सूत्र** भी मानता है कि दुःखों की अनुभूति प्रत्येक प्राणी को कटु मालूम पड़ती है। अतः वे दुःखों से छुटकारा पाने के लिए नाना प्रकार के यत्न करते देखे जाते हैं। जितने भी संसारिक प्रयास हैं, वे सब क्षणिक सुख देने के कारण वास्तव मे दुःख रूप ही हैं। सच्चे और अनश्वर सुख की प्राप्ति के लिए चेतन और अचेतन के संयोग और वियोग की आध्यात्मिक प्रक्रिया को जिन नौ तथ्यों या सत्यों में विभाजित किया गया है, उनमें पूर्ण विश्वास, उनका पूर्ण ज्ञान और तदनुसार आचरण आवश्यक है। उन नौ तत्त्वों के क्रमशः नाम हैं– चेतन अर्थात् जीव, अचेतन अर्थात् अजीव,चेतन और अचेतन की सम्बन्धावस्था अर्थात् बन्ध, अहिंसा ही शुभ कार्य अर्थात् पूण्य, हिंसादि अशुभ कार्य अर्थात् पाप, अचेतन का चेतन के साथ सम्बन्ध करानेवाला कारण का निरोध अर्थात् संवर, चेतन तथा अचेतन का अंशतः पृथक्करण अर्थात् निर्जरा तथा चेतन का पूर्ण स्वातंत्र अर्थात् मोक्ष। इन चेतन–अचेतन और उनके संयोग–वियोग की कार्यकारण–श्रृंखला के त्रिकाल सत्य होने इन्हें तथ्य या सत्य कहा गया है। संसार या दुःख

का कारण कर्म–बन्धन है और उससे छुटकारा पाना मोक्ष है। चेतन ही बंधन और मोक्ष प्राप्त करता है और अचेतन से बंधन और मोक्ष होता है। बंधन में कारण है पुण्य और पापरूप प्रवृत्ति जिससे प्रेरित होकर अचेतन (कर्म) चेतन के पास आकर बंध को प्राप्त होते हैं। इन अचेतन कर्मों के आने को रोकना तथा पहले से आये हुए कर्मों को पृथक करने रूप संवर और निर्जरा मोक्ष के प्रति कारण हैं। इस तरह बन्ध, मोक्ष, चेतन, अचेतन, पूण्य, पाप, आस्त्रव, संवर और निर्जरा–ये–नौ सार्वभौम सत्य होने से तथ्य कहे जाते है।

इसी तथ्य का साक्षात्कार भगवान बुद्ध ने भी किया और उन्होंने इसका ही एक दुसरे ढंग से चार आर्य सत्यों में उपदेश दिया कि दुःख सत्य है, दुःख के कारण सत्य हैं, दुःख निरोध सत्य है और दुःख निरोध के मार्ग सत्य हैं। इस तरह चेतन–अचेतन पुण्य हैं या नहीं, परमार्थ में सुख है या नहीं, इसका कोई समुचित उतर न देकर भगवान बुद्ध ने सिर्फ चार आर्य सत्यों पर बल दिया तथा कहा कि ये चार बातें सत्य हैं। यदि दुःख से छुटकारा चाहते हैं तो इन आर्य सत्यों पर विश्वास करके दुःख निरोध के मार्गे का अनुसरण करें–यही बुद्ध के उपदेश का सार है। जैन और बुद्ध के मतों में अन्तर इतना ही है कि जहाँ जैनाचार्य उपनिशदों की तरह आत्मा के सद्भाव पर जोर देता है वहाँ बौद्ध दर्शन आत्मा के अभाव(नैरात्म) की भावना पर बल देता है।

समीक्षा :– बौद्ध प्रतीत्यसमुतपाद के विरूद्ध आलोचकों की मान्यता है कि दुःखों के कारण का सिद्धान्त बुद्ध की निजी देन न होकर उपनिशद् दर्शन के ब्रह्म चक्र की नकल है। अतः प्रतीत्यसमुत्पाद की विवेचना उपस्थापित कर बुद्ध मौलिकता का दावा नहीं कर सकते। फिर, यह भी कहां जा सकता है कि यदि प्रत्येक निदान का कारण है तब अविद्या का भी कारण होना चाहिये। लेकिन बुद्ध अविद्या पर आकर रूक जाते है। जो भी वजह हो, पर बुद्ध का मौन रहना दार्शनिक दृश्टि से समीचीन नहीं लगता। पुनः तर्क दिया जाता है कि कारणता सिद्धान्त वैज्ञानिक खोज के लिए एक अवधारणा के रूप में है जिसे अनावश्यक समझ कर छोड़ा जा सकता है। यह सिद्धान्त ऐसा सर्वव्यापक और अनिवार्य नहीं है कि किसी भी घटना के स्पश्टीकरण के लिए इसकी मदद अनिवार्यतः ली जाय। इसके बिना भी घटना की व्याख्या संभव है। प्रत्येक व्यक्ति की माँ होती है पर समस्त मानव–जाति की माँ कहाँ है?अतः दुःख की व्याख्या के लिए कारणता सिद्धान्त की अवधारण अनावश्यक प्रतीत होती है। इसके अतिरिक्त, यह भी ध्यान देने की बात है कि कारणता–सिद्धान्त का सम्बन्ध व्यावहारिक जगत् से है और यह हमारी बुद्धि का एक विकल्प है, पर इस विकल्प को हर जगह काम में नहीं लाया जा सकता। इस जगह शोपेनहावर का कथन–द्रश्टव्य है कि कतिपय विद्वान कारणता–सिद्धान्त को वैसे ही इस्तेमाल करते हैं जिसे एक मुसाफिर टैक्सी गाडी को गंतंव्य स्थान पर पहुँचकर छोड देता है। लेकिन संगति बनाये रखने के लिए हमें आगे भी सोचना होगा।

निष्कर्ष :– इन आलोचनाओं से यह निश्कर्श निकालना अनुचित होगा कि प्रतीत्यसमुत्पाद महत्त्वहीन तथा अनुपयोगी है। प्रतीत्यसमुत्पाद का सन्दर्भ अत्यन्त व्यापक है। यह दुनिया की सभी वस्तुओं पर लागू होता है। प्रतीत्यसमुत्पन्न होना ही वस्तु का लक्षण स्वीकार किया गया। दुसरे शब्दों में, उस पदार्थ, की सत्ता ही नहीं है जो प्रतीत्यसमुत्पन्न नहीं है। इसलिए दार्शनिक क्षेत्र में यदि कोई बुद्ध को देन को एक शब्द में पूछना चाहे तो निस्संदेह यह कहां जा सकता है कि प्रतीत्यसमुत्पाद का सिद्धान्त ही भगवान बुद्ध के दर्शन का मूल है। कारण–कार्य का सिद्धान्त तो बुद्ध से पूर्व भी अन्य दार्शनिक सम्प्रदायों में ज्ञात था, किन्तु वह सभी वस्तुओं पर लागू नहीं था। ऐसे अनेक तत्त्व अछूते रह जाते थे जिन पर यह नियम प्रयुक्त नहीं होता था जैसे आत्मा, प्रकृति, ईश्वर, आकाश, दिक्काल आदि। बुद्ध ने सर्वप्रथम इस सिद्धान्त को गौरव प्रदान किय, उसे सब पदार्थों पर लागू किया और उसे सत्ता का पर्यायवाची बनाया। यह बहुत बड़ी बात थी। इसने दार्शनिक जगत में हलचल पैदा की और दार्शनिक विचारों के विकास की अनन्त संभावनाएं उद्भूत की। यही कारण है कि बौद्ध दर्शन गतिशीलता, क्रियाशीलता और प्रगतिशीलता का पर्यायवाची बन सका।

यह तथ्य भी रेखांकित करने योग्य है कि बुद्ध के आर्विभाव, काल में भरतीय दार्शनिक गगन–मण्ड़ल में सर्वत्र आत्मा का शाश्वतवाद एवं उच्छेदवाद व्यापत था। बुद्ध ने शाश्वतवाद एवं उच्छेदवाद का विध्वंस कर अपने स्वयं साक्षात्कार किये हुए ''प्रतीत्यसमुत्पाद'', ''अनात्मवाद'' एवं ''अनीश्वरवाद'' की स्थापना की। उनके उपदेशों की दार्शनिक भित्ति प्रतीत्यसमुत्पाद ही है। यह प्रतीत्यसमुत्पाद बौद्ध दर्शन की आधारशिला है। इसकी गहनता, व्यापकता और सूक्ष्मता समूचे बौद्ध साहित्य में द्रश्टव्य है। किसी वस्तु की प्राप्ति होने पर अन्य वस्तु की उत्पत्ति यह कारण–कार्य का नियम जगत् की वस्तुओं या घटनाओं में सर्वत्र देखा जाता है। एक वस्तु के रहने पर दुसरी वस्तु उत्पन्न होती है, वस्तु की उत्पति बिना किसी कारण के नही होती यह महत्वपूर्ण नियम बुद्ध की अपनी खोज है।

संदर्भ

1. विशुद्ध – भात्र, सत्रहवाँ पटिच्छेद
2. हेतुप्रत्ययापेक्षो भावनामुल्पादः प्रतीत्यसमुपादार्थः

डॉ0 धन्नजय कुमार सिंह
विभाग–दर्शनशास्त्र
वीर कुँवर सिंह
विश्वविद्यालय,
आरा (भोजपुर) ।

23

महाशिवरात्रि का तात्पर्य और माहात्म्य

डॉ0 जंग बहादुर पाण्डेय

सारांश

कर्पूर गौरं करुणावतारं,
संसार सारं भुजगेन्द्र हारम्।
सदा वसंतं हृदयार्विंदे,
भवं भवानी सहितं नमामि।

भारतीय वांग्मय के अनुसार 33 कोटि देवताओं में तीन प्रमुख है–ब्रम्हा, विष्णु और महेश और इनमें शिव ही महादेव कहलाते हैं। क्योंकि जगत हित के लिए इन्होंने समुद्र मंथन से निकले 14 रत्नों–
श्री,मणि,रंभा,वारुणी,अमिय शंख,गजराज।
कल्पतरु,शशि, धेनु,धनु, धनवंतरी, विष, वाज।
में विष का पान कर सृष्टि को बचा लिया था, जिसकी चर्चा रहीम ने अपने एक दोहे में की है –
मान सहित विष खाइ के, शंभु भरे जगदीश।
बिना मान अमृत भखयो,राहु कटायो सीस।
जगत हित में विषपान करने के कारण शिव देव नहीं महादेव कहलाए।इसी महादेव की जागृत रात्रि का नाम महाशिव रात्रि है।
महा शिवरात्रि शब्द का शाब्दिक अर्थ है शिव की महान रात। महाशिवरात्रि शिव पर्व है। हिंदू पंचाग कैलेंडर के अनुसार यह त्योहार प्रतिवर्ष फाल्गुन मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को आता है। अंग्रेजी कैलेंडर के अनुसार 08 मार्च 2024 शुक्रवार के दिन यह त्योहार मनाया जाएगा। इस महापर्व के 10 रोचक तथ्यों पर प्रकाश डालना हमारा अभीष्ट हैः–

1. शिव प्रकटोत्सवः– महाशिवरात्रि हिंदू धर्म का सबसे बड़ा त्योहार माना जाता है। ऐसी मान्यता है कि इस दिन भगवान शिव प्रकट हुए थे। इसे शिवजी के जन्मोत्सव के रूप में भी मनाया जाता है। माना जाता है कि सृष्टि की शुरुआत में इसी दिन आधी रात में भगवान शिव का निराकार से साकार रूप में (ब्रह्म से रुद्र के रूप में) अवतरण हुआ था। ईशान संहिता में बताया गया है कि फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी की रात आदि देव भगवान श्री शिव करोड़ों सूर्यों के समान प्रभा वाले ज्योतिर्लिंग रूप में प्रकट हुए।

2. जलरात्रिः– प्रलय की बेला में इसी दिन प्रदोष के समय भगवान शिव तांडव करते हुए ब्रह्मांड को तीसरे नेत्र की ज्वाला से भस्म कर देते हैं। इसलिए इसे महाशिवरात्रि या जलरात्रि भी कहा गया है।

3. शिव विवाहोत्सवः– इस दिन को शिव पार्वती के विवाह की वर्ष गांठ के तौर पर भी मनाया जाता है, क्योंकि इस दिन उनका माता पार्वती जी के साथ विवाह हुआ था। इस दिन भगवान शंकर की शादी भी हुई थी।

4. बोधोत्सवः– शिवरात्रि बोधोत्सव है। ऐसा महोत्सव, जिसमें अपना बोध होता है कि हम भी शिव का अंश हैं, उनके संरक्षण में हैं। इसीलिए इस दिन रात्रि में ध्यान साधना करने का विधान भी है।

5. चंद्र सूर्य का मिलनः– ज्योतिष शास्त्र के मुताबिक फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी तिथि में चंद्रमा सूर्य के नजदीक होता है। उसी समय जीवनरूपी चंद्रमा का शिवरूपी सूर्य के साथ योग–मिलन होता है। इसलिए इस चतुर्दशी को शिवपूजा करने का विधान है।

6. चार प्रहर पूजाः– महाशिव रात्रि पर शिवजी का जलाभिषेक, पंचामृत अभिषेक और रुद्राभिषेक करके प्रसन्न किया जाता है। शिवजी की पूजा रात्रि के 4 प्रहर में होती है।

7. शिव–बारातः– महाशिवरात्रि पर शिवजी की पाल्की निकलती है और कई जगहों पर शिव बारात का आयोजन होता है। रात में उनकी बारात निकाली जाती है। रात में पूजा कर फलाहार किया जाता है। अगले दिन सवेरे जौ, तिल, खीर और बेल पत्र का हवन करके व्रत समाप्त किया जाता है।

8. निशीथ काल पूजाः– जिस दिन फाल्गुन मास की कृष्ण चतुर्दशी निशीथव्यापिनी तो उसी दिन महाशिवरात्रि का पर्व मनाते हैं। क्योंकि महाशिवरात्रि की मुख्य पूजा निशीथ काल में होती है। निशीथकाल की पूजा के बाद अगले दिन ही व्रत खोलना चाहिए।

8. शिव पाठः– महाशिवरात्रि के दिन शिव पुराण का पाठ और महामृत्युंजय मंत्र या शिव के पंचाक्षर मंत्र • नमः शिवाय का जाप करना चाहिए। इसी के साथ ही शिव चालीसा पढ़ सकते हैं।

9. महिलाओं का पर्वः– यह अविवाहित महिलाओं के लिए एक विशेष त्योहार है, जो भगवान शिव की तरह एक पति की चाह रखती हैं, वे इस दिन व्रत रख कर भगवान की साधना करती है। विवाहित महिलाएँ सदा सुहागन और अपने पति की लम्बी उम्र के लिए प्रार्थना करती हैं।

10. शिव–रात्रि की कथाः– महाशिवरात्रि की कथा एक साहूकार, कर्जदार शिकारी और हिरण से जुड़ी है। कर्ज नहीं चुकाने के कारण साहूकार शिकार को शिवमठ में बंदी बना लेता है। संयोग से उस दिन शिवरात्रि थी। शिकारी वहां ध्यान मग्न होकर कथा सुनता रहता है। कथा श्रवण के प्रभाव से शाम को साहूकार उसे बुलाकर कर्ज चुकाने

के लिए और मौहलत दे देता है। वहां अनजाने में ही शिवपूजा कर बैठता है। शिकारी शिकार करने जाता है तो वहां रात हो जाती है और कोई शिकार नहीं मिलता है। भूखा प्यासा तालाब के किनारे लगे बिल्वपत्र के वृक्ष पर बैठकर रात गुजारने लगता है। उसे नहीं पता होता है कि वृक्ष के नीचे शिवलिंग है, जिस पर अनजाने में ही उसे बिल्वपत्र अर्पित हो जाता है। रात में उसे एक गर्भवती हिरणी नजर आती है। उसे वह मारने लगता है तभी वह हिरणी कहती है कि मैं अपने बच्चे को जन्म देकर पुनरू तुम्हारे पास आ जाऊंगी। दूसरी हिरणी आती है तो वह कहती है कि मैं अपने पति के साथ रहकर तुम्हारे पास आ जाऊंगी। इसी प्रकार वहां से एक तीसरी हिरणी अपने बच्चों के साथ निकली है तो वह भी कहती है कि मैं इन बच्चों को इनके पिता के पास छोड़कर आती हूं। तीन हिरणियों को छोड़ने के बाद एक हिरण उधर से गुजरता है।

हिरण वहां किसी को ढूंढते हुए आ जाता है जब शिकारी उसे मारने लगता है तो वह कहता है कि हे शिकारी! यदि तुमने मुझसे पूर्व आने वाली तीन मृगियों तथा छोटे–छोटे बच्चों को मार डाला है, तो मुझे भी मारने में विलंब न करो, ताकि मुझे उनके वियोग में एक क्षण भी दुःख न सहना पड़े। मैं उन हिरणियों का पति हूं। यदि तुमने उन्हें जीवनदान दिया है तो मुझे भी कुछ क्षण का जीवन देने की कृपा करो। मैं उनसे मिलकर तुम्हारे समक्ष उपस्थित हो जाऊंगा। मृग की बात सुनते ही शिकारी के सामने पूरी रात का घटनाचक्र घूम गया। उसने सारी कथा मृग को सुना दी। इस घटनाक्रम में शिकारी से अनजाने में ही शिवलिंग की पूजा हो जाती है। उपवास, रात्रि–जागरण तथा शिवलिंग पर बेलपत्र चढ़ने से अनजाने में ही शिवरात्रि की पूजा पूर्ण हो गई। थोड़ी ही देर बाद वह मृग सपरिवार शिकारी के समक्ष उपस्थित हो गया, ताकि वह उनका शिकार कर सके, किंतु जंगली पशुओं की ऐसी सत्यता, सात्विकता एवं सामूहिक प्रेम भावना देखकर शिकारी को बड़ी ग्लानि हुई। उसने मृग परिवार को जीवन दान दे दिया। अतरू अनजाने में शिवरात्रि के व्रत का पालन करने पर शिकारी को मोक्ष और शिवलोक की प्राप्ति हुई। अतः जगत हित के लिए महाकवि तुलसी के शब्दों में देवाधिदेव महादेव से हमारी प्रार्थना है कि :–

आशुतोष तुम औघड़ दानी।
आरति हरहु दीन मम जानी।

जय–महाकाल

डॉ0 जंग बहादुर पाण्डेय
पूर्व अध्यक्ष हिंदी विभाग
रांची विश्वविद्यालय, रांची
चलभाष –9431595318
8797687656, 9386336807
अणुडाक –pandey&ru05@yahoo-co-in

24

SOCIAL ADJUSTMENT AND EMOTIONAL MATURITY OF B.Ed., TRAINEES

Ms. Sonia Dahiya

Abstract-

Psychologists use the term adjustment of varying conditions of social and interpersonal relation in the society. Thus adjustment can be called the reaction to the demands and pressures of the social environment imposed upon the individual. An emotionally mature person has the capacity to withstand delay in satisfaction of needs. He has belief in long term planning and is capable of delaying or revising his expectations in terms of demands of situations. This paper aims to study about the relationship of social adjustment and emotional maturity of B.Ed., Trainees. By means of stratified random sampling technique, a sample of 145 B.Ed., trainees are selected for the present study. Statistical techniques namely't' test and Karl Pearson's product moment correlations are employed. The findings of the study reveal a positive substantial relationship between social adjustment and emotional maturity of B.Ed., Trainees.

1. INTRODUCTION

As Plato says 'Man is a social animal.' We live in a society and form opinion about others and others have opinions about us. We try to behave according to the norms of the society so that we can adjust with others. But it is not an easy talk because the personality of each individual is a unique organization. This organization has to make special efforts to adjust with other unique organization which well society. Social adjustment is the direction, we, the teacher try to instill adjustment skill in our students: Teacher should emphasize on the adjustment of the student in the school. They should help the student scope with the existing situations of the school. They should contribute to improving the social environment of the school.

Adjustment is a behavioural process by which a person maintains balance among various needs that one encounters at a given point of time. Each and every situation of life demands that the person concerned should be able to effectively perform in accordance with some guiding principles and should be able to strike a balance among various forces. Adjustment is defined as a process wherein one builds variations in the behaviour to achieve harmony with oneself, others or the environment with an aim to maintain the state of equilibrium between the individual and the environment. Our relationships to the environment are dependent upon one's total emotional development. The best way to understand our relationships to the surroundings is to understand our self and others emotions. The single most important task for any person wishing to improve his relationships to the environment is to increase his self-esteem and emotional maturity.

2. NEED AND SIGNIFICANCE OF THE STUDY

Social adjustment is an effort made by an individual to cope with standards, values and needs of a society in order to be accepted. It can be defined as a psychological process. It involves coping with new standard and value. In the technical language of psychology "getting along with the members of society as best one can" is called adjustment. Psychologists often make use of the term adjustment to describe various types of social and interpersonal relations in society. Therefore, adjustment can be referred to as the reaction to the demands and pressures of a social setting imposed upon the individual. Social adjustment is an attempt made by an individual to address the standards, values and desires of a society so as to be accepted. It is often referred as a psychological method. It involves dealing with new standards and values.

Emotional Maturity is not only the effective determinant of personality pattern but also helps to control the growth of individual development. The concept mature emotional behaviour at any level is that which reflects the fruits of normal emotional development. It is a stage, which is very essential in human life. One of the major aims of any good educational programme is to help the learner to gain emotional maturity. An emotionally mature person has full control over the expression of his feelings. However, he behaves according to the accepted social values and ideals. He remains indifferent towards emotional allurements. There is no instability in the expression of emotions. During adolescence one gets excited very soon. Adolescents burst into laughter on flimsy things or loose temper soon but an emotionally mature is free from this defect.

A person who is emotionally stable will have better adjustment with himself as well as with others. Emotionally mature persons will have more satisfaction in life; he will be satisfied with what he is having, of course trying to achieve more. He will have balanced attitude. He will have more positive than negative attitude towards life.

3. STATEMENT OF THE PROBLEM

The problem selected for the present study is to find out whether there is significant relationship between social adjustment and emotional maturity of B.Ed., trainees with regard to the background variables namely gender, subject, year of study, and the locality of the institution. The study is helpful to find the social adjustment and emotional maturity of

the trainees.

4. TITLE OF THE STUDY

Social Adjustment and Emotional Maturity of B.Ed., Trainees

5. OPERATIONAL DEFINITIONS

5.1 Social Adjustment

Adjustment can be defined as a satisfactory relationship of an organism to its environment". The environment consists of all surrounding Influences or forces which may influence the organism in its efforts towards maintenance. Thus, it is a process through which an organism moulds itself in response to conditions it faces.**5.2 Emotional Maturity**

Emotional maturity means the degree to which person has realized his potential for richness of living and has developed his capacity to enjoy things, to relate himself to others, to love and to laugh; his capacity for whole hearted sorrow, when an occasion arises and his capacity to show fear when there is occasion to be frightened, without feeling a need to use a false mask of courage, such as must be assumed by persons afraid to admit that they are afraid.

5.3 B.Ed., Trainees

By 'Students of Colleges of Education', the investigator means the students studying in the B.Ed., colleges of Sonipat District in Haryana State. 'B.Ed.,' is the abbreviation of 'Bachelor of Education'.

6. OBJECTIVES OF THE PRESENT STUDY

I. To find out whether there is significant difference between men and women B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

ii. To find out whether there is significant difference between arts group and science group B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

iii. To find out whether there is significant difference between I year and II year B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

iv. To find out whether there is significant difference between Hindi medium and English medium B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

v. To find out whether there is significant difference between B.Ed., trainees of rural and urban colleges of education in their social adjustment and emotional maturity.

vi. To find out whether there is significant relationship between B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

7. NULL HYPOTHESES

I. There will be no significant difference between men and women B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

ii. There will be no significant difference between arts group and science group B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

iii. There will be no significant difference between I year and II year B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

iv. There will be no significant difference between Hindi medium and English medium B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

v. There will be no significant difference between B.Ed., trainees of rural and urban colleges of education in their social adjustment and emotional maturity.

vi. There will be no significant relationship between B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

8. METHOD USED FOR THE PRESENT STUDY

For the present study, survey method is employed. By administrating the questionnaires, necessary data will be collected.

9. TOOL USED IN THE PRESENT STUDY

1. Bell Adjustment Inventory was standardized on Indian Population in 1957 by Dr.SINHA.

2. Emotional Maturity Scale developed by Yashwir Singh and Mahesh Bhargave (1999).

10. SAMPLE OF THE PRESENT STUDY

The student teachers (B.Ed., Students) of the colleges of education in the Sonipat District will be the population of the present study. From the population 145 B.Ed., trainees will be selected by means of stratified random sampling technique from four B.Ed. colleges. The sampling will be stratified on the basis of the background variables namely subject, year of study, medium of instruction of student teachers and the locality of the institution.

11. STATISTICAL TECHNIQUES USED

For analyzing the collected data, mean, standard deviation and't' test and correlation are employed.

12. ANALYSIS OF DATA

Null Hypothesis - 1

There will be no significant difference between male and female B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

Table - 1

Mean score difference between male and female B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional

Variable	Sub Variable	Mean	SD	't' value	Remarks at 5% Level
Social Adjustment	Male	111.42	11.47	2.949	S
	Female	109.25	9.11		
Emotional Maturity	Male	106.42	10.62	3.142	S
	Female	100.90	8.41		

(At 5% level of significance, the table value is 1.96)

The above table shows that there is significant difference between male and female. B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity wise calculated't' value respectively 2.949 and 3.142 is greater than the table value 1.96 at 5% level of significance. Hence the null

hypothesis is rejected.

Null Hypothesis - 2

There will be no significant difference between arts and science B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

Table -2

Mean score difference between arts and science B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity

Variable	Sub Variable	Mean	SD		Remarks at 5% Level
Social Adjustment	Arts	99.42	9.12	1.023	NS
	Science	101.01	8.99		
Emotional Maturity	Arts	101.42	8.67	0.986	NS
	Science	100.63	8.12		

(At 5% level of significance, the table value is 1.96)

The above table shows that there is no significant difference between arts group and science group B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity wise calculated't' values respectively1.023 and 0.986 is less than the table value 1.96 at 5% level of significance. Hence the null hypothesis is accepted.

Null Hypothesis - 3

There will be no significant difference between I year and II year B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.\

Table -3

Mean score difference between I year and II year B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity

Variable	Sub Variable	Mean	SD	t value	Remarks at 5% Level
Social Adjustment	I Year	107.58	11.15	2.61	S
	II Year	113.36	10.98		
Emotional Maturity	I Year	105.63	12.63	3.08	S
	II Year	111.59	10.27		

(At 5% level of significance, the table value is 1.96)

The above table shows that there is significant difference between I year and II year B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity wise calculated 't' values respectively 2.61 and 3.08 is greater than the table value 1.96 at 5% level of significance. Hence the null hypothesis is rejected.

Null Hypothesis - 4

There will be no significant difference between Hindi medium and English medium B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

Table - 4

Mean score difference between Hindi medium and English medium B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity

Variable	Sub Variable	Mean	SD		Remarks at 5% Level
Social Adjustment	Hindi Medium	109.44	11.37	1.57	NS
	English Medium	113.56	11.09		
Emotional Maturity	Hindi Medium	100.62	10.21	0.99	NS
	English Medium	102.57	10.34		

(At 5% level of significance, the table value is 1.96)

The above table shows that there is no significant difference between Hindi medium and English medium B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity wise calculated 't' values respectively 1.57 and 0.99 is less than the table value 1.96 at 5% level of significance. Hence the null hypothesis is accepted.

Null Hypothesis - 5

There will be no significant difference between B.Ed., trainees of rural and urban colleges of education in their social adjustment and emotional maturity.

Table -5

Mean score difference between B.Ed., trainees of rural and urban colleges of education in their social adjustment and emotional maturity

Variable	Sub Variable	Mean	SD		Remarks at 5% Level
Social Adjustment	Rural	110.79	12.05	2.516	S
	Urban	109.79	8.98		
Emotional Maturity	Rural	111.89	13.52	4.297	S
	Urban	107.25	9.27		

(At 5% level of significance, the table value is 1.96)

The above table reveals that there is significant difference between B.Ed., trainees of rural and urban colleges of education in their social adjustment and emotional maturity wise calculated't' values respectively2.516 and 4.29 is greater than the table value 1.96 at 5% level of significance. Hence the null hypothesis is rejected.

Null Hypothesis - 5

There will be no significant relationship between B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity.

Table - 5

Mean score relationship between B.Ed., trainees in their social adjustment and emotional maturity

Social Adjustment	'r' value	Nature of Correlation
Emotional Maturity	0.63	Substantial

From the above table is inferred that there is positive substantial relationship between Social Adjustment of B.Ed., trainees and their Emotional Maturity. Hence the null hypothesis is rejected.

1. MAJOR FINDINGS

I. There is significant difference between male and female B.Ed., trainees in their Social Adjustment and Emotional Maturity.

ii. There is no significant difference between Arts and Science B.Ed., trainees in their Social Adjustment and Emotional Maturity.

iii. There is significant difference between I year and II year B.Ed., trainees in their Social Adjustment and Emotional Maturity.iv. There is no significant difference between Hindi medium and English medium B.Ed., trainees in their Social Adjustment and Emotional Maturity.

v. There is significant difference between B.Ed., trainees of rural and urban colleges of education in their Social Adjustment and Emotional Maturity.

vi. There is significant relationship between B.Ed., trainees in their Social Adjustment and Emotional Maturity.

2. INTERPRETATIONS AND DISCUSSION

The investigator with his limited observations and experience in the field of educational research has come out with the following interpretations to the findings of the present study.

The 't' test results regarding the variable **'social adjustment'** reveal that there is significant difference between B.Ed., trainees with respect to gender (male and female), year of study (I year and II year) and locality of colleges (rural and urban). But on the other side the 't' test result reveals that there is no significance difference between the B.Ed., trainees with respect to subject of study (arts and science) and medium of instruction (Hindi and English).

The findings of the study conducted by **Joseph Catherine** (2014) among B.Ed., trainee teachers coincide with the findings of the present study where there is significant difference between male and female B.Ed., trainee teachers in their social adjustment. The findings of the same study indicated that there is significant difference between rural and urban students. But on the other side, the findings of the study conducted by **P. Priya Packiaselvi and Malathi. V. A** (2017) revealed that there was no significant difference among higher secondary school students with respect to gender and locality of schools. Likewise, the study conducted by **Shabir Bhat and Anoop Beri** (2016) among college teachers proved that there was no significant difference in the social adjustment with regard to their gender (men and women) and locality (rural and urban) of college. The findings of the study conducted by **Amit Singh** (2017) among the senior secondary school teachers indicated that there is no significant difference in adjustment between male and female senior secondary school teachers. While comparing the mean scores, women teachers were higher in their adjustment than their men counter parts and this result does not support the findings of the present investigation.

The 't' test results regarding the variable **'emotional maturity'** reveal that there is significant difference between B.Ed., trainees with respect to gender (male and female), year of study (I year and II year) and locality of colleges (rural and urban). But on the other side the 't' test result reveals that there is no significance difference between the B.Ed., trainees with respect to subject of study (arts and science) and medium of instruction (Hindi and English).

The findings of the study conducted by **M. Panimalar Roja, N. Sasikumar and M. Parimala Fathima** (2015) revealed that there is a significant difference between male and female students of higher secondary course in respect to their emotional maturity. The findings of the same study indicated that there is no significant difference between rural and urban area residence students of higher secondary course in respect to their Emotional Maturity.Likewise the study conducted by **Umender Malik and Shweta Kapoor**(2014) revealed that significant difference found in teaching effectiveness of secondary school male teachers with extreme emotional maturity and extreme emotional immaturity. Similar results were found out for female teachers, urban teachers and rural teachers. But on the other side, the findings of the study conducted by **Suman Nehra** (2014) revealed that there is no significant difference between the emotional maturity of boys and girls studying in class IX. Likewise the study conducted by **Jasbir Kaur and Babita Arora** (2014) found that there is no significant difference was found between coping styles and emotional maturity of boys and girls teacher trainees.

The results of the correlation analysis reveal that there exists significant substantial relationship between social adjustment of B.Ed., trainees and their emotional maturity. Likewise the study conducted by**Shabir Bhat and Anoop Beri** (2016) revealed that there is a significant positive relationship between social adjustment and job performance. Similar results were obtained for the study conducted by **Yellaiah** (2012) established that there is a low positive relationship between Adjustment and Academic Achievement. But contrarily, the study conducted by **Amit Singh** (2017) revealed that there is no significant relationship between adjustment and teaching aptitude of male and female senior secondary school teachers. Similarly the study conducted by **M. Panimalar Roja, N. Sasikumar and M. Parimala Fathima** (2015) among higher secondary school students revealed that there is no significant relationship of correlation between emotional maturity and self-concept of higher secondary course students. Likewise the study conducted by **Suman Nehra** (2014) established that there is no significant relationship between adjustment and emotional maturity of class IX students. Also the findings of the study conducted by **Jasbir Kaur and Babita Arora** (2014) among teacher trainees revealed that there is a positive and non-significant relation was found between coping styles and emotional maturity.

3. CONCLUSION

Social adjustment is an effort made by an individual to cope with standards, values and needs of a society in order to be accepted. It can be defined as a psychological process. It involves coping with new standard and value. In the technical language of psychology "getting along with the members of society as best one can" is called adjustment. So, emotional maturity implies proper emotional control, which means neither repression nor violet expression. An emotionally mature person has in his possession almost all

types of emotional positive or negative and is able to express them at appropriate time in appropriate degree. On the other side, an emotionally mature person is friendly towards others and is less involved in the hostilities and the outbursts of anger and rage, typical of childhood. He is more inspired by pleasure satisfaction and contentment than ridden with worriers, anxieties and frustrations. An emotionally mature person may not have resolved all situations and factors leading to hostilities, anxieties and frustrations.

REFERENCE

- Amit Singh (2017). A Study of Teaching Aptitude and Adjustment of Senior Secondary School Teachers.
- Corey E. Ray et al. (2017). Social Adjustment and Academic Achievement: A Predictive Model for Students with Diverse Academic and Behavior Competencies. School Psychology Review. 35 (3), 493-501.

Ms. Sonia Dahiya
Assistant Professor, Mange Ram Women's College of Education, Sonipat
Haryana
Email id-skm097842@gmail.com

25

High society's multi faced woman in Shobha de's novel 'Socialite Evenings'

Poonam

Abstract-

Shobha De is a renowned writer and columnist in Indian English literature, known for championing alternative perspectives on women's freedom and empowerment. Her writing delves into sensitive aspects of human relationships, particularly those between men and women, with a candid and empathetic approach. In this paper, we analyze her debut novel, Socialite Evenings, which explores the idea of extramarital affairs as a means of breaking traditional societal norms and values. The novel follows the journey of Karuna, a prominent socialite in Bombay, as she transitions from a middle-class girl to an independent woman, advocating a feminist approach to life. Through Karuna's story, the novel sheds light on the marginalization of Indian women due to their husbands and highlights the institution of marriage and family in the affluent Indian society. As the narrator herself belongs to this social class, the portrayal of the setting and characters is authentic. Socialite Evenings is a romantic novel infused with feminist values, with a recurring theme of new women seeking identity and selfhood.

Shobha De is a notable figure in Indian English literature, renowned for her ability to present alternative perspectives on women's freedom and empowerment. Her writing is characterized by its sensitivity, empathy, and candidness, particularly in exploring complex human relationships. Unlike many Indian women authors writing in English, De presents an unfiltered and honest portrayal of events, without judgment or moralizing.

In this paper, we will focus on De's first novel, Socialite Evenings, which is a perfect example of her distinctive writing style. The novel revolves around the protagonist Karuna, a prominent socialite in Bombay, who rebels against societal norms by engaging in extramarital affairs. De uses Karuna's story to highlight the institutionalization of marriage and family in the affluent Indian society and the marginalization of women due to their husbands. Through Karuna's journey, De advocates a feminist approach to life, portraying women as strong, independent individuals with agency and the right to choose their own path.One of the most significant themes in the novel is the search for identity and selfhood, particularly among women. Karuna's journey from a middle-class girl to an independent woman reflects this theme. She breaks free from the traditional roles and expectations imposed upon her by society and her family and finds her own identity through her relationships with men. Through Karuna's character, De challenges the patriarchal values that underpin Indian society and advocates for women's rights and freedom.

Keywords: Shobha De, patriarchal values, protagonist, extramarital affairs.

INTRODUCTION

Indian English fiction has been enriched by a number of talented female writers, such as Kamala Markandaya, Anita Desai, Nayanatara Sahyagal, Attain Hosain, Santharamarau, Shashi Deshpande, and Shobha De. These writers offer a unique perspective on the world through the lens of women, and have written extensively about Indian women and their struggles, hardships, and societal roles. Their works delve into the morality of female characters and their journey to establish their own identity.

Shobha De, born in Mumbai in 1948, is a prolific author who has achieved the highest position among the top-rated authors in India. Her twelve books have topped the charts and set new records. She primarily writes about the high-flying upper-class society of India, and explores issues related to women. Through her writing, she challenges the traditional image of Indian women as submissive and agreeable, and presents a new image of strong and independent urban women. De's writing style is bold and forthright, and her books reflect the lifestyles of the elite and middle classes in the urban world.

De's first novel, Socialite Evenings, published in 1988, depicts the high society of Mumbai and explores the lives of rich housewives trapped in cold marriages, engaging in extramarital affairs, and dealing with selfish and self-centered husbands. The novel also delves into trendy parties, false spiritual leaders, and the moral bankruptcy of the elite who have abandoned traditional culture for westernization and modernization. The main protagonist and narrator of the novel, Karuna, seeks to escape her boring and monotonous life by writing diaries, which eventually leads to her becoming a functioning socialite and using her newfound fame to land a position as a copywriter and producer of a TV series.

Shobha De is known for her frank and honest writing style, which allows her to explore taboo subjects and push boundaries. She often writes about the challenges faced by modern Indian women who are expected to balance traditional values with the demands of contemporary society. In her novels, she portrays women as complex and multifaceted

characters who struggle with issues of identity, power, and agency.

De's work has been particularly influential in shaping the portrayal of Indian women in literature. She has challenged traditional gender roles and presented a more nuanced understanding of the female experience. Her characters are not passive victims of their circumstances but rather active agents who strive to assert their independence and autonomy.

Socialite Evenings, De's debut novel, is a powerful exploration of the lives of Mumbai's wealthy and elite. The novel delves into the complexities of the high-society world and the challenges faced by women in this context. The main protagonist, Karuna, is a bored and restless housewife who feels trapped in her monotonous life. She turns to writing diaries as a means of escape, and this leads to her becoming a socialite and eventually finding fulfillment as a copywriter and producer.

The novel is notable for its unflinching portrayal of the excesses and decadence of the rich and famous. De's critique of the elite is particularly scathing, and she exposes the hypocrisy and moral bankruptcy that often characterizes this world. At the same time, she also shows the ways in which women can find agency and empowerment in the face of such challenges.

Overall, Shobha De's work has had a profound impact on Indian literature and culture. She has challenged traditional stereotypes and presented a more nuanced and complex understanding of the female experience. Her writing is bold and daring, and her characters are both relatable and inspirational.

In Shobha De's novel, Socialite Evenings, the main character, Karuna, is eager to escape the confinement of her traditional upbringing and societal expectations. As a rebellious child, she refused to conform to etiquette and norms, even declining to bow down to elders and wearing her scarf in a non-conventional way at school. As she grows older, she becomes emotionally drawn to the glamorous world of wealthy young women, desiring to break away from her mundane life. Throughout the novel, Karuna asserts her feminine identity through rebellion and defiance, never portraying herself as a victim. Shobha De's portrayal of Karuna's journey into the modern world is refreshingly free from the stereotypes often associated with male artistic depictions of women. However, Karuna's immersion into the fashionable world begins with a negative experience at Anjali's luxurious home in Malabar Hill, where Anjali accuses her of being overly sensitive and obsessed with sex. This is further reinforced by her experiences while dating a New Delhi advertising filmmaker in London. Despite her efforts to assert herself and reject gender stereotypes, Karuna refuses to succumb to the pressures of a male-dominated culture.

In the novel, Karuna's desire to break free from societal expectations is evident from an early age. As a child, she was a rebel who refused to adhere to traditional norms and conventions. Her refusal to bow down to elders and her unconventional style of wearing her scarf at school were just some of the ways in which she challenged societal norms.

As she grows older, her rebellion intensifies, and she becomes increasingly drawn to the glamorous world of wealthy young women. Throughout the novel, Karuna is portrayed as a strong and independent woman who asserts her feminine identity through rebellion and defiance, never portraying herself as a victim.

Shobha De's portrayal of Karuna is a refreshing departure from the stereotypes often associated with male artistic depictions of women. She depicts Karuna's journey into the modern world in a nuanced and complex way, highlighting the challenges that women face as they try to break free from traditional roles and expectations.

However, Karuna's journey is not without its challenges. Her immersion into the fashionable world begins with a negative experience at Anjali's luxurious home in Malabar Hill, where Anjali accuses her of being overly sensitive and obsessed with sex. This is further reinforced by her experiences while dating a New Delhi advertising filmmaker in London.

Despite these challenges, Karuna remains true to herself and refuses to succumb to the pressures of a male-dominated culture. Her journey is a testament to the strength and resilience of women who dare to challenge societal norms and expectations.

"Exploring Women's Identity in Socialite Evenings by Shobha De"

Socialite Evenings, Shobha De's debut novel, follows the journey of Karuna, a prominent socialite in Bombay, as she transitions from a middle-class girl to an independent woman. The novel explores the customs of family and marriage that exist within the wealthy class of Indian society and examines the theme of identity and self-discovery. Karuna was born in a small hospital in Satara, a remote town in Maharashtra, and does not remember much of her childhood except for the strictness of her father. Her mother, occupied with domestic tasks, did not spend much time getting to know her daughter. Karuna, the heroine of Socialite Evenings, is a prime example of the hopelessness that many women in India face. Her life begins when her

family moves to Bombay due to her father's official transfer. There, she meets Anjali, a prominent socialite and the wife of a wealthy playboy. Karuna's world changes as she begins to yearn for a career in films and travel abroad. After she enters college, she marries Bunty, a wealthy businessman, and her family accepts him due to his societal status. However, he is not the ideal husband material that Karuna was looking for, as he is unexciting, unfulfilling, and uneducated. Karuna gets bored with her husband, who does not share her interests and tries to alleviate her blues by reading books and doing crossword puzzles. Thus, women are reduced to a mere object. This reduction of women to an object is mainly a phallocentric pattern. Karuna's husband regards her as an object, a mere item subject to his will. Clearly, Karuna has only a formal association with her husband, and intimacy between the couple is missing. Karuna rebels against her inhumane husband and finally divorces him. As a self-acknowledged person, she comes to realize that extramarital affair becomes an oasis in the desert. It does not bring any satisfaction to women, and thus, she rejects the offers of Girish and Ranbir because she does not want to lose her identity. She wants to make her true presentation, which gives her a sense of freedom. She decides to live her life on her own terms by rejecting the idea of getting married for the second time. As a self-acknowledged person, Karuna opts for singlehood as a lifestyle. When her husband attempts to reconcile with her, she understands his deceit and rejection. Due to her nauseating and unproductive experience, she accepts the status of singlehood as a guarantee of herself. "I still resisted them. I guess my true concerns were different. It wasn't money or success I was looking forward to in my life at that point; it was the freedom to do what I wanted." Karuna is the modern new woman, who is free in every aspect. She breaks free from the obligations of marriage and lands firmly in her preferred profession of modeling. In the process of developing her identity, she rediscovers her husband and takes up journalism as her career. Karuna immerses herself in reviewing her memories. She gains great distinction through her works and pride in her endeavor. She becomes a socialite to solidify her position in the media. She pursues her career in all aspects with her charms, intelligence, and strength. Karuna is introduced to the world of modeling by her mentor, Anjali. Karuna had always dreamed of being a part of the smart and beautiful set. Modeling helps her create an identity for herself. Anjali, a young socialite, also suffers greatly because of her tumultuous marriage and her husband's abusive behavior. Anjali and Ritu are also presented as liberated and emancipated new women.

Conclusion

In summary, Socialite Evenings is a romantic novel that is infused with feminist values. The novel portrays women as complex, multidimensional individuals who are capable of making their own decisions and shaping their own destiny. The novel's setting, characters, and themes are all rooted in the affluent Indian society, making the story feel authentic and relatable.Shobha De's Socialite Evenings is a masterpiece of Indian English literature that challenges traditional societal norms and values through its portrayal of women's struggles for freedom and identity. De's writing style is candid, empathetic, and sensitive, making the novel a must-read for anyone interested in exploring the complexities of human relationships and the pursuit of personal freedom and agency.

REFERENCES

- Shobha De, Socialite Evenings. New Delhi: Penguin, 1989.
- Shankar Rao, C. N. (2004). Sociology of Indian Society. India: S. Chand Limited.
- Rao, S. C. N. (2012). Sociology: Principles of Sociology with an Introduction to Social Thought. India: S. Chand Limited.
- N. Kumar, The Road to Baghdad, or TravellingBiculturalism:TheorizingaBiculturalWashington,Washington:NewAcademia,2005.
- L. Alterno, Post liberalization Indian Novels inEnglish:PoliticsofGlobalReceptionandAwards, London:AnthemPress,2013.
- Ahuja, R. (1999). Society in India: Concepts, Theories, and Changing Trends. India: Rawat Publications.
- Raghuramaraju, A. (2010). Modernity in Indian Social Theory. India: OUP India.
- Understanding Indian Society: Past and Present : Essays for A.M. Shah. (2010). India: Orient Blackswan.
- H. Stevens, Henry James and Sexuality, NewDelhi:CambridgeUniversityPress,pp.27,2008.
- Sharma, R. K. (2004). Indian Society, Institutions and Change. India: Atlantic.
- P. Syal, ―Powder, puffs and Shobhaa De‟sfiction:Thenovelasconsumerproduct, ContemporaryIndianWomenwritersinEnglish:AFeministperspective,Ed.SuryaNathPandey,New Delhi:Atlantic,pp.53,1999.
- Shah, A. M. (2019). The Structure of Indian Society: Then and Now. India: Routledge.

- Madan, G. R. (2010). Western Sociologists on Indian Society (Routledge Revivals): Marx, Spencer, Weber, Durkheim, Pareto. (n.p.): Taylor & Francis.
- Hasnain, N. (2010). Indian Society and Culture: Continuity and Change. India: New Royal Book Company.
- Bharat, Meenakshi. Desert in Bloom: Contemporary Indian Women's Fiction in English, New Delhi: Pencraft International, 2004.
- Boehmer, Firstrealizeyourneed:Manju kapur' seroticnation, Alternative Indias:Cultural Diversity in Contemporary Literaturein English, Amsterdam: Rodopi, pp.53-70,2005.
- Indian Social Problems. (n.d.). India: S. Chand Publishing.
- J.Rosenberg,FlappersintheRoaringTwenties, London:Macmillan, pp. 25, 2004.• V.V.N.R.Prasad,—AnitaDesaiandthewoundedself, IndianWomenNovelists,Ed.R.K.Dhawan,NewDelhi:PrestigeBooks,Set.1,vol.11,1991.
- Beauvoir, Simone De. The Second Sex. translated: H.M Parshley, Penguin publishers, 1972.
- Venugopal, C. N. (1998). Religion and Indian society : a sociological perspective. India: Gyan Publishing House.
- Jayapalan, N. (2001). Indian Society and Social Institutions. India: Atlantic Publishers and Distributors.
- U. Barat, —From victim to non-victim: SocialiteEvenings as a version of kunstlerroman, TheFiction of Shobha De, Ed. Jyadipshin Dodiya,NewDelhi:PrestigeBooks,pp.119-128,2000.

Poonam
D/oRamMehar
VPO - Silla kheri,
The--Safidon,Distt-JIND
Mobile-9992989839

26

BHARAT CONSTITUTIONAL ASPECTS ONE NATION ONE ELECTION OF BHARAT NEED IT AND CHALLENGES FOR IMPLEMENTING ONE NATION ONE ELECTION IN BHARAT .

Dr. Santosh Kumar Sharma

ABSTRACT

The primary force behind the slated reform of *One Nation-One Election (ONOE)* is to synchronise Lok Sabha and State Assembly elections across all States, in order to lessen the frequency of polls across the country. This was the norm until 1967, but gradually got disrupted due to factors such as defections, dismissals, and government dissolutions. The Centre had invoked Article 356 in 1959 to depose the then-Kerala administration. Following that, several Legislative Assemblies were dissolved in 1960s, resulting in separate elections for the Lok Sabha and State Assemblies. It is to be noted that Assembly elections are still held concurrently with the Lok Sabha elections in Arunachal Pradesh, Sikkim, Andhra Pradesh, and Odisha. The Law Commission, chaired by BP Jeevan Reddy, had called for simultaneous elections in 1999. According to Articles 83(2) and 172 of the Constitution, the duration of the Lok Sabha and State Assemblies is five years unless dissolved earlier, and there are circumstances, such as Article 356, where assemblies might be dissolved prematurely. As a result, the One Nation One Election plan raises several concerns about what would happen if the Central or State governments collapsed in the middle of their terms. Will elections be held in all states again, or will the President's authority be imposed? Another challenge with the concept is that it does not gel with the concept of 'federalism', because it is founded on the premise that the entire nation is one, which contradicts the very substance of Article 1,

INTRODUCTION

In this paper, the inherent mechanisms underlying the One-Nation, One-Election proposal, which has already drawn a great deal of criticism has been investigated upon. The validity of the arguments put out by each side, as opposed to the majority of contemporary public debates, which, regrettably and predictably, focus more on the debater than the debate itself has been examined. The preliminary conclusion reached is that there is no reason to reject the concept; rather, it has to be carefully redesigned to make it practical and, more significantly, agreeable. Ideas in the public sphere must be rigorous and intended to serve the purpose of enlightening the audience, rather than taking positions and making normative claims fed by contexts, because such debates have the potential to put a great deal of stress on democratic governance and values, particularly in a polarising times like these. Given the significance of this subject, it is astonishing that the majority of commentaries have only recently appeared in newspapers and other popular media. In order to decode the potential effects that such comprehensive transformation may unleash on our democracy, a much deeper study is imperative. Through this piece, an endeavour has been made to put forth various perspectives on the topical issue, primarily based on the trifecta of political, constitutional and legal aspects. Though the prospect of reverting to simultaneous elections was first mentioned in the Election Commission's annual report in 1983, the concept since been addressed in three reports as mentioned below; The Law Commission, led by Justice B P Jeevan Reddy, stated in its 170th Report in May 1999 that the cycle of elections every year, and out of season, should be ended. We must return to the days when elections to the Lok Sabha and all Legislative Assemblies were held simultaneously. The rule should be: one election every five years for the Lok Sabha and all On December 17, 2015, the Standing Committee on Personnel, Public Grievances, Law, and Justice published its report on the 'Feasibility of Holding This committee was chaired at the time by Dr. EM Sudarsana Natchiappan. The Committee noted that holding simultaneous elections would reduce massive expenditures incurred for separate elections, policy paralysis caused by the imposition of the Model Code of Conduct during elections, impact on delivery of essential services, and burden on critical manpower deployed during election time.

The Commission headed by Justice B.S. Chauhan had noted in its August draft report that\policies, and ensure that the administrative machinery is engaged in development activities rather than electioneering.

CHALLANGES

Obtaining consensus among different political parties, particularly regional ones, on holding simultaneous elections entails legal and political difficulties in itself. It would be tiresome to persuade all political players to reach an understanding on the necessary legal adjustments.

Simultaneous elections may necessitate changes to 'anti-defection' laws which were

made to effectuate the 52nd amendment, 1985 of the Indian constitution to thwart legislators from changing parties in response to the election cycle. Later, tenth schedule was inserted into the constitution.

Legal representation in court may also be impacted. During

elections, the volume of cases in courts at various levels (national, state, and municipal) may increase, influencing the judicial process.

Simultaneous elections may save election costs, but they may pose financial and administrative issues. Its implementation will necessitate vast resources. A solid legislative framework for budget allocation and resource coordination would be required to implement such a transition.

It is legally complicated to coordinate the terms of multiple levels of government to coincide with the election cycle. State governments, for example, have different terms, and 11 states enjoy special status under Article 371 of the Constitution. In India, state governments enjoy a considerable degree of autonomy and can resist those measures that infringe upon their authority. Thus, the imposition of ONOE would amount to an assault over state autonomy. It may have an impact on their independent operation, which is guaranteed under the constitution. Similarly, local elections feature a decentralised governance structure in which local governments have extensive authority. To comply with the new election cycle,

simultaneous elections would necessitate revisions to the legislation regulating local body elections. Implementing ONOE in India raises numerous legal obstacles due to the country's complicated political and constitutional framework Significant revisions to the Indian Constitution, such as important clauses dealing tothe periods of elected bodies (e.g., Lok Sabha, state assemblies, and municipal bodies), will be required. Before such a suggestion could be adopted, at least five Articles of the Constitution - 83, 85, 172, 174, and 356 and various statutes would have to be altered.Union and state legislatures would also need to have fixed terms. This means that, unless in the case of a proclaimed emergency, the House's tenure cannot be prolonged at any cost. It would also not allow the House to be dissolved before its term expired. Amending the Constitution in this case would be a time-consuming and politically difficult procedure necessitating a two-third majority in both Houses of Parliament. At-least half of the States' assembly ratification would also be needed. It is a logistical difficulty in our country, which has a population of above 140 crore people. Elections are celebrations of democracy in India.This necessitates careful preparation and coordination, which can be challenging if multiple decisions must be taken at the same time.

Some claim that holding elections at the same time can prevent voter weariness. Others warn of the risk of information overload for voters, owing to the fact that they must choose leaders at various levels of government at the same time. Every voter has various considerations and, as a result, voting preferences at the national, state, and regional levels. Simultaneous elections raise the risk of national problems overshadowing local issues. Due to uncertainty or overwhelm, this might have a negative impact on voters' decision-making ability while selecting candidates.

The viability of holding simultaneous elections in India is currently being explored by a eight member committee, formally notified on September 2nd, to be led by former President Ramnath Kovind. Critics claim that the proposal runs against the fundamental concept of multi-tiered governance. One of the committee's terms of reference is to examine whether a constitutional amendment in this case would require ratification by state legislatures. Some constitutional experts contend that it would be labelled unconstitutional and would not stand up to legal examination.

The proposal also seems impractical unless the terms of Lok Sabha and State Assemblies are fixed and premature dissolution for whatever cause is prohibited.

An Indian Parliament standing committee had highlighted, elections to national and provincial legislatures in South Africa are held simultaneously after five years, with municipal elections held two years later. Elections to the national legislature (Riksdag), provincial legislature/county council (landsting), and local bodies/municipal assembly (Kommunfullmäktige) in Sweden are held on a fixed date every four years – the second Sunday in September. The Fixed-term Parliament Act, 2011, governs the term of parliament in the United Kingdom.

On August 30, 2018, the Law Commission of India, chaired by Justice B.S. Chauhan, released its report on Simultaneous Elections. It probed into legal and constitutional issues concerning the conduct of simultaneous elections. One of the key findings was that simultaneous elections could not be held under the same Constitutional structure. Through suitable revisions to the Constitution, the Representation of the People Act 1951, and the Rules o Procedure of the Lok Sabha and State Legislative Assemblies, simultaneous elections may be held. The Commission also recommended that the constitutional amendments be ratified by at least 50% of the states. The Commission stated that holding simultaneous elections would save the government money, reduce the burden on the administrative setup and security forces, ensure timely implementation of

government policies, and ensure that the administrative machinery is focused on development rather than electioneering. The commission's take on some of the pressing issues are mentioned below:

The Commission stated that if a no-confidence vote is passed, the tenure of the Lok Sabha/state parliament may be reduced. Through suitable revisions, it advocated replacing the 'no-confidence motion' with a 'constructive vote of no-confidence'. Only if there is confidence in an alternate government can the government be dismissed in a constructive vote of no confidence. It further urged that the number of similar motions be limited during the House/ Assembly's tenure.

Hung House/Assembly Case

If no party has a majority to form a government, the House/ Assembly may be hung. To avoid this, the Commission proposed that the President/Governor provide the largest party and their before or post-election alliance the option to form the government. If a government cannot be formed, an all-party meeting may be convened to break the impasse. If this does not work, mid-term elections may be held. The Commission suggested that suitable adjustments be made to provide that any new Lok Sabha/Assembly created following mid-term elections be formed merely for the remainder of the existing term, rather than for the complete five years.

Anti-defection laws' amendment

The Commission suggested that anti-defection legislation be amended to ensure that all disqualification concerns (arising from defection) are resolved by the presiding officer within six months. If simultaneous elections cannot be held, the Commission suggested that all elections due in a calendar year be held concurrently. The timing of such an election should benefit all state legislatures concerned as well as the Lok Sabha (if it is dissolved earlier). This option will necessitate changes to the Constitution as well as the Representation of the People Act of 1951.

Discussions

Critics question that why the above-mentioned committees never saw the imposition of President's rule for whatever time in states, to save money for the exchequer and ease the burden on the government machinery, as a disproportionate step when compared to people's right to be governed by an elected government at all times. The same holds true for the recommendations regarding the swearing-in of new houses, that will remain operational for the remainder of the time. If the Model Code of Conduct allegedly impedes developmental activities, the remainder term might also obstruct such activities if the concerned government is there at the helm, only for three years rather than the conventional five. It is also claimed that our lack of election synchronisation is a tenet of our evolution as a democratic polity with a federal framework. It is further alleged that the successive committees formed on the topical issue merely stood on the shoulders of their predecessors, in recommending various ways to conduct simultaneous elections. They did not add any fresh perspective to the discourse as much as they revisited and reiterated established perspectives without broadening the discussion. Some critics also contend that by disrupting the simultaneous elections in 1968 and 1969, Article 356 of the Constitution set off a series of out-of-sync elections across the nation. As is the case, in the event that the constitutional machinery in a state fails, the President assumes the authority under Article 356. The mechanism states that if the President is convinced that a situation has developed in which the government of a state is unable to function in compliance with the provisions of the Constitution after receiving a report from the governor of a state, the President may either decla re that all of the governor's powers have been transferred to her or that the legislature's powers are now exercisable only with the permission of the Parliament. This is referred to as President's Rule in common parlance. The Supreme Court had ruled in the famous case of SR Bommai v. Union of India (1994) that the President's authority to dissolve a state government under this article is not unlimited and should only be used after such a proclamation has been approved by both houses of Parliament. This served as a check on the president's authority to dissolve a state legislative body, as it had been in 1968, 1969, and various cases after.

On the other hand, the proponents of ONOE argue that since it would be easier for individuals to cast multiple ballots at onc e, during simultaneous elections, it might potentially improve voter turnout as well, also reported by the Law Commission itself. The implementation of "One Nation, One Election" will let the government to concentrate more on critical governance issues as opposed to being perpetually arrested in election mode, which often delays the implementation of welfare policies.

Conclusion and the Way Forward

During different elections, different power institutions, such as the state government and the centre, are assessed differently. Since the ruling establishment has repeatedly advocated for simultaneous elections, the debate on this topic will only intensify as long as it is in power. However, constitutional modifications and any step towards simultaneous elections might face a variety of hurdles,

ranging from opposition from political parties to legal issues.While simultaneous elections in India have the potential to reduce costs, it is important to carefully evaluate how they will affect federalism and the distinct nature of the several tiers of government. To ensure that the core of Indian democracy, with its decentralised governance structure, is retained and strengthened, the committee, headed by the former President Ramnath Kovind, must thoroughly examine these federal characteristics.

Prioritising a thorough analysis of the federal components of Indian democracy before holding concurrent elections seems imperative. The potential effects on federalism, the various functions of levels of government, and the local autonomy pointers should all be examined. To ensure that citizens are informed about the ramifications of simultaneous elections, open public conversations and awareness initiatives needs to be promoted. The public, professionals, and political organisations ought to be holistically engaged to collect diverse viewpoints. To understand how simultaneous elections may affect state autonomy and governance, comprehensive deliberations with state governments and political parties is the need of the hour. To evaluate the benefits and challenges on a practical level, the idea of launching simultaneous elections on a trial basis in a few selected states or areas deserve to be considered. Pilot projects can offer insightful information about the viability and consequences of such a large electoral reform. Creating a robust legal and constitutional structure that expressly takes into account federalism's guiding principles and the distinctive functions of the various levels of government must be given due chance to manifest. The reform in making should protect the autonomy of local organisations and attend to the unique requirements of each level of government.

REFERENCES

Bansal, M. (2019). The Concept of One Nation One Election: An Analysis from Indian Perspective. *Think India Journal*, *22*(4), 3077-3084. Bhagat, P., & Pokharyal, M. P. (2020). CONCEPTUAL REFORMS ONE NATION–ONE ELECTION. *Ilkogretim Online*, *19*(4), 3929-3935.

Committee Reports. (n.d.). PRS Legislative Research. Retrieved September 25, 2023, from https://prsindia.org/policy/report-summaries/draft-report-simultaneous-election

Decoding One Nation, One Election. (n.d.). Drishti IAS. https://www.drishtiias.com/daily-updates/daily-news-editorials/decoding-one-nation-one- election

Khare, S. (2022). One Nation One Election in India. *Issue 3 Int'l JL Mgmt. & Human.*, *5*, 1309.

Mishra, A. (2023, September 21). *Is "One Nation, One Election" really feasible?* Frontline. https://frontline.thehindu.com/politics/bjp-renews-one-nation-one-election-pitch-ahead-of-2024-lok-sabha-election/article67288434.ece

Kaushik, A. K., & Goyal, Y. (2019). The desirability of one nation one election in India: Simultaneous elections. *The Journal of Social, Political, and Economic Studies*, *44*(½), 110-120.

One Nation, One Election: Prospects and Challenges - Civilsdaily. (2023, September 12). https://www.civilsdaily.com/story/one-nation-one-election- prospects-and-challenges/

One nation, one election plan: How the Constitution is amended, when do states get a say. (2023, September 3). The Indian Express. https://indianexpress. com/ article/ explained/explained-law/one-nation-one-election-how-constitutional-provisions-amended- 8922740/*One nation, one election: What past committees, commissions have said*. (n.d.). India Today. Retrieved September 25, 2023, from https://www.indiatoday.in/india/ story/one-nation-one-election-simultaneous-polls-law-commission-parliamentary-reports-2429834-2023-09-01

sabrang. (2023, September 21). Analysing the Feasibility of Simultaneous Elections in India: A Review of Committee Recommendations and Constitutional Implications. Sabrang India Singh, K. (2023, September 4). Explained | What is the debate around "one nation, on election"?. *The Hindu*. https:// www.the hindu.com/ news/ national / explained- what- is- the-debate-around-one-nation- one-election/ article67267721.ece

Dr. Santosh Kumar Sharma (Ph.D)
M. COM, PGDIM MAT.MGMT. MBA, LLB,
LLM WITH PhD.
Mo.-9899882948-santosh.sharma2013@gmail.com
H. NO. 5113 SECTOR- 03, FARIDABAD (121004)

27

The Struggle for Justice and Institutional racism in "If Beale Street Could Talk" by James Baldwin.

Ravi Kachhap

Abstract:-

This article will explore James Baldwin's groundbreaking book "If Beale Street Could Talk," specifically focusing on racial profiling and systemic racism, which was more prevalent during the 1960s. The study examines the intricate ways in which African Americans negotiate and express their personal identities in a challenging environment. This study will show how, through the characters of Tish and Fonny, Baldwin attempted to challenge the conservative societal norms by investigating the character dynamics. Baldwin's exceptional skill of narrating true stories illuminates the intricate relationship between a person's personality and outside influence. It accurately depicts the character's challenges and sufferings of Blacks living in America. The study will also help us to understand and enable us to be more aware of the instances related to US imperialism against people of colour.

Baldwin's literary work addresses the problems of racism and homophobia that black Americans endure in day-to-day life due to their skin colour. His writing excessively influenced American society, especially during the Civil Rights Movement; his best-selling book "The Fire Next Time" was read by all readers irrespective of their ethnicity. His reflections on "Black Lives Matter" make him a valuable resource for comprehending a crucial phase of the "Civil Rights Movement, " considered America's most important battle in the latter half of the 20th century to attain basic fundamental rights. In conclusion, this work shall facilitate the readers of all classes to reflect on the deep and long-lasting consequences of the suffering shown in the novel "If Beale Street Could Talk."

Keywords:- discrimination, ethnicity, black lives, systemic, marginalization, racism, oppression, prejudices, civil rights, identity, alienation, suffering, racial profiling, stereotypes

The Struggle for Justice and Institutional racism in "If Beale Street Could Talk" by James Baldwin.

James Baldwin is the greatest Afro-American novelist, playwright, poet, and essayist of African American Descent. James Baldwin was the most influential African-American writer and spokesman during the Civil Rights Movement. His role as the Civil Rights movement's spokesperson arose in the 1960s. His remarkable writing and oratory abilities have earned him an exceptional reputation. His description of black life in America is extraordinary. When he was 14, he was ordained as a Pentecostal preacher but left the church to accomplish his writing career. He left America after getting annoyed by the racist attitude towards African Americans. 1948, he moved to France after receiving a writing grant on recommendation from Richard Wright. He left his native country because he believed he couldn't write freely or honestly in America and, even more amazingly, that you couldn't write from the Harlem Ghetto. "Go Tell It on the Mountains," Baldwin's first semi-autobiographical book, is regarded by contemporary libraries as one of the top 100 English-language novels of the 20th century. (Leeming 11)

His writings addressed several taboo subjects, including interracial relationships and homosexuality. Giovanni's Room, his second book, has no black characters. Giovanni's Room is a contentious book with only white characters. One of the earliest novels in America to handle sexual ambiguity and homosexuality is this one. Although it was still taboo to discuss homosexuality and masculinity in novels, the middle of 1950 was a bold time to publish books on the subject.

The novel depicts African American prisoners' destinies and prevailing circumstances in the United States. The misery that Fonny, Tish, and their families go through as a result of his unfortunate arrest is at the centre of "If Beale Street Could Talk's plot. Baldwin uses Fonny's unfair punishment as an example of how the justice system in the United States may be biassed against African Americans. Daniel's narrative is similar to Fonny's case; both men were falsely charged with criminal acts for which they were innocent. They have to live with the consequences without doing a mistake. Subsequently, Daniel, who lacks the skill of driving a car, was accused of car theft:

> "They said - they still say - I stole a car. Man, I can't even drive a car, and I tried to make my lawyer - but he was really their lawyer, dig, he worked for the city - prove that, but he didn't. And, anyway, I wasn't in no car when they picked me up. But I had a little grass on me. I was on my stoop. And so they come and picked me up, like that, you know, it was about midnight, and they locked me up and then the next morning they put me in

the line-up and somebody said it was me stole the car - that car I ain't seen yet". (Baldwin 102).

Daniel notes his attorney in the subsequent lines,

" but he was really their lawyer, dig, he worked for the city - prove that, but he didn't. And, anyway, I wasn't in no car when they picked me up". (Baldwin 92)

The jail and police authorities in New York are biased toward black people, which is a bigger problem than the imprisonment of Daniel and Fonny.. Despite their innocence, they feel powerless since they are victims of racial prejudice. Because of this unfair situation, the person and his family will have to go to jail and have their lives messed up, but they will also be heavily damaged mentally:

"Man, I know what you're saying. And I appreciate it. But you don't know - the worst thing, man, the worst thing - is that they can make you so fucking scared. Scared, man. Scared" (Baldwin 94)

The above lines show the pain and agony of Fonny and David; they were the victims of racial injustice at the hands of white imperialistic society.

Through an engaging tale of "If Beale Street Could Talk," the piece encourages readers to interact with the complex relationship between literature, sexuality, and societal norms. The study has explored the theme of suffering in James Baldwin's novel "If Beale Street Could Talk' through a subtle of the characters and also the story. Making use of a literary analysis method By exploring the psychological and emotional dimensions of the characters' suffering,

Baldwin tackles the issues of race, sexuality, and jail life again in his 1974 book If Beale Street Could Talk. After the book's publication, Joyce Carol Oates praised it in the New York Times about the novel as: " a very traditional celebration of love". In her lines the story depicts the "Psychological terror" of American racism and how black families were able to stay together

(Oates 376). The book looks at what happened to Fonny and his family when he was wrongfully jailed for raping a Puerto Rican woman. Fonny is a twenty-two-year-old black sculptor who was convict on false charges. Baldwin had initially planned to set the play in Attica, but as Fonny's prison, he picked the Tombs instead. One of the main characters in the book is Fonny's pregnant 19-year-old lover, Tish. She says that going to the tombs is like crossing the Sahara while vultures circle above:

"They circle lower and lower: they wait. They know. They know exactly

when the flesh is ready, when the spirit cannot fight back. The poor are

always crossing the Sahara. And the lawyers and bonds-men and all

that crowd circle around the poor, exactly like vultures". (Baldwin 11).

In his works, Baldwin describes a violent and physically vicious police regime. However, Fonny, Tish, and their families find ways to keep going. The Black Power movement gives them strength. The family's weekly trips to the prison end with a common practice. The story is told by Tish, who says in the following lines,

"The man came up behind Fonny, and it was time to go. Fonny smiled and raised

his fist, like always and I raised mine and he stood up". (Baldwin 10)

On the other hand, Baldwin says that the ability to love is at the heart of the family's chance to survive and maybe even be saved. There is stress on Tish because she is pregnant, and Fonny is wrongly imprisoned. Her mother-in-law is worried about her, kisses her on the forehead and says in the following lines, "I don't want to sound foolish. But, just remember, love brought you here. If you trusted love this far, don't panic now" (Baldwin 102).

Baldwin's utopianism in parts like this can't be separated from his bigger picture of love and sexuality that is more inclusive, both inside and outside of jail. The book's central theme is Tish and Fonny's love, but the relationships between guys, which many authors, including Oates, have missed, are also very essential elements to be considered. Baldwin writes in great depth about the pain men feel because of male violence. Male violence, including rape, happens to both Fonny and his best friend, Daniel, who was already in jail for two years before Fonny was arrested. Daniel is weak and distrustful, and he needs a safe place to stay because he is in jail. He feels better knowing that Tish and Fonny love each other and him. Because of this love, especially Fonny's love for Daniel, Daniel can slowly reveal the scarier truth. Information about where he is being held. Tish tells us in the below stated lines:

"Daniel tried to tell Fonny something about what had happened to him, in prison.

Sometimes he was at the house, and so I heard it, too; sometimes, he and Fonny were alone. Sometimes, when Daniel spoke, he cried—sometimes, Fonny held him". (Baldwin 115)

Daniel slowly starts to talk about how sexual the violence he saw and experienced was. He can't get rid of the horrible

way the cops treated him when they arrested him for having pot:"do they love to pat your ass," he recalls (Baldwin 116). During his time in the police van after being arrested, Fonny sees another black guy being violently detained by white officers. "not hardly much more than a kid."(Baldwin 98). The man and the child with "his arms wrapped around himself"(Baldwin 98) cries out in agony. The white cops take joy in the man's or child's suffering, which is reminiscent of the sadistic nature of the American criminal justice system and slavocracy. Daniel remarks, "Young," as he watches the man get arrested.

> "I don't believe there's a white man in this country, baby, who can even get his dick hard, without he hear some nigger moan" (Baldwin 98).

Ultimately, Daniel tells Fonny that he witnessed nine men violently rape another prisoner the night before Fonny was arrested, and he endured sexual assault while imprisoned. Fonny again hugs Daniel in his arms in response to his friend's revelation. With his affection, Fonny aspires to "help his friend toward his deliverance" (Baldwin 114). Baldwin argues that, despite the terrible nature of these acts of sexual assault, the recovery and strengthening of homosocial closeness and affection both inside and outside of prison walls serves as a counterbalance to male-on-male violence.

Baldwin says that men's love for each other can help them overcome the terrible things that are coming. Thus, Baldwin focuses on acts of male aggression and the renewal of love and connection that can still happen in the shadow of jail in the story of "Beale Street Could Talk".

Baldwin truly believed in the kind of homosocial regeneration that Fonny and Daniel's friendship offers as an example. Frank, Fonny's father, and Tish's father, Joseph, become closer due to Fonny's imprisonment. We see this newfound unity when the two guys get together for drinks at a pub on Lenox Avenue and discuss how they will fight for Fonny's liberation while helping each other along the way. Frank tells Joseph that he thinks Fonny's incarceration is the product of inadequate parenting:

> "He's in jail, and it's not his fault. I have no idea how I'm going to get him out. I don't even know if I was ever his true father. Yes, I am an extraordinary man. (Baldwin 113)

Instantly, Joseph moves to console Frank: "Well, says Joseph, he sure thinks you are. He loves you, and he respects you—now, you got to remember that" (Baldwin 113). The two guys, who are both fifty years old, approach each other with care and kindness, which is the opposite of what Fonny and Daniel see in prison. Frank and Joseph show what it means to be a guy and a father based on male unity and kindness. Baldwin believes that Fonny's release from jail, which makes him dream of ending all prisons, depends on men being able to create new ways of being men and being together. Indeed, Baldwin's work from the 1960s and 1970s is full of references to themes that are important to him, such as being a man, being sexual, and being locked up.

Conclusion:

The research has investigated the various facets of the pain that couple Fonny and Tish, the main characters, endured in the story due to systemic racism. Baldwin undertakes a journey through his fictional characters, Tish and Fonny, to shed light on more burning social issues. The results of the study will add to the expanding body of work on African American literature. The research will examine the current conversation about race, love, and resiliency in the face of institutional racism that African Americans experience as a result of their skin tone and ancestry as enslaved people. By deciphering the characters' experiences, this study advances our comprehension of Baldwin's socio-cultural criticism and illuminates the significant influence of societal norms on the development of personal identity.

Fonny and Daniel suffered abuse by Officer Bob and they were made to feel weak and afraid to take a stand for themselves. Baldwin exposes how racist hierarchies especially the police authority in the United States of America may incite young niggers against one another when he seeks to intimidate Daniel into testifying against Fonny. The notion of "Black Lives Matter" is well connected with the story line of If Beale Street Could talk. Baldwin thus demonstrates how black people in America also share the same history with the other native Americans. The blacks were the strong pillar of the American democratic system, and they, too, sang for America.

After centuries of struggle by Black Americans in the land of America now they are well enough to speak for their rights. Instead of being called as an Afro Americans, they too want to be called as native Americans just like the white Americans are no more called as European Americans. Baldwin further asserts that even though blacks are marginalised by the country's unjust and oppressive power structures, which forced the person of colour to eventually isolate themselves from their own community. And out of fear and terror the characters in the novel, If Beale Street it is impossible to speak for their own rights.

Another thing that becomes clear is that this kind of racism Baldwin wanted to portray through this novel is

institutionalized racism. Baldwin made it very clear that bigots use fear and panic to control black people. This means that the power structures around Fonny and his family members try to keep them from voting. Now that Daniel is out of prison, he's even more afraid than he was before because he can't imagine a life without hate and persecution. Daniel knows this well because he was jailed for a crime he didn't commit.

The white imperial system in America mistreated Fonny and Daniel because they were made to feel weak and afraid to stand up for themselves. Baldwin proficiently illustrates how racist hierarchies may incite young niggers against one another when he attempts to intimidate Daniel into testifying against Fonny. Baldwin thus demonstrates how black people in America are disadvantaged by the country's unjust and oppressive power structures, which force them to eventually isolate themselves from their peers out of fear and make it even more difficult to give voice to their own opinions. To be able to speak up for themselves to prove their innocence is instead a big, unachievable mountain to surpass.

Work Cited:

Melinda Plsastas & Eve Raimomn. *"Brutuality and brotherhood: James Baldwin and Prision Sexuality"* Johns Hopkins University Press, 2014 p.687-697

Oates,Joyce Carol.Rev.Of Beale Street Could Talk, James Baldwin.New York Times 1974, P.376

Baldwin, James. If Beale Street Could Talk. United Kingdom, Penguin Books Limited, 2001.

Elam, Michele. The Cambridge Companion to James Baldwin. New York: Cambridge University Press, 2015.

Kornegay Jr., EL, and Kornegay, E.. A Queering of Black Theology: James Baldwin's Blues Project and Gospel Prose. United Kingdom, Palgrave Macmillan, 2013.

Leeming, David. James Baldwin: A Biography. United States, Arcade Publishing, 2015.

Taylor, Douglas. "Three Lean Cats in a Hall of Mirrors: James Baldwin, Norman Mailer, and Eldridge Cleaver on Race and Masculinity." Texas Studies in Literature & Language, 2010

Trudier, Harris. “The Eye as Weapon in If Beale Street Could Talk”, , Vol. 5, No. 3, MELUS 1978, pp. 54-66

Ravi Kachaap
Reserch Scholar
University Department of English
Ranchi University, Ranchi

Opposite , DC Office
Near Petrol Pump
Mukesh Road Khunti
C/o Jaipal Kachhap
Jharkhand
Pin 835210

28

Critical Analysis of An Essay of Dramatic Poesy Summary by John Dryden

Sahil Patil

Abstract:-

John Dryden published a critique titled "An Essay of Dramatic Poesy" in 1668. It discusses drama and the defence of English theatre against the French critics' neoclassical guidelines. Three of Dryden's pals and he had a passionate conversation about various facets of dramatic poetry. Four characters which are Eugenius, who stands in for Dryden himself, Crites, who represents Sir Robert Howard, Lisideius, who represents Sir Charles Sedley and Neander, who represents Dryden's friend Sir William Davenant converse in the essay. Each character shares their perspectives on dramatic poetry and gets into a heated discussion, showing the popular viewpoints at the time.Through these characters, Dryden examines several important dramatic topics and contentions. He argues that the English stage allows for more variation and originality, unlike the French neoclassicists' rigorous commitment to the unities of time, place, and action. Additionally, Dryden discusses the usage of verse as opposed to prose in plays, stating that he prefers verse as a more refined and appropriate mode for dramatic expression.Dryden explores the advantages of tragicomedy over pure tragedy, a genre that contains elements of both. He assesses the qualities and shortcomings of historical playwrights' works, especially Shakespeare, and contrasts them with modern French playwrights like Pierre Corneille and Jean Racine. In his essay, Dryden argues for a more lenient view of theatrical norms and praises the brilliance of English playwrights in proving the legitimacy and worth of English drama. An important piece of English literary criticism, "An Essay of Dramatic Poesy," influenced the understanding and growth of dramatic art throughout the Restoration era.

Introduction

To fully appreciate and comprehend "An Essay of Dramatic Poesy," it is crucial to grasp the academic environment and social setting in which John Dryden wrote this important piece. The essay was composed in England between 1660 and 1688, during the Restoration era. Following a time of political unrest and Oliver Cromwell's puritanical administration, the monarchy was restored during this century under the leadership of King Charles II. Dramatic production flourished after the monarchy was restored due to a resurgence in interest in the arts and literature.French neoclassical ideas significantly impacted literary and artistic circles during this period. The gold standard for French play originated from the works of Pierre Corneille and Jean Racine. The rigid rules, such as the unities of time, location, and action, as outlined by the ancient Greek philosopher Aristotle, were highlighted by French critics. These guidelines sought to guarantee a play's reasonability, decency, and cohesion. English play, particularly William Shakespeare's works, adopted a more adaptable and innovative approach than the French neoclassical style. Shakespeare's plays frequently combined tragic and humorous themes, alternated between poetry and prose, and were set in various places and eras. These traits, however, ran counter to the neoclassical principles promoted by French critics.

Views about Dramatic Poetry

John Dryden offers several significant ideas and justifications that help to build his viewpoint on dramatic poetry in "An Essay of Dramatic Poesy." His defence of English play against the stringent neoclassical guidelines promoted by French critics can be seen in these themes and arguments. Following are some of Dryden's primary points and justifications:

1. Diversity and Liberty

According to Dryden, English play offers more diversity and freedom than French neoclassicism, which adheres to strict guidelines. He claims that a wide range of genres, such as tragedy, comedy, tragicomedy, and masque, are represented on the English stage, giving audiences a more varied and enjoyable experience.

2. Unity of Time, Place, and Action

Following the neoclassical tradition, Dryden debates the unities of time, place, and action. Although he acknowledges their significance, he critiques their rigorous adherence, contending that it constricts a play's potential for creativity and scope. According to Dryden, dramatic works should span a wider period and occur in various settings as long as they still preserve a strong narrative.

3. Verse Vs. Prose

Dryden discusses the employment of verse and prose in dramatic poetry. He contends that the grandeur and high emotions necessary for tragedy are better served by the verse's elevated vocabulary and rhythmic features. However, he also appreciates how well prose, particularly in comedy, can capture human life's real and ordinary features. In his balanced

approach, Dryden suggests that verse and prose can coexist and both meet the demands of the drama.

4. Tragicomedy

Dryden likes the tragicomedy genre, which blends aspects of comedy and tragedy. He thinks that tragicomedy balances the sad and the humorous, enabling a more interesting and accurate depiction of human existence. According to Dryden, a pure tragedy can be overwhelming and lack the diversity and depth seen in a sad comedy.

5. Evaluation of Shakespeare

Shakespeare's works are evaluated severely by Dryden, regarded as the greatest dramatist in English history. Shakespeare's brilliance and dramatic impact are acknowledged, but Dryden also identifies Shakespeare's shortcomings. He criticizes Shakespeare for ignoring the unities and using too much wordplay. However, Dryden recognizes Shakespeare's works' emotional resonance and applicability to all cultures, making him an important figure in the evolution of English play.

These topics and arguments reveal Dryden's viewpoint on dramatic poetry as he supports a more adaptable and creative approach to theatrical norms while defending the virtues of English play. To create the foundation for a distinctive English dramatic tradition, Dryden tries to prove English theater's legitimacy and artistic value through his essay.

Characters and Their Views

In his poem "An Essay of Dramatic Poesy," John Dryden creates an imaginary conversation between four individuals, each representing a distinct viewpoint on dramatic poetry. These characters get into a heated argument, exhibiting differing viewpoints on numerous theatre-related topics. The opinions of the four critics are listed below:

1. Eugenius

Eugenius serves as the essay's main voice and reflects Dryden personally. He makes an argument in favour of English drama's creative freedom. Eugenius argues for the English stage in opposition to the rigid French critics' neoclassical guidelines. He supports the notion that English drama offers a greater range of genres, including tragedy, comedy, and tragicomedy, by highlighting its diversity and freedom. Eugenius advocates the idea that English theatre can create compelling and potent works.

2. Crites

The character Crites represents Sir Robert Howard, a writer, and critic of the period. Crites adopts a more cautious attitude about English drama's inadequacies than the French neoclassical tradition. He contends that the French theatre represents a more sophisticated and structured approach to dramatic poetry due to its devotion to the unities and emphasis on logic. Although Crites recognizes the shortcomings of English plays, such as their loose adherence to the unities, he also sees room for growth.

3. Lisideius

The writer and poet Sir Charles Sedley is represented by Lisideius. Lisideius extols the rigid neoclassical guidelines and defends French play. He contends that the French theater corresponds to Aristotle's ideas and is the pinnacle of reason and beauty, especially in the works of Pierre Corneille and Jean Racine. According to Lisideius, English plays need more consistency and unity, while the French tradition offers a more disciplined and sophisticated method of creating dramatic art

4. Neander

Neander depicts Sir William Davenant, a poet, dramatist, and theatre director who was Dryden's acquaintance. Neander adopts a more impartial viewpoint, attempting to reconcile the French and English cultural traditions. He recognizes the strengths, valuing the variety and freedom of English play and the structure and coherence of French theatre. Neander contends that more strong and potent dramatic poetry can be produced by combining the best elements of the two traditions.

Dryden gives a variety of opinions on dramatic poetry through the discussion between these four critics, allowing readers to interact with various viewpoints and arguments. This tool thoroughly examines the prevailing viewpoints and arguments on theatre throughout the Restoration era.

Comparing French and English Traditions

John Dryden vehemently defends English play against the rigid neoclassical standards in "An Essay of Dramatic Poesy," praising the advantages of the English theatrical tradition. He contrasts and compares the differences between English and French drama, emphasizing the distinct features and advantages of each. The following are some crucial arguments in favour of English play and a comparison to the French tradition:

1. Freedom and Variety

In contrast to the French neoclassical tradition, English play, according to Dryden, offers more freedom and diversity. He applauds the English theatre for featuring a variety of genres, such as tragedy, comedy, tragicomedy, and masque. According to Dryden, this diversity offers spectators a richer tapestry of human emotions and experiences, making for a more interesting and enjoyable encounter.

2. Creative Liberties

Dryden underlines the artistic freedom that English playwrights are afforded. He laments the rigid devotion to the unities of time, location, and action in French theatre, contending that it constricts the play's potential for artistic expression. The ability to cover more time and places and include subplots afforded to English writers, on the other hand, allows for a more expansive and lifelike depiction of the human condition.

3. Naturalness and Realism

Dryden lauds English theatre for its portrayal of persons and circumstances that are both natural and realistic. He contends that English playwrights more faithfully capture the complexity of human nature and the subtleties of daily existence. He contends that the French neoclassical tradition, in contrast, tends to sacrifice some of the real human experiences in favour of idealized characters and structured language.

4. Emotional Impact

According to Dryden, English theatre may elicit a greater spectrum of emotions in viewers because it combines tragedy and humor. He makes the case that using comic elements in tragic plays provides solace and heightens the impact of the intense and serious periods. In Dryden's opinion, this blending of feelings creates a more powerful and impactful theatrical performance.

5. Shakespearean Genius

Dryden promotes William Shakespeare as the pinnacle of English dramatic genius while defending his works. Shakespeare broke some neoclassical conventions, including the unities, according to him. However, he still believes his plays display unmatched emotional depth, rich character development, and profound insight into human nature. According to Dryden, Shakespeare stands out from both English and French writers because of his capacity to elicit a wide range of emotions and explore various themes.

Dryden defends the English theatrical tradition through these contrasts, praising its spontaneity, diversity, authenticity, and emotional power. By proving that English play has distinctive traits that compete with the rigid neoclassical ideals promoted by French critics, he aims to prove English drama's legitimacy and artistic value.

Dryden's Views on Aristotelian Unities

John Dryden discusses the Aristotelian unities of time, location, and action in "An Essay of Dramatic Poesy." These unities were first put out by the neoclassical drama's guiding principle, the ancient Greek philosopher Aristotle. Dryden discusses these unities and challenges their rigorous use in English theater. The following are Dryden's main ideas on the connection between time, place, and action:

1. Unity of Time

According to this theory, a play's events should occur over a day, preferably. This rule seeks to keep the dramatic story feeling plausible and cohesive. However, according to Dryden, rigid adherence to this unity can be constrictive and reduce a play's creative potential. He contends that while a condensed time frame may be useful in some circumstances, it is only sometimes necessary for all theatrical works. In Dryden's view, time may be represented more flexibly, and a longer time frame can add to the story's complexity and depth.

2. Unity of Place

According to this idea, a play's action should be confined to a single setting, usually a single room or a small geographic region. This coherence gives the play's events a clear and focused emphasis. Dryden recognizes the importance of this oneness in fostering a feeling of closeness and immediateness. However, he challenges the necessity of rigid devotion to a single place. He makes the case that dramatic action can be improved by utilizing multiple settings and broadening the play's scope.

3. Unity of Action

According to the unity of action theory, a play should have a cohesive narrative focusing on the primary conflict or plotline. Dryden acknowledges the value of a plot that is well-organized and cohesive. He disagrees that a play must not include subplots or digressions, as he thinks these elements can enrich and deepen the theatrical experience. According to Dryden, a play can be more interesting and complicated if it takes a more all-encompassing approach to unity of action and successfully weaves together multiple

plotlines.

1. Arihant UGC net/jrf/set English paper 2 book by Mridula Sharma, Ajeet Singh Jadaun, Tanveen Kaur, Dr. Chakreswari Dixit, Chhavi Kumar, Arihant Publication Limited, Edition 2022, Chapter 18,

2.https://en.wikipedia.org/wiki/Essay_of_Dramatick_Poesie

3.https://augustinestenza.wordpress.com/2019/08/01/an-essay-on-dramatic-poesy-summary/

4. https://www.englishliterature.info/2022/06/analysis-essay-of-dramatic-poesy.html

· Name Sahil Patil
· Father's Name Arvind Kumar Patil
· Address Vidya Nagar, Mehem Road, Dr. Kajal wali gali near Ravinder Shop, Bhiwani, Haryana
· Mob No. 8901027630
Pin Code 127021

29

ORGANIZATIONAL BEHAVIOR: STRUCTURE AND DESIGN

Ajay Kumar

Abstract:-

This article has defined the meaning and definition of organizational structure and design. What are the major elements that need to be considered while designing an organizational structure, the various forms of organizational structure, the merits and demerits of organizational structure, their suitability for different organization system, to analyze the formal andinformal organization structure?What a good organization achieves, and how many types of organization structure.

Introduction:-

Organizational behavior is the study of how individuals and groups interact within an organization, how these interactions affect an organizations performance towards its goals, the field examines the impact of various factors on behavior within an organization. The focus of organizational behavior tends to enter around employee productivity, the four aspects of organizational behavior are people, structure, technology and the external environment, understanding how these aspects interact with another can assist an organization in improving its performance ,improvement can be made both individually and collectively, while internal variables such as organizations structure and recruiting process can be easily controlled, it may still be difficult for the organization to respond to external influences and changes in the economic climate.

Definition of Organizational Structure:-

An organizational structure defines the basic functional logic of an organization. It defines how an organizations strategy and scope are translated into different activities to be performed by different units, how those units are linked and shaped to be achieve a common goal.

Definition of Organizational Design:-

The term "organizational design" is broader than organizational structure, even though an overall organizational design would be incomplete without the elements of a structure as defined above. Organizational design are typically deeper in scope and provide more detail than structure, among other things design should comprise a perspective on process on practice and on performativity within the organization. For example- whereas an organizational structure would merely define the scope and activities of certain teams, and how they are expected to collaborate with other teams, an elaborated organization design would define how teams are setup and led in an organization.

Benefits of Organization Structure:-

Following are the major benefits of organizational structure:

1) It helps each member of the organization to know their roles and how it relates to other roles.

2) It helps by grouping activities and people, the organizational structure facilitates the communication between people and establishes the pattern of communication.

3) The organizational structure defines the extent of decision –making and also defines who makes it.

4) A good organizational structure often outlines employee takes and which manager is responsible for overseeing each employee.

5) When a company using a well-defined organization structure should be able to spend more time focusing on customer service rather than creating operational issues, company may also focus on increasing sales, revenue and profits from business operations by meeting consumer needs and wants.

6) A sound organizational structure provides the framework within a business functions and it facilitates the growth of the enterprise by increasing its capacity to handle an increased level activities.

7) A sound organizational structure is adoptable to changes in technology. It can quickly adopt itself to changes in the environments.

Impact of A Poor Organization Structure:-

Following are the main impact of a poor organization structure:

1) Failure to plan exactly: organizations fail to plan toward a future which is very different from the past or present. Another failure in planning involves modifying the structure around people take full advantages of employee strengths and weakness.

2) Poor communication: a poor organization structure can lead to miscommunication because people might not be sure who needs information or where to send important messages.

3) Lack of strategic management: to maximize your growth potential, you will need to make plans for the future that create opportunities, rather than simple wait for new business. Without an organizational structure that puts key executives or employees together on a regular basis, it will be difficult to create effective long-term strategies. Strategic management includes creating growth through objectives such as introducing new products, using new distribution channels,

expanding geographically or going after a new target market these strategies often require input from your marketing, accounting,information technology, and production and sales managers.

4) Lower productivity: when your organization structure is poor, you can miss opportunities allow problems to continue and reduce employee morale

5) Harmed company: in addition to external frustration you can experience with a poor organizational structure, you can create problems for your customer when they don't get timely answer to their questions, receive poor customer service or have to wait longer than normal for delivery of products. When this happens you might loss customers loss references and the ability to attract new customers and reduce revenues are enough to damage your business.

6) Slow decision making: in a poor organization structure decision making is usually slower, because responsibility and authority are concentrated in a few people at the top.

Key Elements of Organization Structure:-

There are six key elements of organizational structure:

1) Work specialization: work specialization refers to how operations are divided into separate roles. Work specialization not only increases efficiency and production but it also increased ennui, weariness and stress.

2) Departmentalization: departmentalization refers to the process by which jobs are grouped together, this can be done by function, product, geography, process or customer. Departmentalization divides task into categories based on their function such as engineering, accounting and human resource etc.

3) Chain of command: the chain of command is the unbroken line of authority that extends from the top of the organization to the lowest echelon and clarifies who reports to whom the right of a boss to issue orders and expect them to be followed is referred to as authority.

4) Span of control: the span of control refers to the number of employees that can be managed by one superior manager. A narrow span of control fasters a more intimate and hands on work environment as a manager only controls a small number of employees under one manager, assuming that daily tasks and processes are clearly defined, the optimal control span will vary depending on the situation.

5) Centralization/decentralization: centralization is that condition wherein much of the decision making authority is retained at the top of the managerial pecking order, and decentralization is that condition wherein much of the decision making authority is pushed downward to the lower management levels. Top management makes crucial decisions, in a centralized structure with little or no involvement from lower level employees.

6) Formalization: formalization aids the creation of processes, relationships and operational procedures, rules and duties for individual employees, units groups, teams and the company as a whole.

Types of Organizational Structure:-

There are two types of organizational structure, formal and informal organization structure:

1. Formal Organization Structure:-

Formal organization structure is that type of organization structure where the authority and responsibility are well defined. The organization structure has a defined delegation of authority, roles and responsibilities for the member's. Formal organization structure is created by the management with the objective of attaining the organizational goals.

There are different type of formal organization based on their structure, which are described as follows.

1) Line organization: line organization is a simplest and oldest organization structure. It is also known as military or departmental type of organization, in this type of organization the authority is well defined and it follows vertically from the top to pecking order level to the managerial level and subordinates at the bottom and continues further to the workers till the end. There is a clear division of authority and responsibilities in the line organization structure.

2) Line and staff organization:it is the newest version of line organization, in line and staff organization the functional specialist are added in line, the staff are assisting the line members in achieving the target effectively.

3) Functional organization: the functional organization is a midway between the line and staff organization structure. It's a means of putting specialists to top positions throughout the enterprise, under this authority system various activities of enterprise are classified according to certain functions like production, marketing, finance, personal etc.

4) Project organization: it is a temporary form of organization structure that is formed to manage projects for a specific period of time, the form of organization has specialists from different departments who are brought together for developing a new product.

5) Matrix organization:this structure is a modern form and mostly used in organizations where there is a high degree of specialization and special projects are underway most of the time. This structure facilitates community among various specialists by identifying employees with the required skills and bringing them to work together to achieve on time

completion of tasks, it is a structure that creates dual lines of authority and combines functional and product departmentalization.

2. Informal Organization Structure:-

That are those type of organizations which do not have a defined hierarchy of authority and responsibility, in such organizations, the relationship between employees is formed based on common interests, performances and prejudices. There are three types of organization structure according to informal organization structure.

1) Vertical organization: in the vertical organization structure all the authority and responsibility provided by top to bottom of the level, a pyramid like top-down management structure, these organizations have clearly defined roles with the highest level of leadership at the top followed by middle management then regular employees.

2) Horizontal organization: a horizontal organization structure is one that consists of few hierarchical levels, these are also called "flat" structures, and such structures often rely on the use of cross functional teams.

3) Mixed organization: a mixed organization structure has multiple lines of authority with some employees reporting to at least two managers. There are functional managers who oversee departments such as engineering and marketing, and there are project managers, who oversee employees who work on specific project.

Major Findings of the Study:-

Following are the major findings of the study:

1) The meaning and definition of organizational structure and design.

2) The key elements that need to be considered while designing an organizational structure.

3) The different forms of the organizational structure.

4) The benefits of organization structure.

5) The impact of a poor organization structure.

Reference:-

1) Shuchi Sharma, organizational Behavior, Tata McGraw Hill Education Private Limited New Delhi, Page 451-476.

2) Moorhead Griffin, Introduction To Organizational Behavior, Cengage Learning India Private Limited, Add. 418 F.I.E. Patparganj New Delhi 110092, Second Indian Reprint 2010, Page 359-382.

3) Stephen P. Robbins, Timothy A. Judge, Neharika Vohra, Organizational Behavior (Fifteenth Edition), Pearson, Add. 7th Floor Knowledge Boulevard Sector 62 Noida 201309, Page 515-548.

4) John W. Newstrom, Organizational Behavior (Human Behavior at Work) Twelfth Edition 2007, McGraw Hill Education India Private Limited Chennai, Page 380-402.

5) L.M. Prasad, Organizational Behavior, Sultan Chand & Sons Educational Publishers 23 Durgaganj New Delhi 110002, First Edition 1984 Reprint 2012,2013,2014,2015, Page 527-592.

6) Concise Dictionary Of Commerce, B&S Publishers, Edition-2013, Page 293.

Name: **Ajay Kumar**

Address: Village&Post – Lauwar, Patti. District – Pratapgarh (U.P.) 230134.

Mobile No.: 91-8765901355.

Email:vermaajay102000@gmail.com

30

Challenges and Sustainability: A Study of Solid Waste Management in Kaithal City

Dr. Sudhir Malik, Sanket Mitharwal

Abstract:-

The process of change can be gradual or sudden, influenced by various factors such as technological advancements, political movements, natural disasters, cultural shifts, and economic conditions. The desire for progress and improvement has led to significant changes in human society, from the agricultural revolution to the industrial revolution, and from the civil rights movement to the digital age. However, change is not always easy and can often lead to resistance and conflict. Many people are comfortable with the status quo and fear the unknown. This can lead to opposition to reform and progress, which can be a significant obstacle to change. Despite these challenges, the human drive for progress has continued throughout history, leading to significant advancements in technology, medicine, science, and social structures. The dialectics between continuity and change have shaped human society and will continue to do so in the future. It is up to us to embrace change, learn from the past, and create a better future for ourselves and future generations. The results of the survey were then mapped using Arc GIS, a geographic information system, to create a visual representation of the data. This helped to identify the spatial patterns and distribution of the issues within the community. By examining the maps, it was possible to identify areas that were most in need of intervention and prioritize resources accordingly.

Keywords: Natural disasters, Industrial revolution, Arc GIS, Community, Society

Introduction:

Solid waste management is a critical issue facing many cities around the world today. It refers to the collection, transportation, treatment, and disposal of waste generated by households, businesses, and other institutions in the city. The challenges to sustainable city in relation to solid waste management include:

Growing population: As cities grow, so does the amount of waste generated. This puts a strain on the existing waste management systems and infrastructure, leading to inadequate waste collection and disposal.

Lack of infrastructure: Many cities in developing countries lack proper infrastructure for waste management. This leads to poor waste collection and disposal, resulting in environmental pollution, health hazards, and degradation of the city's aesthetic value.

Inefficient waste collection: Inefficient waste collection systems, including irregular collection schedules and inadequate equipment, can lead to overflowing waste bins and piles of garbage on the streets. This can pose a health hazard and attract pests and rodents.

Inadequate funding: Waste management requires significant financial resources to establish and maintain proper infrastructure and equipment. However, many cities lack the necessary funding for waste management, leading to inadequate waste collection and disposal.

Poor public awareness: Lack of public awareness about the importance of proper waste disposal practices can lead to improper waste disposal, which can cause environmental pollution and health hazards.

To achieve sustainable city, there is a need for a holistic approach to solid waste management that involves all stakeholders, including government, private sector, and the public. This approach should focus on waste reduction, reuse, and recycling, and the establishment of proper waste collection and disposal systems. Public awareness campaigns should also be conducted to educate the public on the importance of proper waste disposal practices.

Study Area : Kaithal city is somewhat compact shaped having a geographical area of 104.30 sq. km. It lies between 29°30' 00" North to 30°11'19" North and 76°09'20" East to 76°41'19" East. Kaithal has a humid subtropical, dry winter climate. The warmest month with the highest average high temperature is June 42.5°C The coldest month, with the lowest average low temperature of 7.8° C is January. Kaithal typically receives about 18.31 millimeters (0.72 inches) of precipitation and has 22.81 rainy days annually.

Generally, the slope of the city is from northeast to southwest, the direction in which most of the water bodies of the area flow down. It is a gently sloping plain area however; the region can be divided into three physiographic divisions on the basis of minor variations- Ghaggar Flood Plain, Bet Kaithal, and Kaithal Plain. Ghaggar Flood Plain covers the northern and northwestern parts of Guhla tahsil. The flood plain is gently sloping towards the southwest in which direction the Ghaggar river flows. The soils are river-borne sand soft loam and silty clay. The region is fertile and suitable for producing a variety of crops. Bet Kaithal lies to the south of the Ghaggar Flood Plain extending over the southern part of the Guhla tahsil. It is drained by the Saraswati River. Loam types of soils are found in the region. It is a Bhangar area. It contains carbonate of lime

at very deep layers, usually in the form of nodules called kankar. The soil is granular and has a low water holding capacity.

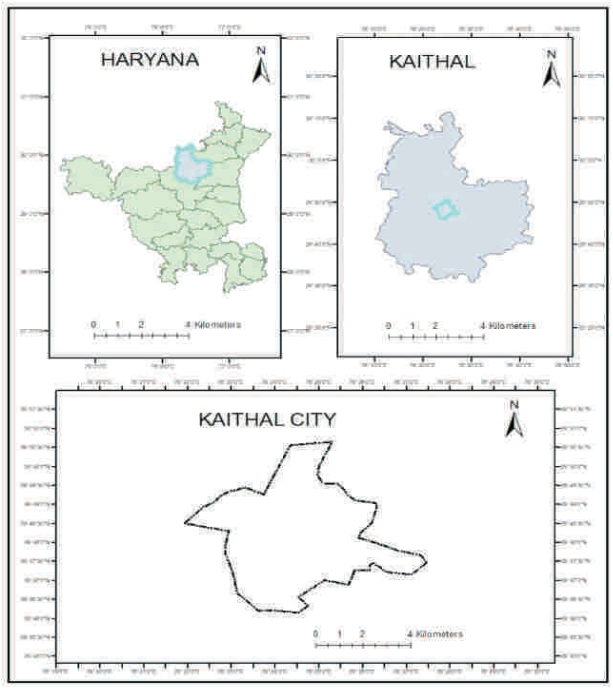

GIS

Objectives:

(i) To examine the existing waste management system in the study area.

(ii) To analyze the impacts of waste generation and management in the study area.

(iii) To find the major sources of solid waste in the study area.

(iv) To understand the awareness level of the residence of waste management.

Sources of data and methodology:

The present study will be used data and information such as reports documents as well as secondary data the major secondary sources for secondary data are given in the following points.

(i) District census book

(ii) Municipal corporation office

(iii) Various reports newspaper articles government policy would also be used.

The qualitative method will be used to gather an in-depth understanding of the experiences, perceptions, and opinions of the participants regarding the phenomenon under study. The semi-structured interview will be conducted with a sample of the population to explore their thoughts and experiences in detail. The interview questions will be designed to elicit open-ended responses that will allow the participants to express their views freely. The interviews will be audio-recorded and transcribed verbatim for analysis.

On the other hand, quantitative method will be employed to gather numerical data that can be analyzed using statistical tools. The questionnaire will be used to collect data from a larger sample size. The questionnaire will be designed to gather information on variables that can be measured quantitatively, such as demographic information, attitudes, beliefs, and behaviors. The data collected through the questionnaire will be analyzed using appropriate statistical methods.

The combination of these two methods will provide a comprehensive understanding of the phenomenon under study. The qualitative data will provide an in-depth understanding of the experiences and perceptions of the participants, while the quantitative data will provide numerical information that can be analyzed statistically to test hypotheses and draw conclusions. The study will also use triangulation to compare and contrast the findings from the two methods to ensure the validity and reliability of the results. The present study will utilize both qualitative and quantitative methods to achieve the research goal and objective. The semi-structured interview and questionnaire will be the primary data collection tools to gather data from a sample of the population. The combination of these two methods will provide a comprehensive understanding of the phenomenon under study and ensure the validity and reliability of the results.

In addition, the study will use content analysis as a primary method, analyzing all significant periodicals, newspapers, and TV news sources relevant to the subject and study area. Focused Group Discussion will also be employed as a methodological tool for the study. There will be a transect walk with PMC trash collectors. The study will make use of the important statistical tools in terms of the quantitative methodologies. Arc GIS software will be used to analyze the trends and patterns.The statistical techniques will be performed using IBM SPSS 10.0.

Table 1 : Solid Waste Generation Sources in Study Area

Sr.no.	Sources of Waste	Quantity (in tons)	Percentage
1	Commercial, Hospital,Industrial	52	37.81
2	Residential	41	29.82
3	Markets	17	12.36
4	Street Sweeping and Construction	9	06.54
5	Hotels	7	05.10
6	Garden Waste	4	2.91
7	Institution	1.5	1.10
8	Other Waste	6	04.36
9	Total	137.5	100

Sources: Municipal Corporation Office Kaithal 2021

According to the master plan for managing solid waste in the Kaithal municipal area, it has been calculated that on average 137.5 tons of solid trash are produced there each day, which is about equivalent to 358 grams of waste produced daily per person. Although there are many different causes of garbage generation in the Kaithal municipal area, industrial units account for the lion's share of the area's solid waste because of the city's dense concentration of industrial facilities. Table 1 provides a summary of the amount of garbage produced by the various activities and services provided in the city. The information shows that commercial, industrial, and medical facilities make up up to 37.81 percent of the waste generated within the municipal limits.The residential units come in second, making about 29.82 percent of the garbage produced. In addition, markets, particularly those that sell vegetables, fruits, and meat, are responsible for about 12.36 percent of the municipality's daily trash production. Construction and street sweeping, hotels, institutions, and garden garbage are additional sources of waste produced in the municipal area. Together, these sources account for 20.01 percent of the daily average amount of rubbish produced within the municipal boundaries of Kaithal city.

It is important to take a moment to consider the main purposes that the city serves, especially in light of the trash produced by various land use activities in the municipal territory of Kaithal. Manufacturing industries make up the majority of the land use in the Kaithal area, second only to land used for agriculture in terms of economic value. As shown in Table 2, residential areas make up 54.10 percent of the town's total geographic area, followed by industrial areas, which make up 21.4 percent of the town's total land use. In addition to the aforementioned, land has also been used for various purposes. Roughly 12.68 percent of the land area is made up of open areas. Only 3.87 percent of the town's total geographic area is used for agriculture, which is mostly focused in the outlying districts of the town. Agriculture makes up a very small portion of the town's total land usage. This is followed by Sector-29, HUDA, P-II in the same town, which has 413 units functioning at the moment.According to the Ministry of MSME's 2016 publication of industrial statistics, the town has a total of 3300 industrial units, of which 2280 are registered industrial units. The town is home to many micro and small businesses that produce items like agro-based and cotton textiles, woollen, silk, and artificial thread, as well as ready-made clothing, paper and paper products, leather-based goods, chemical-based goods, engineering goods, electrical machinery, and transport equipment. The two most common units among them are textiles made of cotton and wool. On the other hand, the majority of the garbage produced in the town is produced by a few large-scale industries. According to Alagh (2013), the Indian cities of Haryana and the National Capital Region are home to Panipat, a city known for its pickles and handloom industries. The city of Kaithal also houses a number of heavy industries, such as an Indian Oil Corporation refinery, a National Thermal Power Corporation power plant, and a National Fertilizers Limited factory.

In light of this, solid waste management has recently become a significant environmental concern in the municipality. Numerous instances of rubbish dumping have been reported in and near the industrial districts of Panipat's municipal territory. The truth is that, according to Lal (2020), "all solid waste from industries as well as garbage was dumped on the roadside in an extended area near Nimbri village." The solid trash that is gathered in Sector 25 of the town is dumped here in the village for further processing. In reality, Nimbri Village's neighboring residential neighborhoods have also seen rubbish being dumped and disposed of close to their properties.This not only degrades the appearance of the surrounding area but also pollutes the ecosystem. This is only a temporary arrangement with the landowner, and the waste dumping needs to stop once it is full, according to the Master Plan for Solid Waste Management in Kaithal (2010).

Table 2: Existing Land use Municipal Corporation in Kaithal

Sr.No.	Classification	Area (Hectares)	Percentage
1	Residential	1075	54.10
2	Industrial	427	21.40
3	Open Space	252	12.68
4	Public and semi public	95	4.78
5	Agricultural Zone	77	3.87
6	Transport and Communication	33	1.67
7	Commercial	28	1.41
8	Public Utility	Nil	-
9	Special Zone	Nil	-
10	Total	1987	100

Source: Municipal Corporation Office Kaithal 2021

According to Singh (2020), "increasing amount of plastic waste has become a significant challenge and is a major contributor to environmental degradation... India generates 26,000 tonnes of plastic waste per day (TPD), or 9.4 million tonnes annually." Several research and environmental reports have revealed that the residential areas are frequently clogged with plastics, which also increases the frequency of urban floods even during mild rains. In reality, the problem of plastic trash is yet another significant concern in the town. In addition to the registered industrial units, a lot of illicit businesses also run in this area, and the high industrial density is one of the main factors contributing to the City's alarmingly high pollution level.

Based on population projections, it is clear that the amount of garbage produced over the next few years is expected to double. In order to secure the sustainability of the solid waste management system in the city, a number of recommendations were made and submitted by the solid waste management plan. However, it has also been deduced from the analysis that there are some significant flaws in the system, particularly in relation to a lack of waste source segregation and door to door collection with full area coverage. Additionally, the institutional structure must be strengthened in addition to the locals' voluntary participation. Such a strategy can significantly increase the viability and sustainability of the waste management system in the city in the long run.

References:

1 Ahmed, R. J. (2016). Status and Challenges of Municipal Solid Waste Management in
India: A Review. Cogent Environment Science.

2. Alagh, L. (2013). City Sanitation Plan for Kaithal City. IIT Roorkee.

3. Ansell, C., & Gash, A. (2008). Collaborative governance in theory and practice. Journal of Public Administration theory and practice, 18.

4. Balasubramanian, M., & Anderson, B. (2010). Learning from Exnora Green Pammal's
Solid Waste Management Partnerships in Four Localities.

5. Banerjee, S. D. (2017). Scope of Private Participation in Municipal Solid Waste
Management: The Case of India. Urban India.

6. Bhattacharjee, A. (2019). Redevelopment of The Walled City of Delhi: An Assessment of the Planning Framework and Governance Challenges. Indian Journal of Landscape Systems and Ecological Studies, 42(2).

7. Ghimire, S. (2020). The Importance of Community Participation in Solid Waste Management. Asian Development Bank.

8. Gupta, N., & Gupta, R. (2015). Solid Waste Management and Sustainable Cities in India: A Case of Chandigarh. Environment and Urbanization, 573.

9. Karthykeyan: (2012). Public-Private Partnership in Urban Water Supply and Municipal
Solid Waste Management: Potential and Strategies.

10. Lal, B. (2020). Environment Pollution Control Authority (EPCA).

11. NCR Planning Board; Asian Development Bank. (2010). Master Plan for Solid Waste
Management in Panipat.

12. Planning Commission of India. (2014). Report of the Task Force on Waste to Energy.

Dr. Sudhir Malik
Professor
Department of Geography.
Baba Mastnath University, Rohtak

Sanket Mitharwal
Research scholar
Department of Geography
Baba Mastnath University, Rohtak

Rural Ponds Encountering a Complex Crisis - Examining the Situation in Sonipat District, Haryana

Vivek Malik, Dr. Sudhir Malik

Abstract:-

The most significant peril facing traditional rural ponds in Haryana can be attributed to shifting societal manners, values, ethics, and lifestyles, among other factors. A severe issue is the accumulation of sediment in the ponds, as rainwater carries soil into them, resulting in substantial siltation. Furthermore, villagers using the surrounding area for sun-drying cow dung cakes tend to overload the pond perimeters with cow dung, effectively turning these areas into dung repositories. This dung serves as a major source of water pollution, causing the pond water to turn murky and heavily laden with organic matter. Additionally, it leads to excessive eutrophication. The construction of major highways and connecting roads has led to the fragmentation and deterioration of village ponds. The occupation of the pond peripheries by lower-income sections of society for habitation poses a considerable threat to wetlands. A significant number of villagers exhibit a lack of interest in silted ponds that emit unpleasant odours and contain dark sludge, a situation observed in about 80% of cases. Neglecting the harvesting of dried silt during the summer for brickmaking has been detrimental, leading to the gradual transformation of ponds into flat expanses over successive decades. The water quality in all these ponds has deteriorated due to the constant infusion of rainwater laden with cow dung. Ponds have been excessively used for cattle bathing, the disposal of cow dung, and discarded vegetable waste, transforming them into repositories of filth, refuse, and rural dairy byproducts. The mainstream of village ponds has either disappeared or become heavily silted. The article underscores the global significance of this local crisis by discussing the arrival of winter migratory birds from distant places such as Russia, Siberia, China, and the Caspian region in East Asia to these deteriorating ponds in Haryana. This influx of migratory birds faces dire consequences due to the extinction and degradation of these wetlands. In essence, the article sheds light on how these rural ponds' endangerment carries far-reaching ecological and environmental implications, touching on global avian biodiversity.The article underscores the global significance of this local crisis by discussing the arrival of winter migratory birds from distant places such as Russia, Siberia, China, and the Caspian region in East Asia to these deteriorating ponds in Haryana. This influx of migratory birds faces dire consequences due to the extinction and degradation of these wetlands. In essence, the article sheds light on how these rural ponds' endangerment carries far-reaching ecological and environmental implications, touching on global avian biodiversity. The situation in Haryana serves as a microcosm of the larger global struggle to protect wetlands and natural ecosystems. The article underscores the urgent need for comprehensive conservation efforts, policy changes, and community engagement to address the multifaceted threats faced by rural ponds. It emphasizes the importance of raising awareness among the local population and fostering a sense of responsibility toward the preservation of these vital ecosystems.the article highlights the interconnectedness of local environmental issues with global biodiversity and ecological health. The plight of countryside ponds in Haryana should serve as a wake-up call, prompting concerted efforts to protect and rejuvenate these vital ecosystems, not only for the local communities but also for the sake of global avian diversity and the broader environmental balance.

Keywords: Siltation,Sediment,Dung Repositories, Odors, Birds, Biodiversity, Community Engagement.

Introduction:

Haryana, a state located in northern India, has experienced remarkable changes over the years. These changes are primarily attributed to a combination of factors, including the implementation of government policies aimed at agricultural modernization and economic development, an increased sense of awareness among the population regarding new opportunities and technologies, and the growing trend of outsourcing young talent to foreign countries for employment. Additionally, Haryana boasts a flourishing private education sector, with world-class professional colleges that cater to various fields of study.As the state undergoes this socio-economic transformation, its rural areas, which were once characterized by traditional agrarian practices and a close connection to the land, are now seeing a shift towards urbanization and industrialization. This transition has led to the rapid development of infrastructure across a wide spectrum, from transportation networks to communication systems and more.However, while these changes have brought about economic growth and improved living standards for many, they have also had some unintended consequences on the natural environment. The destruction of the balanced ecological landscape is one such consequence. It's evident that the pristine, age-old rural wetlands, which played a crucial role in the lives of villagers, are being adversely affected.

One poignant illustration of this environmental degradation is the decline of rural ponds. Historically, every village in Haryana used to have a cluster of 4-5 self-sustaining ponds. These ponds were nature's gift, efficiently collecting rainwater and serving as a vital resource for the community. During the dry months when water was scarce, from November to June, these ponds provided a lifeline. Pondsare the main source of water for drinking and bathing cattle, and they were teeming with life, hosting a variety of fauna and flora, from tortoises to waterfowl, aquatic plants to diatoms.Moreover, the summer season was the time when villagers would traditionally clean the ponds, removing silt to be used for brickmaking and reinforcing the thatched rooftops of their homes. This maintenance practice ensured that the ponds retained their depth and remained a consistent source of water for the community. However, these time-honoured practices have significantly waned.The observations made during studies on migratory birds in Haryana provided a sobering perspective on the state of these ponds. Ponds highlighted the critical need to address the rapid deterioration of these once-thriving natural water bodies, which were not only a source of livelihood but also an essential part of the cultural and ecological heritage of the region. The fate of Haryana's rural ponds is emblematic of the broader challenge faced by societies in balancing economic progress with environmental sustainability.

Literature Review:

The cumulative number of scientific studies on ponds in recent periods indicates the growing concern of the global public. A large number of studies areattentiveto the physicochemical characteristics (Yadav et al. 2016).

Despite the ecological and communitybenefits, the ponds were largely excepted from several international and national legislations and pledges targeting freshwater ecosystem protection and conservation (Hill et al. 2018).

The loss of ponds is mainly threatening the water and food safety of developing nations, where the freshwater bodies coverage is ≤ 1.4% of the land than developed countries with 3.5% (UNESCO 2018).

Apart from geomorphological processes, soil corrosion is largely governed by human-caused modifications in the catchment such as concrete drainage networks, deforestation, agriculture intensification, road construction, and uncontrolled grazing (Serrano and DeLorenzo 2008; Chen et al. 2019).

In India, the loss of 80,128 ponds/tanks (2006-2007) resulted in the loss of 1.95 million hectares of irrigation possible (Ministry of Jal Shakti, India (MOJS 2022).

Study Area:

The study area comprises Sonipat district which is one of the 22 districts of Haryana state. Sonipat district is lying in the east-central part of Haryana State near the National CapitalRegion (NCR), Delhi. It is geographically located between 28° 48′ 15″ North to 29° 17′ 10″North latitudes and 76° 28′ 40″ East to 77° 12′ 45″ East longitudes. It falls in the Survey ofIndia (SOI) Topo-sheets no. 53C, 53D, 53G and 53H. The district comprises 8 CD Blocks (communitydevelopment). Sonipat covers 5.11 per cent area of thestate. The district is surrounded by Panipat district in the north, Jind district in the west, and Rohtak district in the southwest direction. In its south direction, the National Capital Delhi, and Jhajjar district lie. It shares its eastern boundary with Uttar Pradesh in which Yamuna River also makes the State boundary (Administrative Atlas of Haryana, 2011). The headquarters of the district is in Sonipat City. The district is named after its administrative headquarters. The district headquarters, Sonipat is connected by metalled roads with important cities of the state and to the National Capital Delhi. It is also connected by a broad-gauge railway line with most parts of the country. The total area of the Sonipat district is 2,260 sq. km. The district has an average elevation of 224.15 meters (735.4 feet) above mean sea level. The Yamuna River runs along the eastern boundary of the district.Data of the selected pond is taken from the Haryana Pond Authority and the study is based on ponds having an area less than 0.5 acres. First of all an extensive Survey was done in the District by visiting each pond. And the photographs have been taken with the camera. In totality, the visits to the pond have been done two times before monsoon and after monsoon. In order to generate information on the ambient surroundings of village ponds, a very simple “questionnaire” was designed. Tree questionnaires for each pond had been filled.There are 16 Ponds in the whole district. All16questionnaires were filled with respect to each andeverypondspreadover eight blocks.Some of the points of the questionnaire were filled up self and others were filled in by interviewing the villagers.

Results And Discussions:

ItisapparentfromTable 1 that ponds acrossblocks,were visited acrossSonipatin June 2023 and September 2023 forrecordingmigratorybirdsandstudying threatstothe pond'spointofview.Thisstudyalso indicatesthatthe majorityofvillagepondsin Sonipat District arebeleagueredwiththreatstotheirvery existenceand are now trans formed into de graded mudtanks, eutrophied watersheets, flats, and cowdungand cakesseen in (Picture 1). It is evident from Table 1 that not even a single pond was

found with clean blue lilting waters. It is pertinent to mention that out of 16 villageponds,9ruralpondshavebeenused forWaste Water collection as seen in (Picture 2).It is apparent from Table 1 that the principal threat to the existence of village ponds in the Sonipat district is theuse of ponds as wastewater collecting bodies in the early times these ponds were filled with clean water and revita lisedground water aquifers but Nowadays days these ponds affect groundwateraquifer adversely with their wastewater.Practice of Sun Drying of cow dung and dumping of Waste in ponds. According to survey results 60%of ponds are encroached on by villagers for house-building Purposes and in some villages BPL (Below Poverty Line) plots have been allocated by gram Panchayats.

Picture. 1. *Cow dung on the periphery of ponds.*

Source: Field survey by Researcher

Picture. 2. *Dispose of Wastewater in Ponds.*

Source: Field survey by Researcher

There is a significant drop in the Percentage of migratory birds in these old small ponds due to Waste Water and Lack of Trees around the Boundaries of Ponds. Only 12% of ponds have more than 5 trees on their boundary (Gupta et al.2010 A) reported 63 species of wetland birds from Kaithal district in Haryana. At the same time, (Gupta and Kaushik 2010 B) recorded 66 species of Wet land birds from the Kurukshetra district. Similarly, (Gupta and Kaushik 2010 D)detected58speciesofwetlandbirdsfrom Yamuna nagar districtin Haryana (India).It is relevant to mention that, all these birds which are coming from across the Himalayas are facing adverse conditions in their winter sojourn in rural ponds in northern Haryana.

Winter migratory birds like Gadwall *Anas strepera*,Greylag Goose*Anseranser*,Mallard*A nas platyrhynchos*, Northern Shoveller*Anas clypeata*,NorthernPintail*Anas acuta*,Common Teal*Anas crecca*,Garganey*Anas querquedula*, Common Coot *Fulica atra*,Little Ringed Plover *Charadrius dubius*, Kentish Plover *Charadrius alexandrines*, Spotted Redshank *Tringaerythropus*,Common Red shank *Tringa tetanus*,Marsh Sand piper *Tringa stagnatilis*,Wood Sandpiper*Tringaglareola* and Pied Avocet *Recuriviros traavosetta* are normally seen in rural ponds in Haryana during the winter season each year. At the same period, birds like Painted Stork *Mycteria leucocephala*, White-necked Stork *Ciconia episcopus*, Common Pochard *Aythya ferina,* Tufted Pochard *Aythya fuligula,* Spotted Greenshank *Tringaguttifer*, Comb Duck *Sarkidiornis melanotos*, Black Ibis*Pseudibispapillosa*, Oriental WhiteI bis *Threskiornismelanocephalus,* Bar-headed Goose *Anser indicus*, and Eurasian Spoonbill *Platalealeucorodia* are also observed from rural ponds in Haryana. These wetland birds arecon fronting with adverse conditions in these traditional rural ponds in Haryana

Table 1.*The overall scenario prevalent in rural ponds in Sonipat District*

Sr. No.	Aspects of Village Ponds	Observations	Total no of Ponds	Percentage
1	Ponds Used for	Cattle Drinking	4	25%
		Aquaculture	1	6.25%
		Irrigation	2	12.5%
		Waste Water	9	56.25%
2	Present Condition of Ponds	Clean	0	0%
		Polluted	9	56.25%
		Dry	7	43.75%
3	Ponds in the Abadi Area	Yes	10	62.50%
		No	6	37.50%
4	Perennial / Seasonal	Perennial	16	100%
		Seasonal	0	0%
5	Depth of Ponds	3-4 ft.	3	18%
		5-6 ft.	9	56.25%
		7-8 ft.	2	12.5%
		Above 9 ft.	1	6.25%
6	Laundry	Yes	0	0%
		No	16	100%
7	Cattle Dung Cakes Preparation	Intense	8	50%
		Mediocre	6	37.50%
		Nominal	2	12.5%
8	Dumping of Garbage	Intense	9	56.25%
		Nominal	7	43.75%
9	Overall Condition of Maintenance	Nominal	2	12.5%
		Zero	14	87.5%
10	Distribution Due to Human Activity	Intense	12	75%
		Nominal	4	25%
11	Migratory Birds Presence	Yes	3	18.75%
		No	13	81.25%
12	Encroachment of Ponds	Yes	6	60%
		No	10	40%
13	Presence of More Than 5 Trees Around Pond	Yes	2	12.5%
		No	14	87.5%

Source: Data Calculated by Research Scholar Through

Questionnaires

This paper attempts to focus attention on the ongoing,althoughundeliberated, destruction and elimination of rural ponds in Sonipat District.Ononehand,wehaveaconventionlike RamsarConvention(1971)andontheother hand,wehaveasituationw here each and every Pond is facing grave multiple threats (Plate-1). We should have to call it"Spade-a-Spade".We should ensuresimilarity between what we "say" and what we "do". Ramsar Convention should notbethereforofficialJargons.Instead,it shouldpeepintothebadscenarioofbad wetlands,placebyplace,countryside,and continent-wise.Thecombinedeffectofour inadvertentbadactionsonourwetlandswillone dayturnWetlandsintopossessionofgood museums.Thesocietyatlargeisawakened by the urgent need to save wetlands. Schools, Colleges,andUniversities'syllabishouldinclude wetlandsinthe Syllabusto highlighttheirsignificance, importance,and utilityintheoverallfunctioningof human society.

Conclusion:-

ItisrecommendedthatPanchayatsbeissued expressOrderstoharnesseffortstorehabilitate theover-deterioratedpondsinSonipat District.The National Service Scheme (NSS) should singularly focus attention on village ponds to retrieve them asfaraspossible.MahatmaGandhiNational RuralEmploymentGraminRojgarYojna (MNREGA)shouldtargetthe redressalofvillage pondsthroughitshugefinancialmoney.Indian Government mustcooperatewithconcerned international quarters (Ramsar Convention+WetlandInternational)toevoke responseandhelpwhichislyingonourdoor onlyconsideringtheirconcernfor the rehabilitation of wetlands at the global levelthe conservation of rural ponds is not just a matter of preserving natural water bodies; it is a critical endeavour that impacts both the environment and human communities. These ponds have played an essential role in the lives of rural populations for generations, providing essential resources and maintaining ecological balance.As we witness the rapid transformation of rural landscapes and the disappearance of these ponds, it becomes increasingly clear that efforts to conserve them are of paramount importance. Rural ponds are not only sources of freshwater but also reservoirs of biodiversity, supporting a range of flora and fauna. They are ecosystems in their own right, hosting various species that rely on them for survival.Conservation initiatives should consider not only the ecological significance of these ponds but also their cultural and historical importance. These water bodies have been an essential part of local traditions, serving as gathering places, providing livelihood opportunities, and contributing to the unique identity of rural communities.To protect and preserve rural ponds, there is a need for a comprehensive approach that involves government policies, community engagement, and environmental stewardship. Encouraging sustainable practices that promote the maintenance and restoration of these ponds, as well as the responsible use of their resources, is crucial.

In an era of rapid urbanization and industrialization, it is vital that we recognize the value of these rural ponds and their irreplaceable role in maintaining the delicate balance between human development and environmental conservation. The conservation of rural ponds represents not only a commitment to safeguarding natural habitats but also a commitment to honouring the rich cultural and historical tapestry that they represent. It is a reminder that progress must be achieved harmoniously with nature to ensure a sustainable and resilient future for all.

References:

1. Gupta, R. C., Kaushik, T. K. &Kumar, S. (2010A). Evaluationoftheextentofwetlandbirdsin district Kaithal, Haryana, India. Journal of Applied and Natural Science, Vol.2(1), pp. 77-84.
2. Gupta,R. C. &Kaushik,T. K. (2010B). Computation ofwetlandbirdsinruralareasof Kurukshetra, Haryana, India. Journal of environmental conservation,Vol.11 (3), pp. 1-11.
3. Gupta, R. C. &Kaushik,T. K. (2010D). Determination ofspectrumofwintermigratorybirdsin Yamunanagar district in Haryana, India. Environment Conservation Journal, Vol. 11 (3), pp. 37-43.
4. DCOH. (2021). *Administrative Atlas of Haryana.* Director, Census of Haryana.
5. MOJS (2022).*Ministry of Jal Shakti, Department of Water Resources. River Development and Ganga Rejuvenation.*
6. UNESCO (2018). The United Nations World Water Development Report 2018: Nature-Based Solutions for Water.
7. Hill, M. J., Hassall. C. & Oertli, B. et al. (2018). New policy directions for global pond conservation.Conservation Letters, Vol. 11, pp. 1–8.
8. Yadav, A., Sahu, P. K.,Chakradhari, S. et al. (2016). Urban Pond water contamination in India. Journal of Environmental Protection, Vol. 7, pp. 52–59.

9. Serrano, L., De Lorenzo, M. E. (2008). Water quality and restoration in a coastal subdivision storm water pondJournal of Environmental Management, Vol. 88, pp. 43–52.
10.https://hpwwma.org.in/

Vivek Malik
Research Scholar
Department of Geography
Baba Mastnath University (Rohtak)
Vivekmalik0357@gmail.com

Dr. Sudhir Malik
Professor
Department of Geography
Baba Mastnath University (Rohtak)
Sudhirmalik@bmu.ac.in

32

Insights into Learning: Correlation with Psychology and Education

Dr. Reena Rai

Abstract:-

This paper highlights the dynamic interrelationship of psychology and education, highlighting the multifaceted processes of learning and development within educational settings. Drawing from the rich insights of educational psychology, the study explores various dimensions of learning, including cognitive, emotional, social and cultural aspects. By examining the interplay between psychological theories and educational practices, the paper provides valuable insights into effective teaching strategies, student motivation, assessment techniques, and support services. Through a comprehensive analysis of research findings and practical implications, this paper aims to deepen our understanding of how psychological insights can inform and enrich educational practices. Join us on a journey of discovery as we explore the fascinating world where psychology and education come together, leading to better learning experiences and better educational outcomes.

Key Words: Insights into Learning, Cognitive Processes, Interdisciplinary Approach, Best Practices

Introduction:

This paper summarizes how psychological insights intersect with educational practices to enhance learning experiences and outcomes.

"Insight into learning" refers to gaining a deeper understanding or valuable perspective on the learning process. These insights can come from a variety of sources, including research findings, practical experiences, and theoretical frameworks. These can cover a wide range of learning-related topics. Such as cognitive processes, motivation, instructional strategies, assessment techniques and influence of social and emotional factors.

Insights into learning can help teachers and learners alike make informed decisions, optimize teaching and learning practices, and enhance educational outcomes. By understanding how individuals learn and the factors that influence learning, teachers can tailor their approaches to better meet students' needs, promote engagement, and facilitate meaningful learning experiences. Similarly, learners can benefit from gaining insight into their own learning processes, identifying effective study strategies, and overcoming barriers to learning.

Overall, "insights into learning" include knowledge, approaches, and strategies that contribute to a deeper understanding of how learning occurs and how it can be effectively facilitated in educational contexts.

Correlate learning insights with psychology :

Correlating learning insights with psychology involves applying psychological theories, principles, and research findings to gain a deeper understanding of how individuals learn and develop within educational settings. Here are some ways to do this :

- **Understanding Cognitive Processes:**

Find out how insights from cognitive psychology can inform our understanding of memory, attention, problem-solving, and information processing during learning. For example, understanding how working memory limitations affect learning can help teachers design instructional materials that support effective information retention.

- **Motivation and Learning:**

To understand how motivation affects learning outcomes, examine motivational theories from psychology, such as self-determination theory or expectancy-value theory. Insights into motivational factors can help teachers design learning experiences that promote intrinsic motivation and engagement.

- **Social and Emotional Factors:**

Consider the influence of social and emotional factors on learning from insights in developmental psychology and social psychology. Understanding the role of peer interactions, teacher-student relationships, and emotional regulation can inform strategies for creating supportive learning environments.

- **Learning Styles and Individual Differences:**

Explore psychological research on learning styles, multiple intelligences, and individual differences to understand how learners differ in their preferences and strengths. Insight into these factors can help teachers differentiate instruction and tailor learning experiences to meet the needs of different learners.

- **Behavioral Principles in Instructional Design:**

Apply behavioral principles from behaviorism and operant conditioning to inform instructional design strategies. Insights into reinforcement, shaping, and extinction can guide the development of effective teaching methods and behavior management techniques.

- **Metacognition and Self-Regulated Learning:**

To understand how learners monitor and control their learning processes, consider insights from metacognition and self-regulated learning theories. Teachers can help students

develop metacognitive awareness and self-regulation skills to become more effective and autonomous learners.

- **Evaluation and Feedback:**

Use insights from educational psychology to inform assessment practices and provide effective feedback. Understanding the principles of formative assessment, formative feedback and assessment for learning can enhance the assessment process and promote learning.

- **Developmental Perspective**:

Explore developmental psychology principles to understand how learning changes at different stages of development. Insights into cognitive, social, and emotional development can inform age-appropriate teaching strategies and interventions.

By combining learning insights with psychology, teachers can gain a deeper understanding of the underlying processes and factors that influence learning outcomes. This interdisciplinary approach enables teachers to implement evidence-based practices and tailored instruction to meet the diverse needs of learners.

Correlate learning insights with education :

Correlating learning insights with education involves applying knowledge and understanding of how individuals learn to improve educational practices and outcomes. Here's how learning insights can be combined with education:

- **Designing Effective Instruction:**

Use insights into cognitive processes such as memory, attention, and problem-solving to design instructional materials and activities that optimize learning. Understanding how learners process and retain information can inform the development of engaging and effective teaching strategies.

- **Boosting Engagement and Motivation:**

Apply insights into motivation and engagement to create learning experiences that capture students' interest and foster intrinsic motivation. Incorporating elements of choice, relevance, and autonomy can increase student engagement and enhance learning outcomes.

- **Adapting to learning styles and preferences:**

Consider individual differences in learning styles, preferences, and strengths when designing instruction. Tailoring learning experiences to accommodate the needs of diverse learners can increase accessibility and effectiveness for all students.

- **Promoting Social and Emotional Learning:**

Integrate insights into social and emotional factors to create supportive learning environments that promote student well-being and social-emotional development. Emphasizing collaboration, empathy, and emotional regulation can enhance the overall learning experience.

- **Promoting metacognition and self-regulated learning:**

Encourage metacognitive awareness and self-regulated learning skills to empower students to monitor and control their own learning processes. Providing opportunities for reflection, goal-setting, and self-assessment can develop independent and lifelong learners.

- **Implementing Formative Assessment Practices:**

Use insights gained from formative assessment to provide timely feedback and support students' learning progress. Formative assessment strategies, such as peer assessment, self-assessment, and classroom discussion, can inform instructional decisions and guide future teaching activities.

- **Creating Inclusive Learning Environments:**

Apply insights in diversity and inclusion to create learning environments that celebrate and respect students' backgrounds, experiences, and identities. Incorporating diverse perspectives and culturally responsive teaching practices can increase student engagement and learning outcomes.

- **Leveraging Technology for Learning:**

Utilize the potential of educational technology to facilitate personalized and interactive learning experiences. Incorporating digital tools, simulations, and online resources can meet diverse learning needs and provide opportunities for active learning and exploration.

By correlating learning insights with instruction, teachers can enhance instructional practices, foster student engagement and motivation, and create inclusive learning environments that support the success of all learners. This holistic approach to education focuses on meeting the diverse needs of students and empowering them to reach their full potential.

In conclusion, the connections between insights in learning, psychology, and education underline the interdisciplinary nature of understanding and optimizing the learning process. By integrating psychological principles with educational practices, teachers can create more effective and meaningful learning experiences for students. Here are the main points to consider:

Interdisciplinary approach: The intersection of psychology and education provides valuable insights into the cognitive, emotional, social, and cultural aspects of learning. By drawing from both disciplines, teachers can develop a holistic understanding of how learners engage with content and concepts.

Application of Psychological Theories: Psychological theories, such as those related to cognitive processes, motivation, and social-emotional development, provide a framework for understanding how students learn and what factors influence their learning outcomes. By applying these principles, teachers can design instruction to meet the diverse needs of students.

Practical implications for education: Insights from psychology have practical implications for education, instructional design, assessment practices, classroom management, and creating supportive learning environments. Teachers can use this knowledge to increase teaching effectiveness and student engagement.

Student-centered approach: Correlation of insights into learning with psychology and education promotes student-centered approach to teaching and learning. By recognizing individual differences, fostering intrinsic motivation, and promoting self-regulated learning, teachers can empower students to take ownership of their learning and achieve academic success.

Continuous Improvement: The connection between psychology, education, and learning insights emphasizes the importance of continuous improvement in educational practices. By staying informed about current research findings and best practices, teachers can adapt their teaching methods to meet the growing needs of students and maximize learning outcomes.

In short, the connection between insights into learning, psychology, and education underscores the importance of evidence-based practices and a deeper understanding of the factors that influence learning. By integrating psychological principles into educational practices, teachers can create engaging, inclusive, and effective learning environments that support the success of all students.

References:

- Davis, D., Chen, G., Hauff, C., and Houben, G.-J. (2018). Activating learning at scale: a review of innovations in online learning strategies. Comput. Educ. 125, 327–344. Doi: 10.1016/j.compedu.2018.05.019
- Deslauriers, L., McCarty, L. S., Miller, K., Callaghan, K., and Kestin, G. (2019). Measuring actual learning versus feeling of learning in response to being actively engaged in the classroom. Proc. Natl. Acad. Sci. 116, 19251–19257. Doi: 10.1073/pnas.1821936116
- Goodyear, P. (2002). "Psychological foundations for networked learning," in Networked Learning: Perspectives and Issues. Computer Supported Cooperative Work, eds C. Steeples and C. Jones (London: Springer), 49–75. Doi: 10.1007/978-1-4471-0181-9_4
- Gunawardena, C. N. (1995). Social presence theory and implications for interaction and collaborative learning in computer conferences. Int. J. Educ. Telecommun. 1, 147–166.
- National Research Council (2000). How People Learn: Brain, Mind, Experience, and School: Expanded Edition. Washington, DC: National Academies Press, doi: 10.17226/9853
- Shekhar, P., Borrego, M., DeMonbrun, M., Finelli, C., Crockett, C., and Nguyen, K. (2020). Negative student response to active learning in STEM classrooms: a systematic review of underlying reasons. J. Coll. Sci. Teach. 49, 45–54.

Dr. Reena Rai
991, A Sector, Sudama Nagar,
main road, near Smrati dwar,
Indore, (Madhyapradesh) 452009
Mobile: 9584231840

33

THE IMPACT OF E-BUSINESS

MS. Arti Rani

Abstract:

This paper focuses on the world of marketing in a new way, electronic business. E- Business has gone through several changes in the past few years. Many enterprises company were caught off-guard by the hype during the dotcom bubble and stumbled into it without fully understanding how best to harness the power of related tools and technologies for their needs. Due to its interdisciplinary nature and its pace in penetrating into various facets of everyday activities, E-Business has become an increasing popular topic during the last two decades. The advancement of information and communication technology has brought a lot of changes in all spheres of daily life of human being. E- business is a term i.e. electronic business. In this paper we will study that how E-Business can help small businesses to step ahead of competitors and provide additional values to customers. E-commerce has a lot of benefits which add values to customer's satisfaction in the terms of customer convenience in any place and enables the company to gain more competitive advantage over the other competitors. A properly developed e-business strategy and tools that are well suited for the specificity of this type of business and appropriately used have a positive impact on an enterprise's successThis paper seeks to highlight the benefits and challenging issues of E- Business in emerging economy.

Keywords: E-business, Internet, E-commerce, Information technology.

Introduction: The term e-business was first coined by LOU Gerstner CEO, of IBM. It signifies a business management method using IT communication, mainly Internet applications. E- business is conducting business on internet not only buying and selling goods, but also servicing clients and collaborating with business partners by using all the human technologies. E-business refers, among other things, to sending documents, exchanging data between a producer, distributor and trade partner, winning new customers, conquering markets, and holding teleconferences.The term e-business may be used in a number of contexts. First: e-business may constitute an element of an enterprise management strategy consisting in the use of solutions designed to increase an enterprise's competitiveness. In such a case, companies may conduct part of their activity on-line, or use technology to improve internal or external information exchange. Second: e-business is a model of an enterprise that operates mainly on the Internet, limiting to minimum its "physical" presence on the market or traditional customer service.

Research objectives: The objective of thisresearch paper is to identify the benefits and challenges of E-business.

Research methodology: Present research study is based on secondary data. This data is collected from published books, newspapers, magazines, internet etc. The study is qualitative in nature.

Review of Literature: India has an internet user base of about 137 million as of June 2012. The access of e-business is low as compared to markets like the United States and the United Kingdom but is growing at a much faster rate with a large number of new entrants. Cash on delivery is a unique thing to India and is a preferred payment method. India has a vibrant cash economy as a result of which around 80% of Indian e-business tends to be Cash on Delivery.

E-business in India is still in burgeoning stage but it offers extensive opportunity in developing countries like India. Highly in tensed urban areas with very high literacy rates, huge rural population with fast increasing literacy rate, a rapidly growing 14 Bhavya Malhotra internet user base, technology advancement and adoption and such other factors make India a dream destination for e-business players. Moreover, squat cost of personal computers, an emergent installed base for Internet use and a progressively more competitive Internet Service Provider (ISP) market has added fuel to the fire in augmenting e-commerce growth in Asia's second most populous nation. India's e business industry is on the growth curve and experiencing a surge in growth. The Online Travel Industry is the biggest segment in e business and is flourishing largely due to the Internet-savvy urban population. The other segments, categorized under online non-travel industry, include e-Tailing (online retail), online classifieds and Digital Downloads (still in a blossoming stage). The online travel industry has some private companies such as Makemytrip, Cleartrip and Yatra as well as a strong government presence in terms of IRCTC, which is a successful Indian Railways initiative. The online classifieds segment is broadly divided into three sectors; Jobs, Matrimonial and Real Estate. A description by the Internet and Mobile Association of India has exposed that India's e-business market is mounting at an average rate of 70 percent annually and has grown over 500 percent since 2007. The current estimate of US$ 6.79 billion for year 2010 is way ahead of the market size in the year 2007 at $1.75 billion.

Apparently, more online users in India are willing to make purchases through the Internet. Overall e-commerce industry is on the edge to experience a high growth in the next couple of years.The e-commerce market in India was largely dominated by the online travel industry with 80% market share while electronic retail (E-Tailing) held second place with 6.48% market share.

E-Tailing and digital downloads are expected to grow at a faster rate, while online travel will continue to rule the major proportion of market share. Due to increased ecommerce initiatives and awareness by brands, e-Tailing has experienced decent growth. According to the Indian Ecommerce Report released by Internet and Mobile Association of India (IAMAI) and IMRB International, "The total online transactions in India was Rs. 7080 crores (approx $1.75 billion) in the year 2006-2007 and it was grown by 30% to touch Rs. 9210 crores (approx $2.15 billion) by the year 2007-2008.

India's e-commerce market was worth about $2.5 billion in 2009, it went up to $6.3 billion in 2011 and to $14 billion in 2012. About 75% of this is travel related (airline tickets, railway tickets, hotel bookings, online mobile recharge etc.). Online Retailing comprises about 12.5% ($300 Million as of 2009). India has close to 10 million online shoppers and is growing at an estimated 30% CAGR vis-à-vis a global growth rate of 8–10%. Electronics and Apparel are the biggest categories in terms of sales.

E-Business: Issues & Challenges in Indian Perspective 15 Overall e-commerce market is expected to reach Rs 1,07,800 crores (US$ 24 billion) by the year 2015 with both online travel and e-tailing contributing equally. Another big segment in e-commerce is mobile/DTH recharge with nearly 1 million transactions daily by operator websites.

E-commerce business models:

The most popular of them include:

Business to business (B2B)– A website that follows B2B model sells its product to an intermediate buyer who then sells it to final customer. i.e. relationships between two businesses taking place during wholesale and trade between different companies and within one company, between its branches. B2B development requires increasing integration of business processes between entities.

Business to customer (B2C)– A website that follows B2C model sells its product directly to final customer. i.e. relationships between an enterprise and its consumers in the area of offering information, goods and services online to individuals through online shopping centres. They may alsobanking services via which customers make bank wire transfers.

Consumer to Consumer (C2C)– A website that follows C2C model helps consumer to sells their assets like residential property, cars, motorcycle etc. by publishing their information on website.consumer to consumer, relationship based on business connections between end consumers of a service or product, such as auctions, classified ads or exchange of new and second-hand things.

Business to administration(B2A) - Relationships between business and administration, understood as companies' actions towards public sector organisations, aimed at using electronic technology for information exchange between a company and public administration, e.g. in the area of taxes or employment. This form also includes electronic reporting systems.

Citizen to Administration (C2A)– communication between citizens and public authorities allowing the former to settle important or obligatory matters through electronic contact, e.g. online submission of tax returns, submission of an application for a passport or an identity card.

Consumer to Business (C2B)-A model that is the opposite of B2C, used by portals that allow an individual person to publish an offer addressed to multiple sellers. Sellers may view offers and take responsibility for them.

finance to business- offering of their services by financial institutions to companies using the Internet.

finance to consumer – relationships between financial institutions and individual customers. X

Business to employee – use of electronic means of communication to communicate with employees - e.g. the Intranet, remote working.

Advantages of E-Business- There are innumerable advantages of E-Business. Some of the major advantages and disadvantages are as follows -

1. Easy to set up: It is easy to set up E-business. One can set up this business even by sitting at home if he has required software, a device and internet.

2. Government subsidy: Online businesses get benefits from the government as government is trying to promote digitalization.

3. Cheaper than traditional businesses: E-business is much cheaper than traditional business. Its cost is less.

4. No geographical boundaries: There are no geographical boundaries for e-business. Anyone can order anything from anywhere at any time.

5. Quickly conversation: E-business allows for conversations to happen quickly. Faster decision-making save time and time is money in business.

6. Reduce paper work: E-business reduces paper work.

7. Provide better customer services: E-business provides better customer services and develops customer and supplier relationship.

8. Beneficial for society: The main benefit from society's point of view is reducing traffic and pollution. Because customer need not to travel to shop thus less traffic on road and low air pollution.

9. More options: E-business provides more options to compare and select the cheaper and better option. Customer can buy the product which is not available in market.

10. Wide coverage: As an E-business owner you can work anywhere in the world.

11. Flexible business hours: Since internet is always available so business hours are flexible.

So, above are the advantages of E- business.

Challenges issues of E-business: The major challenges are:

1. Lack of system security- There can be a lack of system security, reliability, standards and some communication protocol. Customer may be losses their money if the website of E-commerce is hacked.

2. Less reliability: Users may not trust the site being unknown faceless seller. This makes it difficult for user to move from physical store to online store.

3. Special software required: Special type of webserver and software might be required by the vendor for setting the E-business.

4. Delivery time: The delivery of the products takes time. In traditional business, you get the product as soon as you buy it. But doesn't happen in the case of online business.

5. Quality issues: E-business lacks personal touch. One cannot touch the product. So, it is difficult for the customer to check the quality of the product.

6. High cost: The initial cost of creating this application is very high.

Conclusion: The main task of e-business is to execute transactions between trade partners in the online mode, with information being the main subject of the purchase and sale. Incorrect cost calculation and excessive haste during starting up e-business refer in particular to new ideas, as it is difficult to predict at this stage whether the technology used will work with a new solution. Other frequently made errors include ineffective marketing and promotion expressed in conducting advertising campaigns without a thought-out plan or analyses, and failure to appropriately secure transactions, i.e. use secure protocols during e-transactions. There are also technological, functional and aesthetic errors, caused by the use of inappropriate technologies, anaesthetic presentation of the offer or underdeveloped ergonomics of the service. Failure to integrate e-business with other channels and tools designed to support sale and inability to keep customers and build positive relationships and bonds with them, and inadequate planning resulting from inappropriate research of the competition market, group of target customers or offered products also have a negative impact on building an e-business strategy. Running a virtualenterprise has both numerous advantages and disadvantages. Unquestionable advantages include flexibility of such an organisation and its ability to adapt itself to changeable situations, and optimisation of the value chain of production and distribution, high productivity at low operating expenses, time savings and increasingly smooth operation.

References- 1. e-business – genesis of electronic business [in Polish], http://www.heuristic.pl/blog/e-biznes/159.html, access date 10.12.2014.

2. Benicewicz-Miazda A., E-business on the Internet and in multimedia [in Polish]. MIKOM, 2003, p. 6-8.

3. Żurak-Owczarek C., E-business on global and local scales. Analysis and an evaluation attempt [in Polish], Łódź 2013, p. 16.

4. www.ugcjournal.com

5. Harris l. and dennis c. (2002) Marketing the E-business, New York.

6. Dr. S Victor Anand Kumar, 'Information Technology and E-business'

7. Clayton, T. et al (2002). Electronic commerce and business change.

8. Yogesh Upadhayay and Singh S.K. (2007) Delhi Business Review,2

Arti Rani
House no 58/12, Holly mohalla,
near fashion plaza Allawadi chowk
Gohana (Sonepat) 131301
aartiwadhwa161992gmail.com

34

Digital Wallets: Shaping the Future of Financial Interactions

Kareena Saini

Abstract:

Digital wallets represent a revolutionary journey characterised by technical innovation, having progressed from simple transaction tools to multipurpose platforms. Their crucial role in financial inclusion is revealed by this investigation, which is motivated by the socioeconomic effect and global adoption patterns. AI and biometrics are two examples of enhanced security measures that change user experiences. Future integration with technologies like IoT, quantum computing, and smart contracts is anticipated. Digital wallets are influencing how people will transact with money in the future by acting as dynamic entry points to a networked financial environment.

Keywords: Digital wallets, E-money, Electronic Finance, Literature review.

1. Introduction

The introduction of digital wallets is a game-changer in the ever-evolving world of digital finance, changing how people and companies interact with their financial activities. In-depth analysis of digital wallets is provided in this study, which charts their development from early mobile technology to their wide range of contemporary features (Griffoli et al., 2018). The article goes beyond just classifying digital wallets into online, mobile, and hardware wallets. Instead, it explores their complex features and uses blockchain and AI to improve user experiences (De Luna et al., 2019).

In the context of digital wallets, security considerations provide a significant barrier. This study examines common problems such as identity theft and hacking. In order to strengthen the security of digital wallet transactions, it also examines state-of-the-art technology and security mechanisms Research Scholar, Department of Commerce, M.D University Rohtak, Haryana, India, kareenasaini40@ gmail.com that are currently in place. The research also explores adoption patterns worldwide, examines user behavior-influencing variables, and examines the wider social implications of digital wallets on financial inclusion. This study offers a comprehensive overview of digital wallets by analysing the legal environment and offering a forward-looking viewpoint on developing technologies. It positions digital wallets as dynamic agents influencing the future of financial transactions in our increasingly digital world.

2. Evolution of Digital Wallets Digital wallets have had an interesting path filled with significant turning points and technologicalbreakthroughs. Digital wallets were first designed as tools to make internet transactions easier back in the early 2000s. As cellphones became more widely used, their usefulness went beyond ecommerce and became diverse platforms for handling many types of financial transactions.

In the early days of digital wallets, users could save credit card details and complete transactions with ease thanks to the integration of payment features into mobile devices. Mobile wallets and banking services came together in the next stage, enabling users to pay bills, transfer money, and check balances right from their digital wallets.

The digital wallets' mainstreaming was greatly aided by the introduction of Near Field Communication (NFC). With the use of this technology, consumers can now make purchases with only a tap on their smartphones or other NFC-enabled devices. As a result, there was a noticeable change in user behaviour, which helped digital wallets become widely accepted as safe and practical substitutes for cash.

The use of biometric verification to digital wallets improved security even further as they developed. In order to mitigate worries about fraudulent activities and unauthorised access, biometric capabilities such as fingerprint recognition and face recognition were implemented to provide an additional layer of security.

Digital wallets took on new significance with the advent of blockchain technology, especially in light of the surge in cryptocurrency prices. A type of digital wallet called a cryptocurrency wallet allowed users to safely store and manage their digital assets, which helped make cryptocurrencies like Ethereum and Bitcoin more widely used.

The incorporation of artificial intelligence (AI) and machine learning algorithms is a defining feature of the continuing growth of digital wallets. Predictive analytics, improved security procedures, and tailored user experiences are all facilitated by these technologies. Systems for risk management and fraud detection powered by AI are increasingly essential to guaranteeing the security and dependability of transactions made using digital wallets.

3. Types and Functionalities of Digital Wallets The world of digital wallets is broad, with a range of options to suit different user requirements and tastes. The most common type, mobile wallets, allow transactions via cellphones and provide an easy way to combine accessibility and convenience. In contrast, online wallets function through web browsers and are not limited to any one device, giving consumers greater financial management options.

A separate class of wallets called hardware wallets puts security first by keeping user credentials offline on a tangible medium. Because of this improved defence against online attacks, hardware wallets are especially desirable to people who are concerned about security.

Digital wallets are more than just their classification;

they have complex features that go beyond traditional payment methods. These days, a lot of digital wallets come with capabilities for tracking expenses, managing investments, and creating budgets. Certain digital wallet services are linked with loyalty programmes and reward schemes, offering consumers more motivation to utilise them.

One interesting development is the combination of digital wallets with cutting-edge technology. Wallets for cryptocurrencies have been made possible by blockchain technology, allowing users to transmit, receive, and keep virtual money safely. Blockchain's decentralised architecture improves transparency and lessens the need for conventional financial middlemen.

Digital wallet functionality is increasingly being shaped by artificial intelligence (AI). Personalised user experiences are enhanced by AI-driven algorithms that provide customised suggestions based on spending habits. These algorithms also improve security protocols by using predictive analytics to identify and stop fraudulent activity.

The capabilities of digital wallets are growing as they develop, incorporating social payment networks, peer-to-peer transfers, and contactless payments, among other things. Digital wallets are positioned as full financial management solutions in addition to transactional tools due to the adaptability of these functions.

Essentially, the various varieties and features of digital wallets highlight how versatile they are in terms of accommodating a wide range of customer preferences and technical innovations. The changing environment is a reflection of a continuous endeavour to provide consumers a comprehensive financial management experience in addition to transactional ease. Navigating the ever-expanding network of digital wallet services requires governments, entrepreneurs, and consumers to understand these subtleties.

4. Security Concerns and Solutions

When it comes to the digital world, where efficiency and convenience are combined, digital wallet security becomes critical. Because they hold private and sensitive financial data, digital wallets are attractive targets for cyberattackers. Strong security measures are required to protect users and their assets against identity theft, fraud, and hacking, which present serious threats to the security landscape of digital wallets (Khurana, 2020).

Identity theft is a ubiquitous threat that arises when unscrupulous individuals get personal information without authorization. Once hacked, this data can be used for fraudulent purposes, such as making false identities or engaging in unlawful transactions. Sturdy identity verification systems that make sure only authorised users can access and use digital wallet services—like biometric authentication and two-factor authentication—have emerged as critical defences against identity theft.

Digital wallet fraud frequently takes many different forms, including phishing attempts, account takeovers, and unauthorised transactions (Foster et al., 2022). Technologies for data encryption are essential for protecting data while it is being transmitted because they prevent hackers from intercepting and altering private data. Furthermore, real-time fraud detection systems use machine learning and artificial intelligence algorithms to examine transaction trends in order to quickly spot and stop fraudulent activity before it becomes worse.

The security of digital wallets is seriously threatened by hacking, as hackers deploy advanced methods to access user accounts without authorization. Digital wallets' defences against hacking attempts are strengthened by multi-layered security measures, which include strict password restrictions, frequent security upgrades, and the usage of secure hardware components. In addition, digital wallets that are decentralised and blockchain-based provide better security by minimising the dependence on central points of vulnerability.

As the world of digital wallets keeps changing, privacy issues also become more pressing. Consumers are becoming more aware of the protection of their personal data and their digital footprint. Digital wallets are starting to include privacy-centric features like anonymous transactions and more control over data sharing. These features give users more confidence to utilise these platforms without worrying about their privacy being compromised.

5. Adoption Trends and User Behavior Gaining knowledge about digital wallet adoption patterns and user behaviour will help you better understand how financial technology is developing (Neves et al., 2023). A convergence of shifting consumer expectations, technology improvements, and a growing emphasis on cashless transactions has led to a spike in the popularity of digital wallets globally (Shetu et al., 2022).

The adoption landscape is significantly shaped by demographic considerations. Younger generations are adopting digital wallets at a faster rate than older generations due to its ease and technical attractiveness, especially millennials and Generation Z. However, older generations are gradually increasing their use of digital wallets as digital literacy increases among all age categories.

The different adoption rates are also influenced by culture. Digital wallet uptake is typically faster in areas with established and well recognised digital payment ecosystems (Thi et al., 2021). On the other hand, the adoption of digital wallets can happen more gradually and encounter opposition in places where conventional payment systems have cultural value. The adoption of digital wallets is also influenced by economic variables. Adoption of digital wallets is more common in economies with a strong digital infrastructure and broad smartphone penetration (Tiwari &

Iyer, 2018). On the other hand, adoption rates may be slower in areas with limited access to technology and economic inequality.

Within the ecosystem of digital wallets, user behaviour is complex. Initially, acceptance is frequently driven by convenience factors such as mobile banking integration, rapid transactions, and loyalty programme administration. Positive user experiences are greatly enhanced by seamless and intuitive interfaces, which encourage continuing use.

But security worries continue to be a major factor in determining how people behave. The foundation for widespread acceptance of digital wallets is confidence in the security safeguards put in place by these providers. Events involving fraudulent activity or data breaches can have a substantial negative influence on user confidence, underscoring the necessity of ongoing improvements to security procedures.

The use of digital wallets is also consistent with a general trend in consumer preferences towards mobile and contactless payment methods. This tendency has been driven by the COVID-19 epidemic, since customers value touchless transactions more for their safety and cleanliness.

6. Impact on Financial Inclusion Digital wallets are becoming more effective instruments for tackling the worldwide issue of financial inclusion (Neves et al., 2023). Digital wallet use has given historically marginalised populations—who are frequently left out of traditional financial systems—newfound access and empowerment (Rizwana et al., 2021). The influence touches on fundamental elements of economic involvement, empowerment, and poverty reduction in addition to convenience.

By offering a portal to financial services, digital wallets fill the gap in areas with limited traditional banking infrastructure. In isolated and rural locations where it is not viable to develop real banking infrastructure, mobile-based wallets have proven to be very helpful (Rizwana et al., 2021). Because of this inclusion, people who were previously denied access to financial services are now able to manage their funds, engage in the economy, and receive payments.

Digital wallets' accessibility and ease of use greatly advance financial literacy. Users feel empowered and more financially independent when they interact with digital transactions and are more familiar with fundamental financial ideas. Better financial decision-making and increased economic well-being for both people and society can result from this new knowledge (Hashfi et al., 2020).

Digital wallets also encourage small company growth and entrepreneurship. Through digital platforms, people who would have encountered difficulties obtaining official financial channels can now receive payments, apply for loans, and oversee their business finances. The democratisation of financial instruments promotes entrepreneurship and aids in the general economic advancement of local communities (De Luna et al., 2019).

Additionally, because digital wallets are flexible, they may handle a range of income levels, including individuals with irregular or lower earnings. Digital wallets with incorporated microtransactions, savings options, and microloans address the many financial demands of thosewho might not fit the mould of traditional banks.

But there are still obstacles in the way of achieving financial inclusion for everybody. To enable the broad use of digital wallets, infrastructural constraints, legal frameworks, and digital literacy must all change. Unlocking the full potential of digital wallets as instruments for financial inclusion requires addressing these issues and collaborating with the public and commercial sectors.

7. Future Prospects and Innovations Digital wallets are expected to undergo constant change in the coming years due to new developments in technology and creative ideas. Future digital wallets could expect improved user experiences, more security, and interaction with cutting-edge technologies as technology develops.

8 The continuous incorporation of artificial intelligence (AI) into digital wallet systems is one noteworthy development. Digital wallets can customise their services according to the tastes and actions of its users thanks to artificial intelligence (AI). Artificial intelligence (AI)-powered predictive analytics can foresee consumer demands, expediting financial transactions and delivering more user-friendly, intuitive experiences.

In the future, digital wallets will heavily rely on biometric identification. Biometric capabilities, including voice, face, and fingerprint identification, are becoming essential features as security worries continue. By including additional security layers, these technologies guarantee that digital wallet services can only be accessed and used by authorised users.

Digital wallets have already been impacted by the emergence of blockchain technology, especially in the context of cryptocurrencies. In the future, blockchain technology may be more deeply integrated for tokenization, allowing digital wallets to manage a wider variety of digital assets, such as digital securities and non-fungible tokens (NFTs). Blockchain's decentralised structure also helps to improve the security and transparency of transactions made with digital wallets.

It is anticipated that the Internet of Things (IoT) would expand the capabilities of digital wallets. Digital wallets may go beyond smartphones to easily interface with wearables, smart home appliances, and linked automobiles as IoT-enabled gadgets proliferate. With this connectivity, customers will be able to easily monitor their funds and conduct transactions across a wide range of linked devices.

The development of quantum computing is also critical to the future of digital wallets. Although it is still in

its infancy, quantum computing has the power to completely transform encryption methods, greatly boosting the security of transactions made using digital wallets. To guard against future dangers, it also presents new difficulties that call for the creation of encryption methods that are resistant to quantum mechanics.

The idea of programmable money and smart contracts is gaining popularity as digital wallets continue to develop. Blockchain-enabled smart contracts have the potential to streamline financial transactions by automating intricate arrangements inside digital wallets, including lending, borrowing, and investment management.

8. **Conclusion**

Our investigation into the dynamic world of digital wallets has shown a voyage of transformation characterised by evolving financial environments and technical advancements. Digital wallets have adopted advances like biometric verification, artificial intelligence, and blockchain, guaranteeing improved security and user experiences, moving from basic transaction tools to complex systems.

Digital wallets are becoming increasingly popular across the world, especially among younger people, and this has a clear socioeconomic influence on financial inclusion. With even more integration with IoT, quantum computing, and smart contracts promised in the future, digital wallets will be firmly established as major actors in the rapidly changing financial technology scene.

Reference

De Luna, I. R., Liébana Cabanillas, F., Sánchez Fernández, J., & Muñoz Leiva, F. (2019).

Mobile payment is not all the same: The adoption of mobile payment systems depending

on the technology applied. Technological Forecasting and Social Change, 146, 931–944.

https://doi.org/10.1016/j.techfore.2018.09.018

Foster, B., Hurriyati, R., & Johansyah, M. D. (2022). The effect of product knowledge, perceived

benefits, and perceptions of risk on Indonesian student decisions to use E-Wallets for

Warunk Upnormal. Sustainability, 14(11), 6475. https://doi.org/10.3390/su14116475

Griffoli, T. M., Peria, M. M., Agur, I., Ratnovski, L., Kiff, J., Popescu, A., & Rochon, C. (2018).

Casting light on central bank digital currencies. IMF Staff Discussion Note, 18(08), 1.

https://doi.org/10.5089/9781484384572.006

Hashfi, R. U. A., Zusryn, A. S., Khoirunnisa, N. L., & Listyowati, A. R. F. A. (2020). ONLINE

PAYMENT, INDIVIDUAL CHARACTERISTICS, AND DIGITAL FINANCIAL INCLUSION IN OIC COUNTRIES. Journal of Islamic Mon

Kareena Saini
Research Scholar
Department of Commerce
M.D. University
Rohtak (Haryana)
Pin 124001

35

A COMPARATIVE STUDY OF QUALITY OF LIFE AMONG WORKING AND NON-WORKING WOMEN

Dr. Parul Patel

Abstract

Woman is pure creature of God. They are image of beauty, softness, sacrifice, kindness, and goodness of power as well as darling of her parents. Women are one of the most important wheels of society, without women the foundation of society would not be possible (N. Andal. 2002). Second name of women is 'world maker'. She makes the world (Sharma, A. 2002). Single women had different forms. Since her birth, she had been connected with other relations like daughter, sister etc. After marriage she had been connected with new relations like wife, mother (Majumdar.M (2004).

"A woman is the full Circle. Within her is the power to create, nurture and transform".

~ Diane Mariechild

"Change is the essence of progress" and development within any society. The status of women in the Indian society is in the process of change. The women are now able to lead a more independent lifestyle and have more options open to them than in the traditional society of the past years. At that time they are totally dependent and have similar lifestyle. But now the field is open and they are trying to be independent and this causes big change in their lifestyle and role of daily life. This opening of the system has lead to a temporary stateof imbalance where the role expectation from women and their pattern of socialization is still at times, governed of by the old codes of conduct even though they have newer fields open to them. They are joining all the fields as medical, engineering, management, educational field, forces, etc.

The major role of women, considering their nature and divine creation, is motherhood bringing up their children. On the other hand women, as half of the society, have the competency in culture, political, educational and scientific fields. This is because women's are getting education and want to do something.

Thus women's participation in social and culture activities is of high importance in order to help women themselves, family and society promote. Women get financial resources as a result of their employment and working outside their house and conquering new room in the society. This has changed the traditional organization and structure of the family and consequently requires forming a new kind of balance in the house. Women of different social classes cannot have a common motivation to get a job outside home. Some with low levels of education and expertise simply want to get employed in order to solve financial problems of the family. Hence they cannot choose their job, accordingly, this leads to job dissatisfaction, lack of culture efficiency and personality growth.

Social and family activities in accordance with the nature and capacity of men and women can be of highly fruitful but what should be taken into consideration regarding the women's employments outside their houses and their different family roles in this fact that such employment should, have no threat and damage for rearing children, of course, this does not mean that in traditional distribution of family duties between couples within house, men's crucial participation in rearing children is ignored.

WORKING WOMEN

"Working women are referred to those women, who go outside the home and earn some reasonable money."

A women's role can be appropriately described as 'multi-dimensional'. A women has to be a daughter, a wife, a mother, and a professional at the same time. Today, women's importance is gaining speed in the world of work. But, the inappropriate notion about women which says that 'women are ruled by heart, not head,' restricts the women to be credited for their contribution towards the economic success.

A decade ago, women were not welcomed in the top positions of the corporate houses. To reach up to the top positions, they have to cross a lot of hurdles. Time and again, women have crossed the hurdles, proved their mettle and are holding the major positions gloriously.

NON-WORKING WOMEN

"Non-working women are referred to those women who lived at home all the time and look after their families."

HOUSEWIFE is the best. Mothers are very close to family. As they are home so they have more attention to their child, taking their studies, home, etc. Unlike working women have their own schedule and their own plan so there is less attention to their child. Woman who stay home and taking care of her husband they really enjoy their personal life more than a woman who works and get less attention toward their children. Housewives staying at home spending more time around their children they are more-responsible mothers than worker mother. I think that a house wife is better than a working woman because she is taking care of house, children and his

husband.

When a woman is at home she has enough time to spend with her children not because she has less work to do but because, being at home, she is there for the child whenever required. Children get time to share their problems, happiness, fun and curiosity with their mother. She teaches them everything. A child's best friend is his/her mother but if she is too busy taking care of both the home and her job how would she have the time and energy to be there for her child when required the most .

REVIEW OF RELATED STUDIES

Paul Mussen(1982), conducted a study on "Early Adult Antecedents of Life Satisfaction at Age 70". The present of participants in this study were in their early 30s, the mothers were related on 15 cognitive and personality characteristics and both parents were related on personal, interpersonal, and family variables. Approximately 40 yrs later, the surviving parents were interviewed intensively and assigned life satisfaction ratings. For both sexes, certain traits of their own at 30 are correlated with life satisfaction at 70. The predictive characteristics for women reflect buoyant, responsive attitude toward life; those for men represent emotional and physical health. For a woman, the material relationship and some of her circumstances at 30 were also predictive, but her husband's traits were for the most part unrelated to her satisfaction with life at 70. For men, in contrast, characteristics of their wives indicative of emotional stability were even more highly predictive of their life satisfaction at 70 than were their own traits at 30.

Bhattacharjee(1983) studied on family adjustment of married working and non-working women's. A specially developed adjustment inventory, a health-status questionnaire and an incomplete sentences blank to 76 married working and 70 married nonworking women's. No significant differences in adjustment or neuroticism were found between the working and non-working, nor were any differences found on the incomplete sentences measure of psychological conflicts. It is concluded that a woman's adjustment, whether employed or not, is a function of her own personality traits, expectations, and perceptions combined with those of her spouse and family members.

Chipper field and Havens (2001) conducted study to examine life satisfaction among individuals who had undergone a transition in marital status and those whose marital status remained stable over 7- year period. Among those individuals whose marital status remained stable over the 7 years, women's life satisfaction declined and men's remained constant. Among those who experienced a transition- in particular, the loss of spouse - a decline in life satisfaction was found for both men and women decline being more predominant for men. In addition, men's life satisfaction increased over the 7 years period if they gained a spouse, whereas the same was not true for women. Generally, these findings imply that the relationship between marital status transitions or stability differs for men and women.

RESEARCH METHODOLOGY

SIGNIFICANCE OF THE STUDY:

Liberalization, privatization and globalization have seen significant growth in employment opportunities for both men and women. This new found social status has effect on the psychological state of women as well as their adjustment towards various aspects of life.

This study will attempt to assess the stress level, depression, anxiety and other psychological states of Indian women. An insight into the economic, social and personal needs of women will go a long way in improving the mental health and coping abilities in them. In Indian society, in urban areas more and more women are sharing financial responsibility. In matters of decision making women are neglected and they are not consulted on important matters. Similarly there are no compromises as far as housework is concerned. They are expected to fulfill this responsibility also without any support from men. In organizations where women work they are not given critical support which is needed by women at the time of childbirth, or sickness.

Non-working women are also required to take care of all household responsibilities. They suffer from fatigue, boredom, monotony and depression. There is a need to change the attitude of the society towards women so that they also live a normal purposeful life. Their important role should be appreciated and acknowledged and they should be given all type of support so that they can withstand the pressures on their lives and do not suffer from psychological problems.

OBJECTIVES

THE OBJECTIVES OF THE STUDY ARE AS FOLLOWS:

1. To study about the social status of working and non-working women.
2. To study and compare life satisfaction between working and non-working women.
3. To assess the level of adaptability of current technology among working and non-working women.

HYPOTHESIS

They are powerful tools for the advancement of knowledge because they enable man to get out of limited men made

barriers and to get out of his narrow horizons. There would be no science in any complete science without a hypothesis.

1 Hypothesis is a tentative generalization the verification it remains to be done.

Landberg G.A. (1952)

2 Hypothesis is an inferential statement about the relations between two variables.

Karlingon (2001)

Methods of Collecting Data:

Initial information is collected through review of Literature from various published reports, research journals, reference books and online databases like ProQuest, SAGE publications, Scopus, Academia and Shodhganga.

For Primary Information, data is collected through Quantitative method, via a detailed structured Questionnaire.

Primary data is collected though a structured questionnaire survey method. Two questionnaires are created, one for working women and second for non-working women. It mostly includes close ended multiple-choice questions to capture the exact responses from the respondents.

Secondary data used for the research is as follows:

i) Those published by researcher in various University Thesis.
ii) Newspapers and blogs related to the present research
iii) Existing literature within this field through Online publications.
iv) Reports publish by Telecom Regulatory Authority of India
v) Research papers published in various Journals.

Research Instruments

Research instruments are tools used for data collection and analysis. Researchers can use these tools in most fields.

Research Instrument: Interviews

The interview is a qualitative research method that collects data by asking questions. It includes three main types: structured, unstructured, and semi-structured interviews.

Research Instrument: Surveys

Survey research is another primary data collection method that involves asking a group of people for their opinions on a topic. However, surveys are often given out in paper form or online instead of meeting the respondents face-to-face.

Research Instrument: Observations

Observation is another research instrument for marketers to collect data. It involves an observer watching people interacting in a controlled or uncontrolled environment.

Research Instrument: Focus groups

Focus groups are similar to interviews but include more than one participant. It is also a qualitative research method which aims to understand customers' opinions on a topic.

Research Instrument: Existing data

Unlike the others, existing or secondary data is an instrument for secondary research. Secondary research means using data that another researcher has collected.

CONCLUSION

The research methodology and design indicated overall process of the flow of the research for the given study. The data sources and data collection methods were used. The overall research strategies and framework are indicated in this research process from problem formulation to problem validation including all the parameters. It has laid some foundation and how research methodology is devised and framed for researchers. This means, it helps researchers to consider it as one of the samples and models for the research data collection and process from the beginning of the problem statement to the research finding. Especially, this research flow helps new researchers to the research environment and methodology in particular.

DATA ANALYSIS & INTERPRETATION

This also helps in knowing the reliability level for the calculation made. This stage of analysis includes editing, coding, classification & tabulation of data in a systematic manner. Further, hypothesis testing & interpretation takes place via application of statisticaltests of significance

FINDINGS & CONCLUSION

- The result shows that majority of working women (68%) lives in joint family and majority of non-working women (68%) prefer to live in nuclear family.
- All women are highly qualified, whether working or non-working.
- 56% of working women are post graduates.
- 28% of non-working women are graduates.
- Working women 68% are more aware of the program and schemes initiated by government to help women while 68% of non-working women are not aware about the schemes.
- Both working (60%) and non-working (61%) women loves to wear sari. While 76% of working women prefer suits most.
- From the research we conclude that 24% of working women have highly involvement and 52% of working women have medium level of involvement in major family decisions like building house, study/marriage of children whereas 44% husbands of non-working women get more involved in taking decisions.
- According to both working (84%) and non-working (80%) women, working women get more respect in

society compared to non-working women.

- From the data, 32% of non-working women are highly satisfied and 52% of non-working women are medium level satisfied with their life comparison to working women. And 28% of working women have low level of life satisfaction.
- Family responsibilities does effect the work life of 52% of working women as maintaining balance in both is quite a challenge.

Conclusion

The research revealed that the working and non-working women differentiate from each other by different variables. The above results indicates that the non-working woman have better healthiness as compared to working woman. There was significant difference in wellbeing among working and non-working woman. Additional work and home responsibilities, caring for children and aging parents have significant effect on both working and non-working women. Working women having mental burden to contribute to the family economically as well, as comparative housewife. For a child, a non-working mother is better as she could spend more time in parenting the child and inhibiting some essential childhood.

The result also highlights that non-working women are dependent on social rituals and family decisions. On the other side, working women are comparatively stronger than non-working women in taking their own decisions facing society. The conclusion is working women are stronger as compared to non-working or unemployed women. It shows that non-working women need more attention. She needs more opportunities to take decisions in daily household activities. The Family members must be supportive of household activities for the working women which may reduce the stress in their lives to some extent.

Limitation& Suggestion

Every study, no matter how well it is conducted, has some limitation:

o In the present investigation, only a limited sample was taken from various households.

oThe present research considered only socioeconomic-status as determinant factors for women's state and life satisfaction thus other variable can also be taken in further research.

o Because of time limitation sample size taken is small but large sample can be taken into consideration so that generalization quality of research can be increased.

o Locality of the study was restricted to the city only. It can be spread into other areas also.

?the study is carried out for short period, so that time and other resources are limited to an extent.

BIBLIOGRAPHY

Books-

- C R Kothari and GauravGarg: Research Methodology Methods and Techniques
- Ram Ahuja - Research Methods
- Dr. R.N. Trivedi - Research Methodology

Websites

- https://www.thefreedictionary.com/workingwoman
- https://www.dictionary.com/browse/nonworking
- https://www.123helpme.com/essay/Role-Of-Working-Women-Essay-394015
- https://www.ipl.org/essay/Working-Women-Vs-Housewives-Essay-FJBJF33RAQG

Dr. Parul Patel
MSW, MPhil, PhD
SOCIAL WORK
Guest faculty, Sociology Department,MLSU,
UDAIPUR
Email id :parulsatyjeet@gmail.com

36

HOW IS SEXUAL HARASSMENT DEALT WITH UNDER THE INDIAN STATUTES: A ANALYSIS

Ms.Tanu Arora

Abstract

Sexual harassment is addressed by several laws in India, including the Indian Constitution, the POSH Act, and University Grants Commission (UGC) recommendations. The Indian Constitution guarantees the right to gender equality as well as the right to a dignified existence, which includes protection from sexual harassment. The POSH Act and the UGC guidelines, respectively, establish a framework for preventing and resolving sexual harassment in the workplace and educational institutions. Other laws, such as the Indian Penal Code, include criminal sanctions for sexual harassment. These legal provisions aim to create a safe and respectful environment for all individuals and to promote gender equality in India.

KEYWORDS: Sexual Harassment, Statutes, Higher Educational Institutions, The POSH.

Introduction

Workplace sexual harassment is a well-known global problem that affects working women everywhere. As our nation has developed, more women have left the safety of the home to face the rigours of managing a profession, which has led to a rise in the percentage of working women from all walks of life. This also implies that there are more recent difficulties that women must now overcome at work. Because of the increased interaction between men and women in the professional and economic environment today, standards and rules must be established to protect all women. There are many women who have experienced sexual harassment occurrences, despite the fact that women generally do not disclose them for fear of social rejection, losing their jobs, etc. This calls for a strict law to prevent sexual harassment. "Sexual harassment is a violation of human rights under Articles 14, 19(1)(g), and 21 of the Indian Constitution. In other words, sexual harassment at work" is a prolonged act of violence that violates women's rights to life and a means of subsistence and leads to discrimination and exploitation. The "Me Too" Movement brought sexual harassment to light.

What are the legal precautions against sexual harassment and who are the victims?

Sexual harassment is a form of workplace discrimination that can affect anyone, regardless of gender or job position. However, certain groups may be at higher risk of experiencing sexual harassment, such as children in forced labor or domestic workers. Other factors, such as job insecurity or inexperience, can also increase vulnerability to sexual harassment.

"In India, Sexual harassment is dealt with by various enactments":

"Articles 14, 16, 19, and 21 of the Indian Constitution guarantee equality, nondiscrimination, the right to a job and a livelihood, and the right to live in dignity. "

The Indian Penal Code's "Sections 354 (now A, B, C, & D), 376 (now A, B, C, & D)," and 509 specify the penalties for rape and insulting a woman's modesty. The updated clauses now protect women who are in the custody, care, or control of other people and address more serious incidents.

Indecent Representation of Women's Act.

"The POCSO Act was legislated with a view to protecting minor victims."

Understanding the evolution of safeguards for women

In India, there are laws in place to protect women, but despite this, working women have not always received the necessary protection under the Constitution and other laws. Due to the need for precise regulations to uphold their rights, the Prevention of Sexual Harassment (POSH) Act was developed. After a group of NGOs and social activists launched a Public Interest Litigation in before S C in 1997 to defend the fundamental rights of working women, it became clear that this statute was necessary. The catalyst for this was the brutal gangrape of Bhanwari Devi, a representative of the Women Development Department who worked to prevent child marriages. The POSH Act was passed in 1997 as a result of the landmark Vishaka Judgement, which established the right to gender equality in the workplace and provided a procedure for handling complaints of workplace sexual harassment.

The Vishakha judgement

Dalit worker Bhanwari Devi was gang-raped in 1992 while working for the Rajasthani government's Women Development Department. This incident resonated with the public and exposed the risks that working women confront while bringing to light the frequency of sexual harassment in Indian workplaces. In order to combat and prevent workplace sexual harassment, the Union of India was given instructions and directions by the Apex Court of India in accordance with its power under Article 32 of the Indian Constitution. These regulations were developed to establish processes for dealing with and resolving sexual harassment claims in the workplace.

"Vishaka guidelines drew from the following international conventions":

"The Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination Against Women (CEDAW)" serves as the

foundation for the POSH Act, which was passed in India and addresses issues such as gender equality in the workplace, gender-based violence, and inappropriate sexual behaviour. Additionally, on June 3, 1960, India ratified "the International Labour Convention on Discrimination (Employment and Occupation, Convention No. CIII)", which mandates that the government prevent and outlaw all gender-based workplace discrimination.

"Highlights of the Vishaka judgement can be summarised as":

A. "Providing a definition of Sexual Harassment.
B. Prioritizing prevention.
C. Provision of an innovative redressal mechanism.
D. Shifting accountability from individuals to institutions".

In accordance with the Vishaka recommendations, the Indian Supreme Court rendered a decision in the case of Apparel Export Promotion Council v. A.K. Chopra on January 20, 1999. "The court stated in the judgement that each incident of sexual harassment at work results in violation of the fundamental right to gender equality and right to life and liberty and cited the Vishaka judgment, CEDAW, ILO Seminar at Manila, and fundamental rights guaranteed under the Constitution." The court affirmed the sexual harassment termination of a senior officer and broadened the definition of sexual harassment at work to encompass inappropriate behaviour even in the absence of physical contact.

In a judgment on October 19th, 2012, in the case of Medha Kotwal Lele and others, a three-judge bench of the Supreme Court gave further directions, including:

1. Within two months, State and Union authorities should implement the necessary changes to their respective Civil Services Conduct Rules. Under these Civil Services Conduct Rules, the Complaint Committee's report should be treated as an inquiry report for purposes of discipline.
2. The Industrial Employment (Standing Order) Rules must be changed by States and Union territories within two months.
3. Within two months, State and Union Territory organisations must create a sufficient number of complaint committees and guarantee that they are operating at the Taluka, District, and State levels. The Complaints Committee ought to be headed by a woman and include impartial members.
4. The state and union territory, as well as the public and commercial sectors, undertakings, and organizations, should ensure that the Vishaka guidelines are fully implemented. If the harasser is proven to be guilty, he or she should be transferred and the victim should not be forced to work with or under them. Harassment and intimidation of the complainant and witnesses should result in severe disciplinary action.
5. The Vishaka guidelines should be followed by the Indian Bar Council, Indian Medical Council, Indian Council of Architecture, etc.
6. The complainant may seek the relevant High Courts if the Vishaka guidelines are not followed.

The Nirbhaya case

A horrifying occurrence known as the Nirbhaya case, which comprised the gangrape, abuse, and torture of a 23-year-old in South Delhi, occurred in 2012. This tragedy led to several protests and demonstrations across the nation. It also advanced the long-overdue implementation of legislation pertaining to sexual harassment in the workplace and changed the laws governing violence against women.

"It was after a long lapse that is in the year 2013, the Government of India enacted the POSH Act, consistent with Vishaka Guidelines, with effect from 9th December 2013." The purpose of the Act is to protect women's rights to equality and prevent sexual harassment in the workplace by implementing measures for prevention, prohibition, and redressal. Sexual harassment at work is now a crime under the 2013 amendment to the Tamil Nadu Prohibition of Sexual Harassment of Women Act. Before the POSH Act was passed, incidents of sexual harassment were handled with under sections 354 and 509 of the Indian Penal Code. Section 354 was enlarged to encompass voyeurism, stalking, and an attempt to undress by the addition of four additional subsections in 2013 as part of the Criminal Law Amendment Act. Additionally, Section 376 of the IPC now applies to women who are under another person's custody, care, or control.

In the Year 2017, "the Union Minister for Women and Child Development", Maneka Gandhi, launched an online portal called "SHE-BOX," which allows women in government or private organizations to report cases of sexual harassment.

In the year 2018, Private enterprises must now indicate compliance with the POSH Act in an annual board report thanks to a change made to the enterprises (Accounts) Rules by the Ministry of Corporate Affairs. Companies are required to provide a declaration in their report stating that they have complied with the ICC's POSH-related rules. Failure to comply with Section 134 can result in heavy fines of up to Rs. 25 lakhs and even imprisonment under the Companies Act, 2013.

"The highlights of the POSH Act, which is a women-centric Act, provides for prevention, protection and redressal mechanism that can further be enumerated as":

a) Provides for a time-bound process.
b) Provision of trained, skilled, competent complaint committee.
c) Ensures information Confidentiality.

d) Counselling and other enabling support.
e) Assurance of non-retaliation.
f) Assistance for Criminal Complaint.

Key features/ provisions of the POSH Act

The POSH Act's Section 2 contains comprehensive and inclusive definitions, particularly those of aggrieved women, employers, sexual harassment, and the workplace.

Aggrieved woman: The term "complainant" or "aggrieved woman" refers to any woman, regardless of age, who has experienced sexual harassment, whether or not she is employed. This includes students, visitors to workplaces, and employees.

Working woman includes:

On the subject of express/implied terms. Ad-hoc/daily wage employee; Regular/temporary employee; Domestic Worker; Working on remuneration/otherwise. Directly employed, through an agent, or on a volunteer basis/; Includes contract workers, apprentices, probationers, trainees, and anyone else who works with or without the Principal's knowledge.

Understanding "appropriate government"

The first section is on State Governments, which are the ruling bodies of specific states or provinces within a country. A workplace is subject to the jurisdiction of the state government if it is founded, controlled, owned or financed using granted directly or indirectly by the state government.

The second section is on central governance, which is the highest level of government in a country. A workplace is subject to national government jurisdiction if it is founded, controlled, owned or financed with funds provided indirectly or directly by the Central Government.

In both cases, the government entities have a degree of authority and oversight over the workplace due to their ownership or financing.

What constitutes a "workplace"?

A workplace is defined as "any place visited by the employee arising out of or during the course of employment, including transportation provided by the employer for undertaking such a journey. The definition of workplace covers both the organised and unorganised sectors."

The Act defines a workplace broadly, encompassing any site an employee visits while on the job, as well as vehicles provided by the employer for work-related travel. This term encompasses both the organised and unorganised sectors, as well as public and private organizations, individuals, enterprises, and residential properties.

It is now understood that a workplace is any place where an employee has a working relationship with an employer, regardless of whether it is the primary office or not. Therefore, workplaces can include hospitals, educational institutions, companies, government entities, sports institutes, trusts, and societies that operate on a commercial basis.

Who is an "employer"?

An employer can be defined as:

1. "For Government or local bodies, it refers to the specified officer or head of the department/ organization/ undertaking/ establishment/ enterprise/ institution/ office, branch or unit of the Appropriate Government or local authority."
2. For a designated workplace, it refers to the person responsible for management, supervision, and control.
3. In the case of domestic workers, it refers to the individual who hires them or benefits from their work.

Who is an "employee"?

The term "employee" refers to any person performing any kind of work at a place of business, whether on any form. This definition also encompasses co-workers, contract workers, probationers, trainees, apprentices, or any other similarly designated personnel.

Sexual harassment:"Sexually suggestive comments, remarks, jokes, letters, phone calls, emails, gestures, an exhibition of pornography, lurid stares, physical contact, stalking, and any other sexually suggestive behaviour that interferes with an individual's performance or creates an intimidating, hostile, or oppressive environment are all examples of sexual harassment."

Thus, there are two categories of sexual harassment.:

Quid Pro Quo: This passage describes instances of sexual harassment in the workplace, specifically referring to situations where an employee is offered a job benefit or promotion in exchange for sexual favours or advances. If the employee refuses these advances, they may face negative consequences such as demotion, suspension, reduced salary, or false performance evaluations.

For example, sexual harassment would occur if a female employee is asked to her manager's home with the promise of a promotion, and the manager makes physical attempts towards her and threatens to terminate her if she does not comply.

Hostile work environment:A hostile work environment occurs when an individual is subjected to unwanted and offensive behaviour by coworkers, bosses, or clients, making the workplace uncomfortable, intimidating, or disrespectful. Harassment, discrimination, or retribution can all take the form of physical, verbal, nonverbal, or visual behaviour. Such activity can have an impact on an employee's performance and mental health, leading to decreased productivity, absenteeism, and even resignation. According to the legislation, employers must offer their staff a safe and healthy work environment that is free from retaliation, harassment, and other forms of intolerance.

The essential components of sexual harassment at work:
"UNWELCOME, SEXUAL in nature, SUBJECTIVE experience, IMPACT and not intent that matters and often occur in matrix of POWER."
To "unwelcome" something in the context of sexual harassment means to make the victim feel negative emotions like powerlessness, invasion of privacy, and low self-esteem. The effects of sexual harassment can be seen in decreased work performance, increased absenteeism, and retaliation from colleagues. The victim may also be subjected to gossip, scrutiny, sexualization, or ostracization in the workplace, leading to job or career consequences, depression, anxiety, panic, stress, or even anger or violence towards the perpetrator.

The POSH Act states that it is the employer's duty to prevent sexual harassment in the workplace and to establish a process for dealing with or prosecuting such occurrences. Sections 4, 19, and 22 of the Act are those that apply. Section 4 details the requirements for the membership of the committee, which comprises a female presiding officer, two employee members, and one outsider member, and particularly calls for the employer to create an internal complaints committee.
The followings are the duties and obligations of the employer under Section 19 of the POSH Act:
Duties of employer
It shall be the duty of every employer, as provided in Section 19 of the Act:
a. As per Section 19 of the Act, employers have several duties that must be fulfilled in order to provide a safe and harassment-free working environment. Firstly, it is the duty of every employer to ensure that the workplace is safe, not only for their employees but also for any third-party individuals visiting the premises. Employers are also required to display prominently in the workplace, the penal consequences of sexual harassment. "They should also display the order constituting the Internal Complaints Committee and organize regular workshops and awareness programmes for the sensitization of employees."

b. Additionally, employers shall organise orientation workshops for members of the Internal Committee, as well as provide the Committee with the necessary facilities to deal with complaints and conduct investigations. Employers must also make certain that respondents and witnesses appear in front of the Internal Complaint Committee or the Local Complaint Committee. It is their responsibility to furnish the Complaint Committee with all necessary information and to assist women if they choose to submit a complaint under the Indian Penal Code against the erring employee or any other culprit.
c. Sexual harassment shall be treated as a violation of service regulations by employers, and the perpetrator must face disciplinary action. They must also guarantee that the Internal Committee submits reports on time to ensure that the complaint procedure is efficient and effective. Businesses that carry out these responsibilities can provide a safe and secure working environment for their employees, as well as help prevent and address sexual harassment incidents.
Section 22 mandates that the annual report must include specific information related to the implementation of the Act. Sections 6 and 7 cover the establishment, composition, and jurisdiction of the Local Complaints Committee.
Sections 9 to 11 detail the procedure for filing a complaint, including its requisitions and limitations, as well as conciliation and inquiry.
Sections 12 to 18 provide a framework for conducting an inquiry and also outline penalties for filing false complaints and provisions for appeals. Overall, the POSH Act lays out a comprehensive process for addressing sexual harassment in the workplace and ensuring that victims are provided with effective remedies.

The statute also calls for the proper oversight of the entire procedure, as well as the implementation of the recommendations and reliefs. Confidentiality is guaranteed by the condition that any information leak will be penalised. Dissemination of information about the ICC and the prohibition of sexual harassment at work serves as both a deterrent and a guide for submitting complaints.
"The act also provides for punishment for false and malicious complaints as well as false evidence."
The provisions put in place aim to safeguard women's safety and well-being in the workplace, eliminate discrimination and biased attitudes towards them, and increase their participation in both new and existing industry verticals. They also promote the growth and development of working women and their contribution towards the overall economic development of the country. The provisions cover all possible aspects and are intended to create a more inclusive and equitable work environment for women. By implementing these measures, we can ensure that women have equal opportunities and are able to reach their full potential in the workplace.
Employers are now held accountable for failing to implement POSH and establish a safe workplace. The only defence available to an employer as a company or its management is proactive POSH compliance. The provisions of the Act, including the implementation requirements, must be followed by the employer in letter

and spirit and not only as a formality. To ensure proactive compliance, the internal complaints committee must be staffed with experienced, capable, and qualified individuals who can competently and maturely address any allegations of sexual harassment at work. Additionally, it would need regular, effective training for internal committees and employers that view sexual harassment as wrongdoing.

Conclusion

Sexual harassment is a serious offence in India and is dealt with under the Indian statutes through various laws, including the Indian Penal Code (IPC), "the Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition and Redressal) Act, 2013, and the Protection of Children from Sexual Offences (POCSO) Act, 2012."

Under the IPC, sexual harassment is considered a criminal offence, and the punishment can range from imprisonment for up to three years, a fine, or both. The Act covers a broad range of offences, including assault, molestation, and sexual harassment.

Women are protected from "sexual harassment at work under the Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition and Redressal) Act, 2013," which was passed in 2013. According to the Act, all businesses must set up an internal complaints body to handle claims of sexual harassment at work. Failure to comply with the provisions of the Act can result in a fine or imprisonment.

The POCSO Act, of 2012, provides protection to children from sexual offences, including harassment. The Act defines sexual harassment as any unwanted physical contact, advances or gestures that are of a sexual nature and can result in imprisonment for a term of up to three years or a fine.

In conclusion, sexual harassment is dealt with very strictly under Indian law, and several statutes provide protection and redressal for victims. However, implementation and enforcement of these laws remain a challenge, and there is still a need for greater awareness and sensitization among the general public to prevent and address instances of sexual harassment

It is only natural that as the nation develops, businesses and workplaces will do the same, fostering an environment where people are treated fairly and eliminating all forms of discrimination, including gender discrimination. The adoption of POSH is an illustration of law demonstrating India's dedication to safeguarding the fundamental rights of its citizens.

References

1. Articles 14,19 and 21 of the Indian Constitution.
2. Indian Penal Code of 1860
3. The Protection of Children from Sexual Offences Act, 2012
4. Vishaka &Ors. v State of Rajasthan &Ors. ((1997) 6 SCC 241)
5. Mukesh v. State (NCT of Delhi), (Cri) 673: 2017 SCC.
6. The Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition and Redressal) Act, 2013
7. http://www.legalservicesindia.com/article/1905/sexual-harassment-of-women-at-work.html
8. https://www.lawctopus.com/academike/article-21-of-the-constitution-of-india-right-to-life-and-personal-liberty/
9. https://cis-india.org/about/policy-on-prohibition-of-sexual-harassment
10. https://www.indiatoday.in/ india/story/sexual-harassment-at-workplace-1368055-2018-10-15
11. https://unpkg.com/event-source-polyfill@0.0.12/src/eventsource.min.js
12. https://www.icsi.edu/media/ webmodules/ LabourLaws&Practice_June_2020.pdf

Ms. Tanu Arora
B.A.,LL.B,LL.M,(NET)
Research Scholar
Deptt. Of Law
BPS Khanpur, Sonepat

37

IMPORTANCE OF ETHICS IN ORGANISATION

Dr. Arti Chauhan

Abstract- In today's competitive world ethics are being neglected by several organizations in almost all businesses. Several unethical practices have increased in the organizations. Several remedial measures are to be adopted in order to adopt ethical values. Nowadays it seems difficult for the organizations to have balance between profitability and belief system. Mostly people are adopting shortest unethical routes in order to achieve success in a short span of time. It is the duty of leaders in the top most management to adopt ethical principles and must encourage employees to follow the organizational ethics in order to achieve success in the work.

INTRODUCTION - Ethical behaviour in organization means to act in certain ways which are in accordance with the ethical values held by the organizations. The organizations that stress ethics have better image and reputation. Reputation plays an important role in all organizations whether they are commercial,governmental or NGO's.

REVIEW OF LITERATURE - Research suggests that ethical or unethical behaviour in an organization is both combination of both individual characteristics and contextual factors and among these factors organizational culture is one of the key influences.

Meyers-2004 , Fredrick - 1995, Trevino and nelson-2004

Some of the authors even argue the linkage between ethics and world economic crisis. (Mulej et al -2009)

NEED OF STUDY - The need of the study arises from the ethical principles being adopted by the organizations in it's services,product and it's Employees.

SCOPE OF THE STUDY-

1. To study the business ethics being framed in organizational policies.
2. To find out the managers for various departments have thoroughly understood the policies.
3. To know about the proper implementation of business ethics in the organizations.
4. To find out gaps between preparation and implementation of ethical principles.

STATEMENT OF THE PROBLEM- To find out the gap between the formation of business ethics and the actual implementation of ethical principles and to understand about the balance between economic demands in reality.

RESEARCH METHODOLOGY-

1 . Secondary data: The data is collected from various secondary sources like textbooks,journals,articles and various websites.

2. Research by Trevino et al.(1999) showed that in the United States ethical businesses organizations has a rule, clearly communicated ethics guidelines or code of ethics.

3. They have incentive system that are clearly tied to ethical behaviour and promote the achievement of both economic outcomes and non-economic goal. (Trevino and Weaver 2001)

4. According to (Gabler 2006) employees of an ethical business have a sense of responsibility for their actions and for the actions of other. And freely raise issue and concerns without fear of retaliation.

5. In order to remain competitive to attain prosperity and to achieve desired goals,organizations reputation paves the way towards stake holder approval and acceptance.

6. For organization reputation is seen as a measure element along side and included in financial performance and innovation.

7. The organizational reputation is observed in crisis because of the losing of the valuable human resources (Fombrun Van Riel 2004)

8. Unethical behaviour of management and the employees usually causes dissatisfaction of the parties involved scandals and may even lead to the organizations bankruptcy (Robertson 2008)

9. The economic crisis has brought the subject to the forefront about importance of ethical behaviour. Several discussions and researches support the importance of ethical behaviour in organization.

ANALYSIS AND INTRERPRETATION - In today's competitive world organizations are able to witness large number of unethical practices in almost all businesses. Several remedial measures are to be adopt ethical values. Now a days it seems difficult for the organizations to have a balance between profitability and belief system. Mostly people are adopting shortest unethical routes in order to achieve success within less time. Success achieved without ethics does last long only for a short duration. Leaders in the top most management must adopt ethical principles and must encourage employees to follow the organizational ethics in order to achieve success in the work.

Good organizational culture open communication and top management commitment have become important to brig required to bring change in terms of ethics in the organization. Employees look toward their superiors when

they are in dilemma with regard to decision making. Senior managers can be considered as role model. A strong ethical culture is very essential for high ethical conduct in the organization. Rewarding good conduct leads to a strong ethical culture. Ethical conduct of employees depend to a large extent on how they perceive the organizational policies. If they perceive them as unfair they tend to adopt unethical behaviour which they feel is a right thing to do.

Fairness should always be the central theme of all organizational policies. Therefore to set the right precedent unethical conducts whether it occur at higher or lower level should be condemned and strict actions initiated against the wrong doers. Organization need to develop transparency in communication process. The important aspect should always be on presenting the accurate picture about the organization before the employees. Creating awareness about the disciplinary mechanism that deals with impropriety and lack of integrity at all level of organizational hierarchy.

Organizations need to adopt one of the key measure called whistle-blowing process to facilitate anonymous disclosure of malpractices while employees without any fear which might be one of the important step to be undertaken by the organization in order to know about any employees unethical practices.

CONCLUSION : Ethical behaviour is determined by the value of society and legal principal act to support activity along these lines. At the government level the major role of the executive,legislative and judicial organization is to ensure health and safety of its people and provide that all will be protected from negative outcomes which do occur in the society. Legal aspects are often supplemented by code of conduct. These are most often met in groups,such as lawyers,accountants,doctors,pharmacists,and other professional organization such as chamber of commerce.

Every organizational process and system should be so designed in such a way as to propagate core values of the organization. It is only when ethics are incorporated into the everyday conduct of the employees a true ethical culture that is long lasting becomes a reality.

BIBLIOGRAPHY - Meyers, C (2004) Institutional culture and individual behaviour ,creating an ethical environment science and engineering, 10 (2) , 269-276.

Trevino , L & Nelson, K (2004) Managing business ethics straight talk about how to do it right.

Tom Watson (2007) evaluating public relations : A best practice guide to public relation planning , research and evaluation , Kogan Page Publishers.

Trevino L Weaver , GR Gibson D & Toffler , B(1999) Managing ethics and legal compliance what works and what hurts. California Management review, 41 (2) 131-150.

Mulej M,Bozic Nic S,potoc an 'Zenco,Z and S' Trukelj, T (2009)'Social responsibility as a way to systematic behaviour and innovation leading out of the currency socioeconomic crisis .Paper published and presented at 53rd ISSS conference making liveable,sustainable systems unremarkable,12-17 July Brisbane, Australia.

Dr. Arti Chauhan
H.No. P-6
Model Town Extension
Behind Guru Chowk
Rewari (Haryana)
Mob. 91-1274318247

38

A Study of Online Transactions in Banking Sector during Covid-19

Dr. Mamta Arora, Dr. Shailia Kumari

Abstract-

The banking sector in India is under a dynamic stage now due to drastic changes in business environment.Earlier these changes were related to change in structure and operations in working due to multiple factors like – Globalisation and introduction of Computerised system in banking sector.Fast Computerized system has led to all together a new way of working and formalities like reduced paper work,fast services provided by bank. Infact,due to the interaction with various economies their work horizon has also extended globally. Various Branches have been established in different economies to gain expertise of international working.Likewise banking Sector has also not been left free from the effects of Covid-19.Various changes have been experienced in the working of banking during covid-19.

The objective of this paper is to take an overall view of banking industry and to present the changes that can be seen in 21st century banking with respect to its scope, structure, functions and governance. An extensive literature of secondary data is undertaken to the objectives of study.

Keywords: Internet banking,globalization,dynamic etc.

Introduction

Banking can be taken as an economic activity of accepting and saving money owned by public and various entities and then lending out this money in order to have some profit margin.

Banking is "backbone" of monetary movement as it gathers stores and gives credits to government and individuals, families and organizations. It goes about as delegate in connecting savers and financial backers and helps the economy in development and advancement by channelising the assets to their best use. Banks play the main part in arranging and executing monetary arrangements. Banking movement energizes the progression of cash to useful use which thus permits the economy to develop and flourish .Assuming an economy without banking is undeniably challenging as all business exercises will come to end without banking activities. From organizing finance for family to purchase vehicle to benefiting enormous measure of credit for organizations to contribute, banking area has been doing ponders for the world economy since quite a while.

Anyway with the progression of time the areas covered by banking business have broandened and presently a ton of new and extra services are provided by banks. Banking services are not just limited to accepting deposits and advancing loans, however has stretched out to issuance of Mastercards, giving safe care of significant things, ATM services, storage spaces, and online exchange of assets the nation over and world.Here through this paper we will investigate the new financial issues by deep study from early framework to present day system.

PHASES OF BANKING

The progression in the Indian financial framework can be arranged into three stages:

1. Before 1947
2. From 1948-90
3. 1991 and then present

First stage: It is set apart by presence of an enormous number of banks.

The main bank was "Bank of Hindustan" which was laid out in 1770 however it was sold in 1832. Numerous different banks came and dissolved, yet some were succesful like Punjab National Bank, Bank of India, Imperial Bank of India which was subsequently renamed as State Bank of India. In April 1935 Reserve bank of India was originated.

Interpretation

1. The majority of the banks were small in size and dissolved too.
2. Services provided by banks were quite fundamental.
3. Public lost its confidence due to failure of banking system.

Second stage: This stage was set apart by Nationalization Of Bank. 14 business banks were nationalized on 19 July 1969 and 6 additional business banks were nationalizes in April 1940. Some pinnacle level financial establishments were likewise arrangement to focus on the particular prerequisites from various areas.

Model : NABARD, EXIM, SIDBI and so on.

Examination: 1. Public confidence was build up because of expansion in effectiveness in the financial framework.

2. Banking exercises assisted various areas with developing which at last prompted financial development.

Third stage: This phase initiated with economic reforms that brought some freedom in economic policies. Focus was shifted to provide banking services to large portions of asses that were still untouched. Banking area began expanding its branches to cover a significant area of population. Banking area began upgrading monetary consideration in the management of RBI by setting up paying banks and little banks.

Interpretation: 1. After introduction of New Economic Policy

1991 changes in financial area were at great level.

2. Banking area began working on its tasks by attempting to satisfy the globally acknowledged guidelines of execution.

3. Improvement in approach structure was Supported by recommending prudential standards and steps were taken to lessen the extent of nonperforming resources.

4. To speed up the process of to banking services to individuals, shift was put to online services.

5. Banking area began expanding its area by changing over themselves into Clubbing with other bamks. It implies banking area clubbed different facilities to be given to clients. For instance: they became protection brokers , stores members, representatives, speculation brokers, shipper financiers, portfolio experts, brokers to issue, lead supervisors, financiers,counselors, underwriters, mutual funds agents, institutional financial backers and so on.

6. They began offering types of assistance like DEMAT account, ATM, net banking, online transactions facilities, debit and credit cards, RTGS, NEFT, explorers Check, satisfying standing requests and so on alongside their fundamental services of deposits and advances.

ESSENTIALS OF MODERN BANKING SYSTEM

Modern banking system brings a new set of threats and opportunities. Eager buyer cravings for omni-channel exchanges, elevated standards around client experience, and low degrees of tolerance and brand dependability have placed most counts on the back foot. These are the four basicrequirements that are expected to be satisfied by current financial sector:- The first is Comfort. Sounds sufficiently basic however you wouldn't believe the number of banks that contemplate what their frameworks can do as their beginning stage, as opposed to understanding what their clients really care about. Banking services need to work around the buyer's busy life - not the reverse way around.

That implies looking at what clients need to accomplish according to their viewpoint. Those that can't be adaptable in adjusting their services to suit buyers convenience, risk imperiling long term achievement and forfeiting portion of the overall market. It is just significant.

The second consideration is Importance. The goal lines of client commitment moved quite a while back. Correspondence should be customized and applicable according to the needs of client. Buyers anticipate that their banks should know them as individual clients, with attention to their necessities and in any event, expecting their future prerequisites. This includes the need to change to ongoing managing an account with boosted self-administration that is supported with customized, custom-made exhortation when required.

The third essential is responsiveness. The greatest hindrance banks face since they're commonly working with divergent frameworks in a storehouse branch organization.. Many internal processes simply don't reflect current business need Which means they must change. But it's not just the systems that need to adapt.

People must as well. There must be a consistency of message and service delivery, along with being empowered to do so. Employees need access to all of the latest and most relevant data if they are to respond accordingly. I think we'll see much tighter integration on this front moving forward as sales and customer service continue to converge.

The last fundamental is dependability. In an undeniably divided industry area (think disintermediation from any likes of Facebook, Apple and PayPal pursuing the mobile wallet share), banks essentially can't stand to have a problematic standing. Late exploration from The Economist Intelligence Unit found that shoppers expect a similar nature of involvement as large Internet organizations give. Dependability is at the actual center of value insight.

RECENT BANKING SERVICES

ATM's - An electronic machine which permits the client to pull out and stop cash,take care of bills, demand articulation and other financial exchanges. The client requires ATM Card and ID no. to get to the machine. Some ATM cards are additionally charge cards which can be utilized in shops and different business sectors.

Phone Banking- Telephone Banking office is made accessible with the assistance of a voice reaction framework (VRS). It is perhaps the most famous item. It permits the client to enter stage by means of phone. Clients can play out various exchanges from their office or home. Offices presented by telephone banking are data on balance, Check book order. Cash move, questions on new plans etc.It is otherwise called "TeleBanking" Electronic Fund Transfer(EFT) — It moves cash starting with one account to the next. In this framework, the sender and the collector of funds, might be situated in various urban communities and may try and save money with various banks.

Installment of insurance payment, contract portions are likewise electronically moved from the bank to particular accounts occasionally.

Mastercard (Credit card)- A Credit card is an installment card provided to clients to empower the cardholder to pay vendor for goods and services in view of the cardholder's guarantee to the card guarantor to pay them for the sum in addition to the next concurred charges. It contains a method for ID, like signature and a little photograph. These cards

empower the holder to purchase labor and products on layaway from various outlets. The bank gets the bills from the dealers and pay in the interest of the client. The bank charges from the cardholders for the services. It saves the cardholder from hazzlement of carrying cash with him when he goes for shopping. Debit Card- - A Debit card is an installment card that consequently deducts cash from a clients bank balance to pay for a buy. It wipes out the need to carry cash. Each time an individual purposes the charge card, the trader, can get the cash moved to his account from the bank of the buyer, by charging a same amount of purchased item from the card. To get a debit card, an individual needs to open an account with the responsible bank.

Demat Account — Dematerialised type of coverage have been presented by the Securities and Exchange Board of India to direct and to work on stock money management. The investor opens a account called "demat account" with added members. Banks now a days are going about as depository members by getting themselves enlisted with SEBI. These DP execute business through electronic media. They get the offers in an electronic structure. These DP are connected with accounts that are liable for giving Scripless trading to investors. One of the significant advantages is that, it requires less administrative work, no loss of share certificates, no terrible core conveyances, and lower exchanges cost etc. E-Banking- - Online banking is doing banking business electronically by having web association and a functioning PC. It is an advantageous and quick type of banking that can be benefited by clients through their banks. The total information base that the bank has about the client's record is accessible to the client at his terminal. Continuous settlement services are given by banks on 24 *7 premise. Electronic Data Interchange — It is the electronic trade of business data utilizing a normalized design, an interaction which permits one organization to send data to another organization electronically instead of manual data. Businessfirms directing business electronically are called exchanging Partners. The exchange of data connected with business exchange through the banking system,also known as monetary EDI, incorporates installment orders, settlement data, articulations of record and message connected to narrative payments. It will be gainful in regions like stock management, transport and dissemination and cash management.

Digital Cash — Cyber Cash Secure Payment System is a full framework for going through with monetary exchanges on the Internet. It acknowledges both charge card installments and money/coin exchanges. It is an extraordinary answer for any site that needs to acknowledge electronic installment for goods and services. It is a safe component to exchange between clients, shippers, and banks. Since it offers protected, effective and economical conveyance of payments, across the web , it has been portrayed as the Federal Express of the web installment business. The primary objective of digital money is to work with monetary transactions and traders to give an option to exchange on the web. E-Checks- - An electronic check is an electronic duplicate which is a filtered picture of a genuine check, that is moved by email. Notwithstanding the check's 'genuine' signature, the exchange should be carefully marked utilizing the source's private key to verify the exchange.

Real-time gross Settlement- - Real-time gross Settlement (RTGS) system is an funds move framework where cash move happens starting with one bank then onto the next consistently and "gross" premise. Settlement in the "ongoing" implies that the exchange happens very quickly. "Gross settlement" signifies the exchange is chosen coordinated basis.The least amount to be transmitted through RTGS is 2 lakh. NEFT- - National Electronic Funds Transfer is a cross country installment framework working with coordinated reserves move. Under this Scheme, people, firms and corporates can electronically move funds from any bank office to any individual, firm or corporate having an account with some other branch office in the nation taking an interest in the Scheme.

BANKS AS CONGLOMERATE

Conglomeration is something when unique highlights are assembled together. Because of the far and wide interest by clients and with the speed of present day situation, banks have transformed themselves into "aggregate" and have begun offering a wide range of types of assistance to serve their clients in a helpful way. A portion of the jobs embraced by banks are referenced beneath:

insurance AGENTS: Banking area entails the part of protection specialists too. They offer a wide range of insurance contracts like general insurance, fire insurance , marine insurance,life insurance etc.

PORTFOLIO CONSULTANTS: In order to encourage financial investors with respect to most ideal choices to put their cash in, banks have begun acting as their guide. Banks currently enlist specialists who prompt clients in regards to the best open doors accessible in the market to yield the greatest measure of return.Guarantors AND LEAD MANAGERS: Banks act as financiers and lead directors by aiding another organization in its underlying public proposition. Banks help organizations through their total

course of floatation and buy their shares in the event that minimum subscription condition isn't met.

REQUIREMENTS FOR A MODERN BANKING SOLUTION

1.Completely versatile

A decent financial solution needs to access the cell phone from any area.

Regardless assuming riding on the train to a conference or sitting at home - clients ought to have the option to check their records anytime and get outlines of all exchange by basically utilizing their cell phone.

2. Altogether advanced

The times of manual marks or individual participation expected for ID are numbered. The total financial interaction needs to run completely carefully. Easy services,such as video distinguishing proof for enlistment are key elements for a modern banking soloution.

3. Available to everybody An undeniable record for everybody paying little mind to progress in years, beginning or pay. Each client ought to have the chance to make a record for cash move and standing requests without tedious credit scorings and individual verifications.

4. Something other than Banking arrangements are not just for fundamental financial exercises. An advanced assistance ought to make a stride fresh and offer added esteem by including highlights, for example, shared (P2P) peer-to-peer exchanges .

5. Overall acknowledgment

As straightforward as it might sound, it is fundamental for a cutting edge financial answer for work overall by including a computerized and actual Mastercard that is all around acknowledged. The assistance shouldn't just permit the client to withdraw cash from ATM's but also ensure global payment at point-of-sale and on the web.

CONCLUSION

Indian financial area has seen a few underlying changes every now and then. India currently has an advanced financial framework, favorable administrative climate and sound administrative framework. Banks have become productive and sound which make them best on the planet. Innovation driven banks are delivering top class services to the clients. It is similarly fundamental to instruct the clients to go at standard with the presentation of creative items. To contend and prevail in the financial market, new drives and advancements, new methodologies, new conveyance instruments and capacity to strategically pitch items are basic. Simultaneously, banks ought to conform to clients and become more client centered with legitimate emphasis on relationship management. Banking in India is ready for invigorating times ahead.

BIBLIOGRAPHY

Bhalla,V.K.(2002). Management of financial services. New Delhi:

Anmol Publications Private Limited.

Bhole,L.M.(2004). Financial Institutions and Markets: Structure,Growth and Innovations.(4th ed.). New Delhi. Tata McGraw Hill Publishing Company Limited.

Natrajan,S. Indian Banking. S Chand Publications

Reference on banking issues from Adda 24*7

References from Research paper on banking by School Of Management Sciences https://www.nurun.com/en/our-thinking/reinventing-the-bank/the-21stscentury-bank-rethinking-and-transforming-financial-institutions/Mehta, D. R. and H. Fung. 2003. International Bank Management. Blackwell Publishing

Dr. Mamta Arora
Assistant Professor
Gateway institute of Engineering and Technology (GIET),Sonipat
Dr. Shailja Kumari
Assistant Professor
Gateway institute of Engineering and Technology (GIET),Sonipat

39

A STUDY OF CONSUMER ACTIONS CONCERNING THE ONLINE PURCHASE OF AYURVEDIC SKIN CARE PRODUCTS

Sweety Rani

ABSTRACT

Customers are seen as the market's kings. Studying consumer behaviour is the main objective of the current environment. The consumer, who is recognized as the payer, user, and buyer, has a distinct and important function. The purpose of the study is to examine the variables that affect customers' decisions to buy Ayurvedic skin care products as well as their inclinations toward certain brands of these goods. The research is descriptive. The researcher has chosen quantitative data collection to conduct the study. A survey was conducted by distributing structured questionnaires. The respondents within the sample were selected using a simple random technique. The collected data were analyzed and thereafter, using descriptive statistics, correlation coefficients, and regression analysis were run with SPSS 25 version to test the hypothesis. Ayurvedic products have a great influence over non-Ayurvedic products because people nowadays prefer Ayurvedic products as compared to non-Ayurvedic products. It is because in recent times it has been observed that there has been an exponential growth of Ayurvedic skin care products in the market replacing non-herbal/ayurvedic products. The prime limitation of the study was the timescale and budget. This study is conducted via primary and secondary analysis, the researcher must develop proper questionnaires and select appropriate options for questions to collect required information.

Keywords: ***Ayurveda, Consumer Behaviour, Online Purchase, Skin Care Products.***

1.1 INTRODUCTION

The consumer behaviour of people in India is changing at a rapid rate regarding cosmetic and skin care products. The perception of Indians is getting oriented toward Ayurvedic products as they believe that Ayurvedic products are more effective for the skin as it does not contain any kind of chemicals or artificial things. As non-Ayurvedic products contain chemicals and artificial materials people think that it might negatively affect their skin and could be harmful. Skin care plays an important role in our overall health and appearance. After all, our skin is the largest organ of our body. Skincare primarily focuses on the delicate areas on your face, neck, and chest, with regimens focused on cleansing, moisturizing, and treating specific conditions. If we see the brand preferences of consumers, there are many reputed brands in the market. In that brand, Patanjali promises to provide customers with pure Ayurvedic cosmetic products to tap the growing favourability of Ayurvedic products.

1.2 RESEARCH PROBLEM

To understand the consumer buying behaviour towards online shopping of Ayurvedic skin care products for Male and Female consumers in the Rural and Urban sector. The study also looked into the fact whether income patterns have an impact on the consumption pattern of Ayurvedic products.

1.3 REVIEW OF LITERATURE

Sujatha. K, Amala. S (2018) their study highlights the satisfaction of consumers towards Himalaya Skincare Products in Tiruchirappalli Town. The focal objective of this study is to study the respondents' awareness and highlights the factors influencing the respondents' level of satisfaction towards Himalaya skin care products. Finally, their study reveals that most people want to purchase the best skin care products.. **Rajasekaran and Marimuthu (2018)** they sought to investigate the purchasing patterns of food and herbal goods in Tiruppur. The purpose of this study was to examine and analyze how different factors may affect consumers' decisions to purchase herbal food products. According to the study's findings, it is implied that consumers looking to purchase herbal items are looking for a lot of information. The makers of herbal products should thus concentrate on that. The study revealed that women are more likely than men to be drawn to and persuaded to purchase herbal products. **Vishal Gupta (2020**) This study was conducted on the Buying Behaviour towards Herbal Products & talks about the marketers should properly promote Herbal Products among male youth through advertisements and Periodical awareness campaigns-fix reasonable prices for herbal products and conduct product upgradation concerning demands of male youth. **On the other hand, another research aims to investigate how consumers in India choose between Maybelline and Lakme and other cosmetic brands, with a focus on Coimbatore, and compares the two items to determine which is superior. This study reveals that Customers who are more concerned with quality are more likely to buy Ayurvedic goods. (Aarthi & Atchaya.2020).**

Chhetri (2021) conducted a study on the topic **"Consumers' attitudes towards cosmetic products in Chitwan, Nepal" The primary focus of this study is on how numerous variables, including age, employment, marital status, and education, might positively affect purchases of cosmetics. This study reveals that the consumer understudy's attitude about cosmetic items is unaffected by the aspect of money.**,

in this study he pointed out customer satisfaction, customer loyalty, non-irritating natural herbals, skin-friendly ingredients, and chemical-free to make best domestic products. **(Yaunfei Lv .2022)**

1.4 RESEARCH GAP

This study, "A Study of Consumer Behaviour Towards Online Shopping of Ayurvedic Skin Care Products," aims to investigate consumer behaviour with a particular emphasis on technology adoption, operation, procedures, and benefits. It primarily focuses on the factors that influence consumer brand preferences and behaviour when it comes to online skin care product shopping, specifically with regard to the Indian market. No earlier research along these lines was done. The current study is undoubtedly helpful.

1.5 OBJECTIVES OF THE STUDY

1. To identify the influencing factors of consumer buying behaviour towards ayurvedic skincare products.
2. To study the Brand preferences of consumer in purchasing of ayurvedic skincare products.

1.6 HYPOTHESIS OF THE STUDY

1. Hypothesis for the first objective.

- **Ho:** There is no impact of the Age of the consumer on Influencing Factors of buying behaviour towards ayurvedic skincare products.
- **H_1:** There is a significant impact of the Age of the consumer on Influencing Factors of buying behaviour towards ayurvedic skincare products.

2. Hypothesis for the second objective

- **H_o:** There is no impact of income on brand preferences towards buying Ayurvedic skincare products.
- **H_1:** There is an impact of income on brand preferences towards the buying of Ayurvedic skincare products.

1.7 METHODOLOGY OF THE STUDY

The present study is descriptive and analytical in nature. The study is mainly based on primary and secondary information sources.

Survey Design: A structured questionnaire was developed to gather information and used the simple random technic to collect primary data.

Sample: The size of the Sample is 125,

Data Collection: The survey was administered online and offline, allowing participants to respond conveniently. The primary data have been collected from the responses from 125 respondents.

Data analysis: SPSS used to analyze the data. Some of the data were analyzed with mean and standard deviation values, simple linear regression and correlation.

1.8. SCOPE

There is tremendous scope for the growth of Ayurvedic products both in rural and urban areas. The companies should look into promotions both online and offline to highlight the benefits of Ayurveda to consumers as well as to increase their profit margin.

1.9 LIMITATIONS

The Limitation of the study is it only looks into a few parts of India. There is great scope to understand the impact of Ayurveda products both in India and Abroad.

There were limitations also in time to cover the study in depth.

1.10 ANALYSIS OF DATA AND INTERPRETATION

INTRODUCTION:

Consumer behaviour is a vital aspect of understanding customers' preferences, purchasing habits, and decision-making processes. To gain insights into consumer behaviour, a survey was conducted among a sample of customers. This study presents the findings of the survey analysis in tables and graphical form, providing a visual representation of key trends and patterns observed.

Table No 1: SOCIAL DEMOGRAPHIC PROFILE

	Category	No. of Respondents	Percentage
Gender	Male	22	18%
	Female	103	82%
	Grand Total	**125**	**100%**
Age	18-30	90	72%
	31-50	24	19%
	50 +	1	1%
	Under 18	10	8%
	Grand Total	**125**	**100%**

Table No 1: SOCIAL DEMOGRAPHIC PROFILE CONTINUED….

	Category	No. of Respondents	Percentage
Occupation	Assistant Professor	1	1%
	Home Maker	2	2%
	Make-up Artist	1	1%
	Professor	1	1%
	Working Professional	44	35%
	Others	76	61%
	Grand Total	**125**	**100%**
Income per Month	10000-20000	73	58%
	20000-30000	14	11%
	30000-40000	9	7%
	40000-50000	9	7%
	50000-60000	4	3%
	60000-80000	3	2%
	80000 and more	13	10%
	Grand Total	**125**	**100%**

Source: Primary Survey

Table No 2: The Factors Influencing on Purchase of Ayurvedic Skin Care Products

Various Factors	No. of Respondents	Percentage
Brand reputation	20	19%
Buying Capacity (Income)	13	12%
Ingredients	19	18%
Online reviews	12	11%
Packaging	5	5%
Price	17	16%
Recommendations from friends/family	15	14%
Promotions/offers	7	6%
G - Total	**108**	**100%**

Source: Primary Survey

Table No 3: Mode of Purchase of Ayurvedic Skin Care Products

Sl. No	Platform	No. of Respondents	Percentage
1	Official brand websites	11	7%
2	Online marketplaces (e.g., Amazon, Myntra, Nykaa, purple, etc.)	32	21%
3	Physical stores (e.g., pharmacies, supermarkets)	67	43%
4	Specialty Ayurvedic stores	45	29%
	G-Total	**155**	**100%**

Source: Primary Survey.

Table No. 4: Brand Preferences of Consumers

Different Brand	No. of Respondents	Percentage
Ayurvedic products have no side effects that are one of the attributes I would like in it	1	0%
Biotique	29	11%
Dabur	34	13%
Forest Essentials	6	2%
Himalaya	64	24%
Just Herbs	10	4%
Kama Ayurveda	4	1%
Mama Earth	45	17%
Others	16	6%
Patanjali	56	21%
Regional Products	6	2%
G-Total	**271**	**100%**

Source: Primary Survey.

Table No 5: Benefits/ Reasons for Purchase of Ayurvedic Skincare Products

Benefits/ Reasons	No. of Respondents	Percentage
Ayurvedic certifications	39	15%
Holistic approach to skincare	31	12%
Natural ingredients	99	37%
Personalized products	21	8%
Sustainable/eco-friendly packaging	30	11%
Traditional remedies	48	18%
G- Total	**268**	**100%**

Source: Primary Survey

Table No. 6: Preferences for Ayurvedic Products

Product Category	No. of Respondents	Percentage
Hair Care Products	23	18%
Herbal Supplements	37	30%
Home Grown	7	6%
Skincare products	58	46%
G- Total	**125**	**100%**

Source: Primary Survey

Regression Analysis on the first hypothesis

MODEL SUMMARY[b]				
Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate
`1	.109[a]	**.012**	.008	2.401

a. Predictors: (Constant), Age

b. Dependent Variable: Influencing factors

The coefficient of determination is .012 therefore, about 1.2% of the variation in influencing factors data is explained by age. The regression appears to be very weak; the value will generally range between 0 and 1. A value of < 0.3 is weak, a Value between 0.3 and 0.5 is moderate and a Value > 0.7 means a strong effect on the dependent variable. Hence, there is a strong effect on the dependent variable-Income. Hence, the present study fails to accept the Null hypothesis i.e. There is a strong impact of the Age of the consumer on Influencing Factors of buying behaviour towards ayurvedic skincare products.

ANOVA[a]						
Model		Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
1	Regression	16.778	1	16.778	2.910	.089[b]
	Residual	1401.247	243	5.766		
	Total	1418.024	244			

a. Dependent Variable: Influencing factors

b. Predictors: (Constant), Age

coefficients[a]						
Model		Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t	Sig.
		B	Std. Error	Beta		
1	(Constant)	3.011	0.651		4.626	.000
	Age	.494	0.29	0.109	1.706	0.089

a. Dependent Variable: Influencing factors

From above**, the regression equation is Influencing factors = 3.011- (.494) age**

Regression on Second Hypothesis:

Model Summary[b]				
Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate
1	.056[a]	**.003**	-.001	2.053
a. Predictors: (Constant**), Brand**				
b. Dependent Variable**: Income**				

The coefficient of determination is .003 therefore, about 0.3% of the variation in income is explained by Preference of Brand. The regression appears to be very weak; the value will usually range between 0 and 1. A value of < 0.3 is weak, a Value between 0.3 and 0.5 is moderate and a Value > 0.7 means a strong effect on the dependent variable. Hence, there is a moderate dependent variable - Income. Hence, the present study fails to accept the Null hypothesis i.e. There is a moderate impact of income on brand preferences towards buying of ayurvedic skincare products.

ANOVA[a]						
Model		Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
1	Regression	3.531	1	3.531	.838	.361[b]
	Residual	1138.101	270	4.215		
	Total	1141.632	271			

Coefficients[a]						
Model		Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t	Sig.
		B	Std. Error	Beta		
1	**(Constant)**	**2.35**	0.239		9.824	0
	Brand	**0.042**	0.045	0.056	0.915	0.361

a. Dependent Variable: **Income**

From above, the regression equation is ***Income = 2.350 – (.042) (Brand).***

1.11 MAJOR FINDINGS OF THE STUDY

From the social demographic profile of the respondents.

- It is clear that 18% of the respondents were male and 82% of the respondents were female. So, the **result is female-oriented**.
- It is noticed that 72% of the respondents belong to the 18-30 age group. Hence study reveals that **middle-aged people have more health conscious towards ayurvedic Skin Care Products.**
- It is clear that 35% of the respondents were **Working professionals**. Hence working professionals are more conscious of the usage of Skin Care products.
- The study further reveals that 58% of respondents were of having their monthly income of between Rs.10000 to Rs.20000. hence low-income group people want to spend their monthly income on ayurvedic skin care products.
- The study found that 19% of the respondents agreed with Brand reputation influenced them to buy these products. 12% of respondents were influenced by the Buying Capacity and 18% of the respondents were influenced by the ingredients. The majority of the consumer have an attitude towards the Brand reputation of ayurvedic Products in the Market.
- Around 21% of the respondents were purchasing ayurvedic skin care products from online marketplaces e.g., **Amazon, Myntra, Nykaa, and Purple,** and 7% of the respondents were purchasing some of these products through official brand websites. If we see online shopping, that was at a moderate level in the market. These online shopping companies still promote their trading activity to improve their profit margin.
- The study further reveals that 24% of the respondents preferred **Himalaya skin care** products for their Brand reputation. 21% of respondents preferred the **Patanjali Brand**. If compared to Mama Earth, Dabur, and other brands majority of people have attracted by Himalaya and Patanjali Skin Care Products.
- The study found that around 37% of the respondents preferred **Natural ingredients** and finally 18% of the respondents prefer to purchase Traditional remedies among other preferences. It shows the majority of consumer still prefers Ayurvedic skin care products because of their natural ingredients.
- The study also reveals that 46% of the respondents preferred Skin Care Products among other products.

1.14 CONCLUSION

Ayurveda is one of the oldest, most widely accepted, and highly appreciated systems of medicine. It should reach every man for their health. There is a need for educating the consumers and create awareness about Ayurvedic products.. The present study aimed at studying the buying behaviour of Ayurvedic skincare products. The study portrayed very interesting results and thus it is concluded from the study that **female customers are most attracted by the ayurvedic skin care products and influence** to buy these products. The study proved that there is a significant correlation between income level on the buying behaviour of Ayurvedic skin care products.

It could be concluded from the study that buying behaviour of female customers particularly **Working Professionals** more influenced.

1.15 SCOPE FOR THE FURTHER RESEARCH

However, due to study limitations, a larger sample size was not possible, so specific conclusions could not be drawn from the data. Instead, a closed-ended questionnaire should be used to limit the number of responses in order to obtain accurate data. Therefore, this study would like to recommend that future researchers look into this issue more thoroughly, using a larger sample size and a selection of specific places..

REFERENCE:

1. **Arya. V, Thakur. R, Kumar. S, Kumar. S (2012)** Consumer Buying Behaviour towards Ayurvedic Medicines/ Products in Joginder Nagar – Survey, Ayurpharma Int. J Ayur Sci., vol. 1, No.3, Pages 60-64.
2. **Aarthi, M.D. & Atchaya, G.M. (2020)** Comparative Analysis of Cosmetic Products Maybelline and Lakme in Coimbatore, *Parmana Research Journal,* 3(10), 103-107
3. **Anjana, S. S. (2018)** A study on factors influencing cosmetic buying behavior of consumers. *International Journal of Pure and Applied Mathematics*, *118*(9), 453-459.
4. **Chan, Y. Y., & Mansori, S. (2016**) Factor that influences consumers' brand loyalty towards Cosmetic products. *Journal of marketing management and consumer behavior*, *1*(1).
5. **Chhetri, D.A(2021**) Consumer attitude towards cosmetics products in Chitwan, Nepal, *Nepalese Journal of Management Research,* ISSN 2738-9618 (Print), ISSN 2738 -9626 (Online) Website: http://balkumaricollege.edu.np/journal Volume: 1 Issue:

1 January 2021, Page No. 70-75

6. **Deepa. V, Dr. Nalina K.B (2019)** Market Analysis of Ayurvedic Beauty Products Journal of *Emerging Technologies and Innovative Research (JETIR)*, www.jetir.org (ISSN-2349-5162) Volume 6, Issue 1.
7. **Edwin, D.M., Mohamed, S.D. & Vergara, J.M. (2020)** A Study on Consumers' Brand Preferences Relating to Specific Cosmetic Products among Omani Women, *Saudi Journal of Business and Management Studies,* 418-427
8. **Gaur P (2017)** A Study on Consumer Attitudes and Motivation to use herbal products in India: application to Ayurveda.University of Ljubljana.
9. **Gupta. P and Misra. P(2017)** A Study on Consumer Buying Behaviour for Personal Care Products, *International Journal of Trade and Commerce- IIARTC*, Volume 6, No.1 pp, 145-153, ISSN- 2277-5811 (Print), 2278-9065 (Online).
10. **Gupta. V (2020)** Green Consumption: A Study of Buying Behaviour towards Herbal Products *International Journal of Marketing and Business Communication* 9 (3 & 4), 14-20 http://publishingindia.com/ijmbc.
11. **Isamilamiya and Kumar P. Ashok (2018):** Herbal cosmetic products towards consumer buying behavior in India An Overview" in Tamil Nādu, *International Journal of Scientific Research and Reviews*, ISSN: 2279-0543
12. **Joshi Dr. Ravi (2020):** Skin Care in Ayurveda, *World Journal of Pharmaceutical and Medical Research***,** ISSN 2455-3301, 2020, 6(8), 64-67.
13. **Kumar Hemant, Bulsara and Yadav Nidhi (2018):** A Study on the current scenario of consumer buying behavior towards ayurvedic medicines in Gujrat*, IOSR Journal of Business and Management (IOSR-JBM),* e-ISSN: 2278-487X, p-ISSN: 2319-7668 PP 31-35
14. **Lv Yuanfei (2022)** Analysis of Customer Behavior of Domestic Skin Care Products, *Frontiers in Business, Economic, and Management***,** ISSN: 2766-824X|Vol. 5, No.1, 2022.
15. **Nagananthi, T (2016)** Consumers' Brand Preference And Buying Behaviour Of Cosmetic Products At Coimbatore City, *Intercontinental Journal Of Marketing Research Review,* 4(1),12-20
16. **Naresh, B (2016)** Impact of Perception on Consumer Purchase Behavior of Herbal Product in India, *PARIPEX - Indian Journal Of Research,* 5(6), 233-236
17. **Parmar, S. M. (2014).** A study of brand loyalty for cosmetic products among youth. *International Journal for Research in Management and Pharmacy*, *3*(6), 9-21
18. **Poonam Rawat and Kala Dr. Parikshit (2021):** "A Study of Women's Perception and Preferences towards Patanjali personal care products" *Journal of University of Shanghai for Science and Technology,* ISSN: 1007-6733.
19. **Princy. J, Keerthanamala. R and Parasakthi.D(2022**) A Study on Customer Attitude and Preference Towards Baby Products in Coimbatore City, *International Journal of Multidisciplinary Educational Research,* Sucharitha Publication, ISSN:2277-7881, Volume:11, Issue:6(4)
20. **Rajasekharan. B.D. and Marimuthu. P (2018)** A Study on Buying Behaviour of Herbal Products in Tiruppur District, *Journal of Emerging Technologies and Innovative Research (JETIR)* ISSN-2349-5162, Volume 5, Issue 11
21. **Rawat, P. & Kala, P.D.(2021)** A Study of Women Perception and Preferences towards Patanjali's Personal Care Products, *Journal of University of Shanghai for Science and Technology,* 7(23), 591-610
22. **Richa Misra, Sonali Singh, Renuka Mahajan (2020)** An Analysis on Consumer Preference of Ayurvedic Products in the Indian Market, International Journal of Asian Business and Information Management Volume 11 Issue 4
23. **Shinde, D. T., & Gharat, S. J. (2017).** Product positioning of Patanjali Ayurveda Ltd. Pune research discovery, 1(3), 1-6.
24. **Sujatha. K, Amala. S (2018)** A Study on Consumer Satisfaction Towards Himalaya Skincare Products in Tiruchirappalli Town, *International Journal for Research in Engineering Application & Management (IJREAM)* ISSN: 2454-9150 Vol-04, Issue-09.

Sweety Rani W/O Mr. Loveleen Nassa,
152/9, Kayasthan Mohalla,
Near Gulab Rewari Marka, Rohtak (Haryana). Pin-124001
Mobile No. 8059114212

40

Critical appreciation of Et to Brute: William ShakespeareET TO BRUTE

Dr Arti Sharma

ABSTRACT

William Shakespeare, lovingly called the household God by the lovers of English Literature, has written mainly four tragedies, Julius Caesar is considered to be the master piece among his all plays. It is based on political rivalry. Since the theme of this play is universal, it holds good for all times and all ages. Its so may phrases have become aphorism and often quoted. 'Et to Brute' is one of them.The context of this remark is very heart touching and pathetic in itself. Caesar is considered to be greatest in Rome after conquering Pompy. He is greatly loved, respected and honored by the people of Rome. His popularity grows many fold overnight. As we know for the jealous, envious and conceit heart,' fair is foul and foul is fair. Cassius is jealous of his growing popularity. He plots a conspiracy of Caesar's assassination. Markus Brutus who is considered to be Caesar's soul also stands against him. Caesar loves him from the core of his heart. He never thinks a slight that Brutus would also plot a conspiracy against him.Quite unknown to the conspiracy against him Cesar gets ready to go to Senate. His wife Calpurnia prevents him from going to the senat. She requests him by referring her horrible dream.... "Caesar. I never stood on ceremonies,Yet now the fright me: There is one within, Besides the things that we have heard and seen, recounts most horried sights seen by the Watch...O Caesar these things are beyond all use, and I do fear them."But Caesar is overconfident and is very proud of his power and strength. His overconfidence muffels his wit and he tells"What can be avoidedWhose end is purposed by the mighty Gods?Yet Caesar shall go forth: for these predictionsAre to the world is general to Caesar. "At this calpurnia tells him that when beggars die, there are no comets seen,The heavens themselves blaze fourth the death of princess. But Caesar rejects her all request by saying, " Cowards die many times before their deaths, The valient never taste of death but once." In this way he laughs at the way of the world by saying that , "Of all the wonders what he has heard or seen it seems most strange to him that man fears death though he does know that it is a necessary end. It can't be avoided or postponed. Here starts a big clash between Calpurnia and Caesar which always takes place between our mind and soul. Men ultimately listens the call of his mind that is devil and forces him to pluck the forbidden fruit by literally true logicb-It is better to reign in the hell than to serve in the heaven.Calpurnia's emotional appeal enfluences Caesar so impressively that he gives up his idea of going to the Senate.He assures her that he would send a message through Mark Antony about this. What is allotted can't be blotted. In place of Antony Decious Brutus comes and he misinterprets Calpurnia's dream by saying that the dream is fortunate and it will glorify the personality of Caesar. Actually he was sent by conspirators to fetch Caesar to the senate. He conceals his conceit very cleverly and turns tide. He tells him if he does not attend the senate they would laugh at him by saying unless Calpurnia shall meet with better dreams Ceasar would not do any work. At this Caesar fickle mind changes the decision and he tells,"How foolish do your fears seem now Calpurnia?I am ashamed I did yield to them. Give me my robe for I will go."Meanwhile, all the conspirators associated with Markus Brutus come to Caesar to fetch him to Senate. Caesar becomes very happy to see Markus Brutus and he tells,"Good friend go in, and taste some whine with me.And we (like friends) will straight way go together."At this Brutus feels great remorse and repentance at his heart. He thinks what a faith Caesar has in him though he has come to kill him. He has come to him as a foe and he takes him his dear friend. His heart brust with repentance and speaks out,"That every like is not the same, O Caesar;The heart of Brutus earns to think upon." Though his soul repents but a deceitful mind listens to his mind more than to his soul.Keeping all requests of Kalpurnia aside Caesar goes to Senate. The conspirators do know that Ceasar is as firm as rock to his decision ,they deliberately come to him and request him to withdraw the banishment of Pubilius Cimber. They request him to change his order and allow him to live in Rome. But Ceaser says that his decision is as fixed as the pole star. Their flattering can not change the mind of ordinary men but,he is denial. " But I am constant as the Northern Star,Of whose true fix'd, resting quality,There is no fellow in the Firmament. "Caesar becomes very surprised when Markus Brutus also requests him to reconsider his decision. Since he is well known to the nature of Caesar , still he asks for such favour.He becomes startled. He exclaims, " What Brutus?"This is the indication of inevitable danger but Caesar is quite unknown to it. Casca comes forward and he tells, " Speaks hands for me." He stabs Ceasar first then other conspirators start stabbing. Brutus gives final jolt to Caesar' s heart. When Caesar sees Brutus stabbing him with other conspirators his heart shatters into pieces. Overwhelmed with grief and agony he speaks out, " Et tu Brute?"These three words uttered by Ceaser carry much more pain, shock and heartbreak than any other words in English literature. The statement is very short but it has very deep meaning in itself.

The treachery done by our dearest and nearest one is much more painful than the wound of dagger .It gives incurable shock. The dagger assaults our body but the betrayal of our loved one assaults our soul from its bottom. We start feeling repentance and remorse over the way of the world. Whom to beleve, whom not to believe. There is no art in this world to read what is going on in other's mind. The utterance," Et tu Brute", stands for all betrayal acts committed by the people whom we take most trustworthy, loyal and have high regards for them at our heart.On the whole , the final utterance of Julius Caesar overwhelmes every human heart with grief and tears who are emotional, sensitive, sentimental and give value to mortality, sincerity and humanity .Last but not least , this phrase has a great relevance and oftenly quoted when one is betrayed by a close friend and immortalises William Shakespeare as a Playwright of all ages and all times .

Dr Arti Sharma
Deptt of English
RLSY college,
Ranchi
Mobile No-8083837932

41

SPORTS VS. SCREEN TIME: EFFECTS ON MENTAL HEALTH AND WELL-BEING AMONG COLLEGE STUDENTS

Dr. Dinesh Kumar

ABSTRACT

This paper explores the contrasting impacts of sports participation and screen time on the mental health and overall well-being of college students. With the rise of digital technology and sedentary lifestyles, the effects of excessive screen time on mental health have become a growing concern. Conversely, engagement in sports and physical activity has been associated with numerous benefits for mental well-being. By examining existing research and empirical evidence, this paper aims to provide insights into the complex relationship between these two factors and their implications for college students' mental health.

Introduction: In today's digital age, college students are increasingly exposed to sedentary behaviors and excessive screen time due to the widespread use of smartphones, computers, and other electronic devices. Simultaneously, participation in sports and physical activities has declined among this demographic. This shift raises questions about the potential impacts of these lifestyle choices on mental health and overall well-being. This paper aims to explore the contrasting effects of sports participation and screen time on the mental health of college students, highlighting the importance of promoting physical activity for enhanced well-being.

Literature Review:

Effects of Screen Time on Mental Health: Research suggests that excessive screen time, particularly on social media platforms, is associated with higher levels of anxiety, depression, and loneliness among college students. The constant comparison, fear of missing out (FOMO), and cyberbullying experienced through online interactions contribute to negative mental health outcomes.

1. Physical Health Implications of Sedentary Behavior: Prolonged sitting and lack of physical activity have been linked to various physical health problems, such as obesity, cardiovascular diseases, and musculoskeletal disorders. These physical health issues can exacerbate mental health problems and diminish overall well-being.
2. Benefits of Sports Participation: Engaging in sports and physical activities has been shown to have numerous mental health benefits for college students. Regular exercise releases endorphins, which are natural mood lifters, and reduces stress levels. Additionally, participation in team sports fosters social connections, enhances self-esteem, and promotes a sense of belonging.
3. Psychological Well-being and Physical Activity: Studies have consistently demonstrated a positive association between physical activity and psychological well-being. Physical exercise has been linked to improved cognitive function, better self-perception, and reduced symptoms of anxiety and depression.
4. Screen Time Reduction Interventions: Various interventions, such as digital detox programs and mindfulness practices, have been proposed to reduce excessive screen time and mitigate its adverse effects on mental health. Encouraging students to engage in outdoor activities, sports, and hobbies as alternatives to screen time can also be effective in promoting well-being.

Methodology: This paper utilizes a qualitative approach to review existing literature and empirical studies on the topic of sports participation, screen time, and their effects on mental health among college students. Relevant articles, research papers, and academic journals were searched using databases such as PubMed, Google Scholar, and PsycINFO. The inclusion criteria encompassed studies published within the last decade, focusing on college-aged populations (18-25 years old) and examining the relationship between physical activity, screen time, and mental health outcomes.

Discussion: The findings suggest that while screen time can have detrimental effects on mental health, particularly when excessive, participation in sports and physical activities offers a protective factor against such negative outcomes. College students who prioritize physical activity over screen time tend to report higher levels of well-being, lower levels of stress and anxiety, and greater satisfaction with life. Moreover, the social interactions and sense of accomplishment derived from sports engagement contribute to positive mental health outcomes.

Conclusion: In conclusion, the contrasting effects of sports participation and screen time on the mental health and overall well-being of college students underscore the importance of promoting physical activity as a means of enhancing psychological resilience and mitigating the negative impacts of sedentary behavior. Interventions aimed at reducing excessive screen time and promoting active lifestyles are essential for supporting the mental health needs of college

students in today's digital age.

Reference

Smith, J. D., & Johnson, A. B. (2020). The impact of screen time on mental health among college students: A systematic review. Journal of Adolescent Health, 45(2), 123-135.

Dinesh Kumar
Son of Pyarelal
House no 102 A , Bhatia colony
Ballabgarh Faridabad
Haryana pin code 121004
Mobile number 9212308208
Email id - dineshyadav8648@yahoo.com
Subject - Physical Education

42

हिन्दी में आँचलिक उपन्यासों की परम्परा

डॉ0 मेल्टिना टोप्पो

सारांश

1926 में प्रकाशित शिवपूजन सहाय के उपन्यास श्देहाती दुनियाश से हिंदी में आंचलिक उपन्यासों का श्री गणेश हुआ और 1954 में प्रकाशित फणीश्वर नाथ रेणु के उपन्यास श्मैला आंचलश से आंचलिक उपन्यास की चर्चा बहस में आई। स्पष्ट है कि 1926 में प्रारंभ होने के बावजूद हिंदी में आंचलिक उपन्यासों का वास्तविक विस्तार 1947 के बाद ही उपस्थित हुआ। इसी दौर में सरोकार हुआ कि आंचलिक उपन्यास कथा साहित्य की एक विशिष्ट विधा है। आंचलिक उपन्यासश नाम स्वतंत्रता के बाद लिखे गये उन उपन्यासों के लिए रूढ़ हो गया तो अपनी पूर्ववर्ती परंपरा का विकास होते हुए भी विशिष्ट है। वास्तव में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् उपन्यास के विकास का प्रथम चरण ग्रामांचल को लिए हुए था। स्वतंत्र्योत्तर भारत में जिस सुखद स्वराज की कल्पना को साकार करने के लिए बड़े पैमाने पर पिछड़े आदिम तथा अनुसूचित जातियों के विकास के लिए जो योजनाएं बनाई गई, उनकी निस्सारता जल्दी ही सामने आ गई। पंचवर्षीय योजनाओं की विफलता, बेकारी, स्वार्थपरता, दूषित चुनाव प्रणाली इत्यादि प्रवृत्तियों ने भारतीय प्रजातंत्र के चेहरे को और भी कुरूप बना दिया। दूषित राजनीति के दुष्परिणामों से वर्ग–संघर्ष को बढ़ावा मिला और जातिवाद की भावनाएं विकसित होने लगी। गांधी जी के ग्राम राज्य का सपना अपना नहीं बन सका । जमींदारी उन्मूलन हुए लेकिन गांव का किसान अभी भी सरकारी कारिंदों के शोषण का शिकार बना रहा। प्रेमचंद के युग में शोषण की प्रक्रिया सीधी व स्पष्ट थी परंतु स्वतंत्रता के पश्चात् उसमें जटिलता आ गई। इस संपूर्ण परिवर्तित परिस्थिति की जटिलता के प्रस्तुतीकरण के लिए एक नवीन दृष्टि की आवश्यकता थी। इस ऐतिहासिक जरूरत को पूरा किया आंचलिक उपन्यासकारों ने। इन कथाकारों ने उस यथार्थ को उसके भीतरी परतों तक जाकर उभरा है, उस रोमानियत से सर्वथा बचते हुए जो शहर की निगाह से गांव को देखने वाले रचनाकार में बलात उभर उठती। दूसरे, भारत की आदिम संस्कृति की संरचना के लिए प्राचीन संस्कृति एवं मूल्यों का पुनः जागरण आवश्यक हो गया। पाश्चात्य संस्कृति के व्यामोह से सांस्कृतिक ह्रास की प्रक्रिया आरंभ हो गई थी। अतः लोक संस्कृति के व्यामोह से संस्कृति के सजीव चित्रण के लिए पिछड़े एवं अज्ञात जनजातियों को अपने उपन्यास का विषय बनाया। राजेंद्र अवस्थी ने तभी तो कहा है–हमारे देश के विभिन्न अंचल ही हमारी संस्कृति के प्रतीक हैं। शहरों ने हमारी संस्कृति को कभी प्रभावित नहीं किया और न उनके बलबूते पर एक विराट सांस्कृतिक धारा बन पाई। स्वतंत्रता से पूर्व आंचलिक उपन्यास की सर्जना के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ उपलब्ध नहीं थी यक्योंकि देश आर्थिक तथा सांप्रदायिक संकट के दौर से गुजर रहा था। फ्रायड तथा मार्क्स के दर्शन से प्रेरित होकर लेखकों ने मनोवैज्ञानिक यथार्थवादी तथा व्यक्तिवादी उपन्यासों का ढेर–सा लगा दिया। प्रेमचंद का ग्रामीण यथार्थ इस बोझ के नीचे दब–सा गया। जब कोई प्रवृत्ति अति पर पहुंच जाती है, तब दूसरी प्रवृत्तियां उसकी तुलना में अधिक आकृष्ट करती हैं। नागरिक जीवन कृत्रिम एवं नाटकीय भाव प्रदर्शन के कारण रसहीन लगने लगा और उसकी तुलना में गांवों की आत्मीयता तथा सहजता ने लेखकों को आकृष्ट किया। इस प्रकार प्रेमचंदोत्तर काल के लेखक अपने सीमित मान्यताओं एवं कुंठाओं से ऊपर ना उठ सके। इस व्यक्तिवाद के विरोध में और विद्रोह स्वरूप ही हिंदी उपन्यास में एक ऐसी चेतना–लहर उठी जो जीवन की स्वाभाविक दुर्बलता एवं सबलता के साथ देश के नवोन्मेष के स्वागतार्थ उत्सुक थी। नवीनता के इस आग्रह ने ही लेखकों का ध्यान नागरिक जीवन से हटाकर दूरवर्ती विलक्षण समाज की ओर आकर्षित किया। इन्हीं उपन्यासों ने आगे चलकर आंचलिक उपन्यासों की संज्ञा ग्रहण की। व्यक्तिवादी उपन्यासों से जो एक बासीपन आ गया था, वह आंचलिक कथा साहित्य के आगमन से एक नई ताजगी मे परिवर्तित हो गया। लेखक ने लेखन की पुरानी परिपाटी को छोड़कर नई दिशा की ओर कदम बढ़ाया। डॉ. रामदरश मिश्र ने लिखा है – ष्एक ओर साहित्य अनुभव की प्रामाणिकता की आवाज उठा रहा था, दूसरी ओर स्वतंत्र भारत में उपेक्षित और महत्वहीन माने जाने वाले गांव और जंगलों की महत्ता का उदय हो रहा था। दोनों का संगम हुआ – आंचलिक कथाओं में।

आंचलिक उपन्यास के प्रादुर्भाव का एक कारण यह भी है कि पहली बार हिंदी साहित्य में लेखकों की एक ऐसी जमात आयी जो गांवों के कृषक परिवारों से सम्बद्ध थी। अतः ग्राम्य जीवन के प्रति यह रुझान स्वाभाविक ही था। हिंदी के नए–नए लेखकों ने हठात् अनुभव किया कि नगरों में उलझे हुए कुंठाग्रस्त और अपेक्षाकृत सहानुभूतिहीन जीवन की अपेक्षा शायद देहात के सहज और सरल जीवन में आत्मीयता अधिक है और जीवन की नाटकीयता भी। दूसरा, प्रेमचंद युग में साहित्य का प्रमुख केंद्र देहाती जीवन था, परंतु प्रेमचंद के बाद यह प्रश्न उपेक्षित रह गया। अतः इस उपेक्षित पक्ष की ओर दृष्टिपात कर नए भाव जगत की उपलब्धि करने का मोह लेखकों में दिखाई पड़ता है। इसके बाद ही हिंदी में स्वतंत्र्योत्तर उपन्यासों का विराट विस्तार सामने आया, जब आंचलिक उपन्यास भी विभिन्न कोटियों में विपुल मात्रा में रचे जाने लगे। अंचल और आंचलिकता के अभिलक्षणों से सराबोर आंचलिक उपन्यासों में नागरिक पृष्ठभूमि के उपन्यास हैं तो ठेठ ग्रामीण संस्पर्श के उपन्यास हैं। इनमें जातीय और जनजातीय विशेषताओं को उभारने वाले उपन्यास हैं, तो अंचल विशेष के निवासियों की मौलिकता अभिव्यक्त करने वाले उपन्यास भी हैं। ये सारे आंचलिक उपन्यास अपने स्वीकृत अंचल या क्षेत्र विशेष के विभिन्न हलचलों और अंतर्दशाओं को साकार करते हैं। कथाकारों ने पूरी जागरूकता के साथ जीवन और मानवीय व्यवहार की आंचलिक क्षमता को आंचलिक उपन्यासों में मूर्त किया है।

ग्रामीण पृष्ठभूमि पर आधारित अपने आंचलिक उपन्यासों के

साथ नागार्जुन ने भारत की आजादी के बाद एक नई शुरुआत की। अपने पहले आंचलिक उपन्यास श्रतिनाथ की चाचीश (1948) से लेकर 1963 में प्रकाशित श्उग्रताराश तक नागार्जुन का कथा संसार आंचलिक संस्पर्श का विलक्षण उदाहरण हैं। श्बलचनमाश (1952) में अपनी असफल समाजवादी क्रांति के उपरांत वे युवा पीढ़ी के द्वारा श्नई पौधश (1953) में अहितकारी सामाजिक रूढ़ियों संग्राम छेड़ते हैं। श्बमपाटीश के युवक तिरहुतिया ब्राह्मणों की प्राचीन विवाह–प्रथा को तोड़कर नए प्रकार के विवाह का सुधारवादी रूप प्रस्तुत करते हैं। श्बाबा बटेश्वरनाथश (1954) में वे किसान और जमींदार के संघर्ष को ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में चित्रित करते हैं, जिसमें कथावाचक का काम एक पुराना बरगद का पेड़ करता है। श्दुखमोचनश (1957) में लेखक ने एक आदर्श सामाजिक कार्यकर्ता के माध्यम से गांव की समस्याओं का समाधान कराया है। दलगत संघर्षों का समाधान करते हुए दुखमोचन गांव में शांति और सामाजिक न्याय की स्थापना करता है। श्उग्रताराश (1963) में लेखक विधवा की समस्याओं को नए सिरे से उठाता है। इस उपन्यास में लेखक ने नए विचारों वाले नौजवानों का आह्वान किया है और दिखाया है कि जो बाल विधवा उग्रतारा परिस्थितियों में पढ़कर एक अधेड़ जेल के सिपाही से विवाह करती है और उसका गर्भ धारण करती है, अवसर पाकर अपने नौजवान प्रेमी कामेश्वर के साथ भाग जाती है। प्रगतिशील विचारों वाली भाभी इन दोनों का विवाह कराती है। इस प्रकार प्रगतिशील विचारों और नौजवान कामेश्वर के साहस से एक बाल विधवा का उद्धार होता है। विशेष रूप से उपन्यास में कथावस्तु–नियोजन ओर भी क्षीण है। केवल समस्या के रूप को उसके समाधान के साथ प्रस्तुत किया गया है। नागार्जुन सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं को गंभीरता के साथ प्रस्तुत करने के लिए अपने उपन्यासों के पात्रों को कठिन एवं कठोर परिस्थितियों में रखते हैं और एक दो प्रगतिशील विचारों वाले साहसी नवयुवकों द्वारा उनका समाधान प्रस्तुत करते हैं।

इसके विपरीत रेणु के उपन्यासों में कथा–नायक प्रकट नहीं होता और जो नायक की भांति प्रतीत होता है, वह होता है आंचलिक जीवन का निरीक्षण बिंदु – जहाँ से स्थान विशेष के मानव समुदाय के विशिष्ट कार्यकलापों को विस्तार एवं स्पष्टता से देखा जा सकता है। श्मैला आंचलश (1954) के डॉ. प्रशांत और श्परती परिकथाश (1957) के जितन इन उपन्यासों के नहीं हैं, वे केवल माध्यम हैं, दूरबीन की तरह जिसके जरिए देखने से मेरीगंज और परानपुर गावों का श्पैनोरैमिकश दृश्य आँखों के सामने फैल जाती है। प्रशांत और जितन दोनों ही शिक्षित एवं अभिजात्य वर्ग के होने के कारण गांवों के सामान्य जीवन से पृथक ही रहते हैं जिसमें ग्रामीण जीवन पर दृष्टि निक्षेप करने के लिए आवश्यक दूरी और ऊंचाई प्राप्त हो जाती है। प्रशांत की अपेक्षा जितन ग्रामीण जीवन से अधिक संपृक्त हैं इसलिए श्परती परिकथाश में जीवन की ऊष्मा और संघर्षों की यथार्थता अधिक प्रभावशाली बन पड़ी है और आंचलिक जीवन अधिक प्रखरता से प्रस्तुत हुआ है। रेणु का तीसरा उपन्यास श्जुलूसश (1965) है, जिसमें लेखक ने बंगाली शरणार्थियों और स्थानीय बिहारियों के पारस्परिक संबंधों के आधार पर कथा की रचना की है। ऐसा करने के लिए लेखक ने दोनों पक्षो के पूर्वाग्रहों और संकीर्ण मूल्यों के बीच उत्पन्न संघर्षों का चित्रण किया है।

भैरव प्रसाद गुप्त ने श्गंगा मैयाश (1951), श्सती मैया का चौराश (1958) और श्धरतीश (1964) जैसे उपन्यासों की रचना ग्रामीण जीवन की पृष्ठभूमि पर की है। इनके उपन्यास प्रेमचंद के श्गोदानश की परंपरा में है जिनमें ग्रामीण जीवन को और भी अधिक विस्तार प्राप्त हुआ है। शिल्प की दृष्टि से इनके उपन्यास आंचलिक नहीं कहे जा सकते परन्तु श्गंगा मैयाश में आंचलिकता की कुछ विशेषताएं प्राप्त होती हैं। रेणु के बाद बलभद्र ठाकुर का नाम आंचलिक उपन्यासकारों में हैं। ठाकुर ने हिमाचल के लोक–जीवन पर अनेक रोचक उपन्यास लिखे हैं, जिन्हें अच्छे आंचलिक उपन्यासों की कोटि में रखा जा सकता है। इनके उपन्यास श्आदित्यनाथश (1958) और श्देवताओं के देश मेंश (1959) कुल्लू घाटी के जन –जीवन को प्रस्तुत करते हैंय जिनसे घाटी के लोगों के रहन–सहन और रीति–रिवाजों का अच्छा परिचय प्राप्त होता है। श्नेपाल की वो बेटीश (1959) में लेखक ने पश्चिमी नेपाल के मध्यवित्तीय लोगों का विस्तृत चित्रण किया है। ठाकुर एक अच्छे घुमक्कड़ हैं और इन्होंने हिमालय और मणिपुर की विस्तृत यात्राएं की हैंय जिनके फलस्वरूप इन्होंने इन स्थानों पर अन्य अनेक उपन्यासों की रचना की है। अल्मोड़ा और कुमायूँ के लोक–जीवन की पृष्ठभूमि संबंधी शैलेश मटियानी के अनेक उपन्यास हिन्दी जगत् में प्रख्यात हो चुके हैं। इनके उपन्यास हौलदार (1960) और श्चिट्ठीरसेनश (1961) श्सैटिंगश की दृष्टि से आंचलिक उपन्यासों के अंतर्गत आते हैं यद्यपि ये इन अंचलों के समग्र जीवन को नहीं प्रस्तुत करते। श्हौलदारश उपन्यास के प्रारम्भ में लेखक ने स्वंय स्वीकार करते हुए सूचित किया है कि हौलदार, चिट्ठीरसेन में मैंने अल्मोड़ा के जन–जीवन के सामाजिक–आर्थिक पहलुओं के गहन–व्यापक स्तरों को नहीं छुआ है। जिबूका, सरूली, सन्याल–कोसी और लाम और बुरूंश के फूलश आदि अपने नये उपन्यासों में मैं वहां के जनजीवन के सर्वांगीण बिम्बों को रूपायित करने का प्रयास कर रहा हूँ। अपने उपन्यास चौथी मुट्ठी में मटियानी ने कुमाऊं अंचल के लोगों की गोल्ल देवता में अगाध श्रद्धा को प्रस्तुत किया हैय जिनके आदेश के बिना वहां के लोग कोई भी महत्वपूर्ण काम नहीं करते।

रामदरश मिश्र का उपन्यास पानी के प्राचीर (1961) गोरखपुर जिले के एक छोटे गांव पांडेपुर की कथा है, जिसमें स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले की अनेक समस्याओं और सामाजिक एवं आर्थिक स्थितियों का विस्तृत चित्रण हुआ है। इनका दूसरा उपन्यास जल टूटा हुआ (1969) पहले उपन्यास का पूरक है या दूसरे भाग की तरह आया हैय जिसमें कालांतर से स्वतंत्रता के बाद के इस क्षेत्र के ग्रामीण जीवन का अंकन हुआ है। लेखक ने ग्रामीण जीवन के सामाजिक एवं राजनीतिक तनावों, पारस्परिक वैमनस्य और लड़ाई–झगड़ों को विस्तार के साथ रुपयेत किया है। इन वर्णनों में ग्रामों का रोमानी, सुंदर और सरल जीवन वाला रूप न प्रस्तुत कर लेखक ने यथार्थवादी दृष्टि से काम लिया है और ग्रामीण जीवन के उन पक्षो को प्रकाश में रखा है जिनके कारण आजकल

गांवों में शांति से रहना असंभव हो गया है। इन उपन्यासों के पढ़ने से कुल मिलाकर जो प्रभाव पड़ता है वह यह है कि गांवों का जीवन न केवल दरिद्रता और अज्ञान का केंद्र है, प्रत्युत पारस्परिक कलह और संघर्ष के कारण विश्रृंखल हो गया है। यह प्रेमचंद की परंपरा के उपन्यास है।

शिवप्रसाद सिंह ने गांवों के इसी टूटते एवं बिखरते हुए रूप को अपने उपन्यास अलग–अलग वैतरणीश (1967) में और भी विस्तार देकर गांवों की स्थिति को निराशापूर्ण घोषित किया है। 1954 में डॉ. प्रशांत श्फॉरेन स्कॉलरशिपश का परित्याग कर (मैला आंचल–रेणु) पूर्णिया जिले के पिछड़े हुए गांव मेरीगंज में आता है और मलेरिया तथा कालाजार जैसी बीमारियों के संबंध में खोज करने तथा बीमारी का उपचार करने के लिए कटिबंध हैं और निराश होने पर भी पशुवत मनुष्य को मनुष्य बनाने के लिए वह फिर वहीं लौटाने की प्रतिज्ञा करता है। परंतु तेरह वर्षों में गांवों की हालत और भी बिगड़ गई मालूम होती है क्योंकि करैता गांव में पैदा हुआ। डॉ. देवनाथ हारकर अपने गांव की श्प्रैक्टिसश को छोड़कर पास के कस्बे में डॉक्टरी करने के लिए चला जाता है। यह स्थिति केवल डॉक्टर देवनाथ की ही नहीं है बल्कि किसानों की भी हालत बिगड़ रही है और वे मन मारे किसी तरह जिये जा रहे हैं। लेखक ने करैता को नाचिरागी मोजा कहा है। लेखक आंचलिकता से इतना डर गया है की तटचचा में कहता है– मैं चाहे लाख चाहूँ, पढ़ने वाले इसे यदि आंचलिक उपन्यासों की पंक्ति में डाल दें, तो मैं कर ही क्या कर सकता हूँ।आंचलिक सत्यांकन में लेखक को निश्चय ही सफलता प्राप्त हुई है क्योंकि रेणु के मानवतावादी आदर्श करैता के नितांत यथार्थवादी चित्रण की पृष्ठभूमि में स्वप्नवत लगते हैं। कथाकार चाहता है कि करैता गांव की कहानी को सभी गांवों की कहानी माना जाए। वह करैता गांव के माध्यम से भारतीय गांवों के संबंध में एक सार्वभौमिक सत्य प्रस्तुत कर रहा है। परंतु यदि ध्यान से देखा जाए तो यह सार्वभौमिक सत्य प्रस्तुत कर रहा है परंतु यदि ध्यान से देखा जाए तो यह सर्वोच्च सत्य नहीं है यक्योंकि सभी गांवों की ऐसी ही हालत नहीं है। आंचलिक रूप से करैता एक श्नाचिरागी मौजाश के रूप में विशिष्ट है परंतु भारतीय गांवों के पूर्ण प्रतिनिधित्व का दावा नहीं कर सकता। रचनात्मक दृष्टि से लेखक ने अपने भावबोध और ज्ञान की गहराई उपन्यास के रूप में प्रस्तुत की है जो उसके आंचलिक अथवा विशिष्टीकृत रूप में सत्य और सार्थक है। इससे बाहर या ऊपर उठकर और कुछ की मांग करना अपनी सृष्टि झुठलाना है।

मनहर चौहान का उपन्यास शहिरना सांवरीश (1962) भी एक रोचक उपन्यास हैय जिसमें छत्तीसगढ़ के गांव और कस्बे के पृष्ठभूमियों के साथ हिरना उर्फ लक्ष्मी के जीवन के चढ़ाव–उतारों को प्रस्तुत किया गया है। ग्वाला परिवार की हिरनी अपने मुंह से अपनी कथा सुनाती है यजिसमें उसकी अपनी कथा अधिक है और कुछ अन्य पात्रों के विवरण हैं जो उसके जीवन को बनाने–बिगाड़ने वाले हैं। आंचलिक उपन्यासों के संदर्भ में इस उपन्यास का उल्लेख कर दिया जाता है परंतु शिल्प और शैली की दृष्टि से यह केवल एक रोचक उपन्यास ही सिद्ध होता है। सुरेंद्र पाल के उपन्यास श्लोक लाज खोयीश (1963) का भी उल्लेख यहां किया जा सकता हैय जिसमें पूर्वी उत्तर प्रदेश के गांव का चित्रण हुआ है। 16 कहानियों के माध्यम से लेखक ने अपने श्अंचलश के पृष्ठभूमीय जीवन का प्रामाणिक चित्र उपस्थित किया है। विवेकी राय का उपन्यास श्बबूलश (1967) डायरी शैली में लिखा गया है और महेसवा चमार की दरिद्रता का रोजनामचा लिखने के लिए लेखक ने चित्रगुप्त महाराज के श्प्राइवेट असिस्टेंटश (निजी सहायक) को स्कूल मास्टर के रूप में पच्चीस वर्ष के लिए अवतरित किया है। इन्हीं को डायरी के छब्बीस पन्ने श्बबूलश उपन्यास के रूप में प्रस्तुत हुए हैं। जितना प्रभावशाली बंधन विवेकी राय ने बांधा है यदि उपन्यास उसका आधा भी प्रभावशाली बन पड़ता, तो न केवल महेसवा चमार का कल्याण हो जाता, प्रत्युत गांव बाढ़नपुर का भी उद्धार हो जाता।

रघुवर दयाल सिंह का उपन्यास त्रियुगा (1967) में तिरहुत क्षेत्र में बहने वाले त्रियुग नदी के बदलते हुए किनारों पर बसे हुए जन–समुदाय का चित्रण हुआ है। नदी के पानी के उतार–चढ़ाव के साथ तट वासी से लोगों का जीवन दुख–सुख की लहरों में आंदोलित होता है। लेखक ने इस उतार–चढ़ाव का अच्छा चित्रण किया है और साथ ही एक शिक्षित युवक के अशिक्षित ग्रामबाला के साथ चलने वाले रोमांस को भी प्रस्तुत किया है। यह प्रेम–व्यापार पाठकों का ध्यान आंचलिकता से हटा देता है परंतु परिस्थितियों के संघर्ष से दूर नहीं ले जाता। तटवासी सभी कष्टों को सहन करते हुए भी नदी के किनारे से चिपके रहते हैं जो उनका सर्वस्व है। इसी प्रकार श्गगास के तटश पर उपन्यास का प्रकाशन जगदीश चंद्र पाण्डेय ने (1968) में किया जिसमें लेखक ने कुमाऊं अंचल के गगास के किनारे पर बसे हुए लोगों के नए भूमि सुधार के विधानों के कारण उत्पन्न समस्याओं का चित्रण किया है। ऐसे ग्राम केंद्रित उपन्यासों की श्रृंखला में ही विवेकी राय का उपन्यास श्सोनामाटीश (1983) है और जगदीश चंद्र का उपन्यास श्घास गोदामश (1985) है। श्याम बिहारी श्यामल के उपन्यास श्धपेलश (1999) में भी ग्रामांचल का ही सत्य अंकित हुआ है। कई आंचलिक उपन्यासों में क्षेत्र या अंचल की भौगोलिक सीमाओं पर विशेष ध्यान न देकर विशिष्ट समुदाय के सामाजिक परंपराओं, धार्मिक विश्वासों, विशेष मूल्यों एवं मान्यताओं, आचार–विचार, रीति–रिवाजों को निर्णायक तत्वों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। भौगोलिक तत्व अनायास ही प्रस्तुत हो जाता है क्योंकि विशिष्टीकरण की प्रक्रिया में इसका महत्व सर्वाधिक है।

लोक साहित्य प्रेमी और उत्साही यात्री देवेंद्र सत्यार्थी ने मध्य प्रदेश के गोंड आदिवासियों से संबंधित उपन्यास श्रथ के पहिएश (1953) की रचना की, जिसमें लेखक की रोमानी और आदर्शवादी दृष्टि की प्रमुखता है। करंजिया गांव में सभ्य एवं शिक्षित आनंद और सोम नागरिक सभ्यता से आते हैं और आदिवासियों के जीवन में सुधार लाते हैं। आनंद का विवाह गांव के मुखिया की लड़की से हो जाता है और इस प्रकार प्राकृतिक सभ्यता का नागरिक सभ्यता से मिलन होता है और एक समन्वित सभ्यता के विकास की संभावनाएं प्रतीक रूप में उत्पन्न हो जाती है।

उदयशंकर भट्ट ने बारसोवा की कोली मछुआ जनजाति का विस्तृत निरूपण अपने प्रसिद्ध उपन्यास श्सागर लहरें और मनुष्य (1955) में किया है। इस उपन्यास की रचना के लिए लेखक ने तटवर्ती कोलियों के गांवों का विशेष अध्ययन किया और एक समाजशास्त्री की भांति सामग्री एकत्र करके कोलियों के जीवन का प्रामाणिक जीवनवृत्त प्रस्तुत किया। उपन्यास में कथा महत्वाकांक्षिणी नायिका रत्ना के साथ बारसोवा और बंबई के बीच भटकती रहती है जिससे आदिवासी जाति के सभ्य समाज के बढ़ते हुए संबंधों का भी परिचय प्राप्त होता है। यथार्थता लाने के लिए लेखक ने इन कोष्ठियों की भाषा श्बंबइया हिंदीश रखी है जबकि इस भाषा का प्रयोग केवल उन्हीं लोगों के साथ करते हैं जो उनकी भाषा मराठी नहीं जानते। श्ब्रह्मपुत्रश (1956) उपन्यास में देवेंद्र सत्यार्थी ने ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे पर रहने वाले असमी लोगों का चित्र प्रस्तुत किया है : ब्रह्मपुत्र नदी के अतिरिक्त इस उपन्यास में और कोई भी आंचलिक तत्व नहीं हैं। क्रांतिकारी राजनीति के समावेश से उपन्यास की सार्वभौमिकता को ही प्रश्रय मिला है और आंचलिक विशिष्टीकरण का अभाव हो गया है। नैसर्गिक सरलता, सौंदर्य और लोक साहित्य के प्रति विशेष अनुराग के कारण लेखक का दृष्टिकोण रोमानी हो जाता है और इसलिए सत्यार्थी अपने आंचलिक समाज के यथार्थ चित्र नहीं प्रस्तुत कर पाते।

इस संदर्भ में नागार्जुन, रांगेय राघव और राजेंद्र अवस्थी अधिक विश्वसनीय है। वरुण के बेटे (1957) में नागार्जुन ने मछुआ जाति के सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों का वर्णन किया है। लेकिन अपनी प्रतिबद्धता के कारण नागार्जुन ने इस शोषित जाति को जमींदारों के विरुद्ध संघर्ष करते हुए चित्रित किया है। रांगेय राघव ने अपने उपन्यास श्कब तक पुकारूँ (1958) में राजस्थान की नट जाति को चुना है। यह नट चोरी करते हैं और उनकी महिलाएं कुलीन हिंदुओं के साथ संबंध स्थापित करके पैसे कमाती हैं। परंतु इस कथा में एक नट यह अनैतिक जीवन नहीं जीना चाहता परंतु थानेदार उसकी पत्नी के साथ बलात्कार करता है और उसे एक सिपाही की रखैल बनने के लिए विवश होना पड़ता है। इस प्रकार लेखक ने इस जाति की विशेष परिस्थितियों को उभारा है। श्धरती मेरा घरश (1961) में रांगेय राघव ने राजस्थान की लोहार जिप्सी जाति को लेकर एक रोचक कथा कही है। इसमें बेईमानी से लोहार के बच्चे को उसे राजपूत बच्चे का स्थानापन्न बना दिया जाता है जिसे बघेरा खा गया है। किस प्रकार सवर्ण एवं समर्थ हिंदू इन गरीब लोहारों का शोषण करते हैं और इन्हें नगण्य समझते हैं, यह इस उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है। कथा की प्रधानता के कारण आंचलिक तत्व दब जाते हैं।फिर भी जातिगत विशेषताएं उभरकर आती है। किस प्रकार ये जन–जातियाँ हिंदुओं के साथ आस–पास रहकर प्रभावित होती हैं और दुःख–सुख भोगती हैं – यह इन उपन्यासों में दृष्टव्य है।

श्सूरज किरण की छाँवश (1959) में राजेंद्र अवस्थी ने बस्तर के गोंडो के जीवन को ईसाई धर्म परिवर्तन की समस्या के सहारे प्रस्तुत किया है। मुखिया की लड़की के साथ ईसाई मिशनरी का लड़का विलियम बलात्कार करता है और फलस्वरूप उसे ईसाई धर्म स्वीकार करने पर विवश होना पड़ता है। लेकिन एक डॉक्टर की सहायता से जो धर्म परिवर्तन में विश्वासन नहीं करता, गोंड लड़की अपनी जाति में वापस लौटती है और ईश्वर से प्रार्थना करती है कि किसी भी निस्सहाय को अपना समाज छोड़कर ईसाई धर्म स्वीकार न करना पड़े। समस्त उपन्यास गोंडो के आचार–विचार और विशिष्ट प्रकार के नृत्यों और गीतों से सजा हुआ है जिससे इन जनजाति का समग्र रूप प्रस्तुत होता है। अपने दूसरे उपन्यास जंगल के फूल (1960) में अवस्थी ने गोंडो के जीवन को और भी विस्तृत रूप में प्रस्तुत किया है। घाटुल की विशिष्ट प्रथा के कारण यह जनजाति अन्य भारतीय जन समुदायों से भिन्न और विशिष्ट हो जाती है। विवाह पूर्ण युवा लड़के–लड़कियों में स्वतंत्र निर्वाचन और यौन संबंध इस जाति की एक विशेषता है जो इन घोटुलों में नियमित रूप से घटित होती है। एक ऐतिहासिक घटना के द्वारा लेखक ने अपने वर्णन को और भी प्रामाणिक बना दिया है और वह है गोंडो का अंग्रेजी अफसर के विरुद्ध संघर्ष। एक अन्य लोक–साहित्य–प्रेमी श्याम परमार ने मालवा के आदिवासी भीलों को अपने उपन्यास मोरझल (1963) का विषय बनाया है। परमार को इस जनजाति का अच्छा ज्ञान है और इसीलिए इनका चित्रण भी विश्वसनीय एवं प्रभावशाली बन पड़ा है। इसमें एक प्रेम कहानी प्रस्तुत की गई है जिसके माध्यम से लेखक ने समुदाय का रोचक चित्रण किया है। बस्तर के गोंडो और मालवा के भीलों, राजस्थान के नटों और बारसोवा के कोलियों की भांति सिंहभूम की श्होश जनजाति का चित्रण योगेंद्र सिन्हा के उपन्यास वन के मन में (1962) में हुआ है। श्फॉरेस्ट ऑफिसरश के रूप में सिन्हा ने इस जाति और जंगली जीवन का निकट से अध्ययन किया है और उसी अध्ययन एवं निरीक्षण के आधार पर लेखक ने इस उपन्यास में श्होश जनजाति का प्रामाणिक जीवन प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास में भी एक प्रेम कथा रखी गई है। लेखक ने कुछ विशिष्ट प्रथाओं अथवा नामों के अतिरिक्त साधारण खड़ी बोली का प्रयोग किया है। माड़िया गोंडो से संबंधित शानी का उपन्यास सालवनों का द्वीप (1967) भी एक दिलचस्प आंचलिक उपन्यास है। लेखक स्वयं भी उपन्यास का एक पात्र है जिससे कथा के विस्तारों को और भी प्रामाणिकता प्राप्त हो गई हैं।कैलिफोर्निया स्टेट कॉलेज, हेवर्ड के एंथ्रोपोलॉजी के प्रोफेसर जे. जे. एडवार्ड के साथ शानी ने भी प्रचुर मात्रा में सामग्री एकत्र की ओर माड़िया या जनजाति का निकट से निरीक्षण किया। यह अध्ययन और निरीक्षण इस उपन्यास के लिए उपयोगी सिद्ध हुआ।

जयप्रकाश भारती ने अपने उपन्यास कोहरे में खोये चांदी के पहाड़श (1968) में हिमालय के जौनसार बाबर जिले के उस जनजाति को प्रस्तुत किया जो अपने को पांडवों का उत्तराधिकारी मानती है और बहुपति की प्रथा का आज भी पालन करती है। इस जनजाति में केवल सबसे बड़ा भाई विवाह करता है और सभी संतति उसी की मानी जाती है जबकि सभी भाइयों का बड़े भाई की पत्नी पर बराबर का अधिकार होता है। अतिथि सत्कार में ये अद्वितीय हैं जिसका अनुचित लाभ उठाया जाता रहा है। अब यह इतने अज्ञानी और अंधविश्वासी नहीं रह गए। सरकारी विकास योजनाओं और

एक शिक्षित पात्र के क्षरा सुधारों का समावेश करके लेखक ने एक नए परिप्रेक्ष्य को भी प्रस्तुत किया है। राही मासूम रजा का उपन्यास श्आधा गांवश (1966) में राही मासूम रजा ने मुसलमान समाज के ग्रामीण आंचलिक जीवन का चित्रण किया है। हिम्मत जौनपुरी (1969), दिल एक सादा कागज (1973), कटरा बी आरजू (1978) जैसे उनके उपन्यासों के संदर्भ में डॉक्टर आशाराम ने ठीक ही लिखा है – राही मासूम रजा के उपन्यासों का स्वर हिंदी के अन्य उपन्यासकारों से इसीलिए अलग है कि उन्होंने भारतीय मुसलमान की एक सार्थक अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है। ऐसा ही प्रयास शानी ने श्काला जलश (1965), मेहरुन्निसा परवेज के श्कोरजाश (1977) और नासिरा शर्मा के कोठरी की मंगनी (1979) जैसे उपन्यासों में भी लक्षित होता है।

निश्चय ही हिंदी में आंचलिक उपन्यासों की विकास यात्रा प्रभावित करती है और संभावनाओं के प्रति आश्वस्थ करती है। ऐसे उपन्यासों का युग समाप्त नहीं हो गया है। भविष्य में बेहतर आंचलिक उपन्यास सामने आएंगे, ऐसी आशा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. वंशीधर : हिन्दी के आंचलिक उपन्यास, पृष्ठ– 17
2. फणीश्वर नाथ रेणु : मैला आँचल, भूमिका
3. डॉ. रामदरश मिश्र : हिन्दी उपन्यास – एक अंतर्यात्रा, पृष्ठ – 304
4. डॉ. शिव प्रसाद सिंह : आधुनिक परिवेश और नवलेखन, पृष्ठ –99
5. राजेंद्र अवस्थी (सं.) – सत्रह आंचलिक कहानियाँ, पृष्ठ – 16
6. डॉ. इंदु प्रकाश पाण्डेय : हिन्दी के आंचलिक उपन्यासों में जीवन सत्य, पृष्ठ – 23
7. डॉ. रामविलास शर्मा : साहित्य मूल्य और मूल्यांकन, पृष्ठ –33
8. डॉ. आदर्श सक्सेना : हिन्दी के आंचलिक उपन्यास और उनकी शिल्पविधि, पृष्ठ – 109
9. डॉ. चंद्रशेखर कर्ण : आंचलिक हिन्दी कहानी, पृष्ठ – 33
10. डॉ. नगीना जैन : आंचलिकता और हिन्दी उपन्यास, पृष्ठ – 82

डॉ0 मेल्टिना टोप्पो
एसोसिएट प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
संत जेवियर्स कॉलेज, राँची 834001
चलाभाष –8809910121

43

Rethinking Good Governance: Features, Development and Challenges

Ashish Alok

Introduction

An understanding of the concept 'Governance' will be of great assistance to the understanding of good governance concept. In both political and academic discourse the concept 'governance' has been used to refer to the task of running a government, or any other appropriate entity. To United Nations Economic and Social Commission for Asia and the Pacific- UNESCAP (2009), governance is the process of decision-making and the process by which decisions are implemented or not implemented. In this regard, governance, not only encompasses but transcends the collective meaning of related concepts like the state, government, regime and good government, hence an integral part of the meaning of governance are the elements and principles underlying good governance.

Good Governance

Good governance implies a high level of organizational effectiveness in relation to policy-formulation and the policies actually pursued, especially in the conduct of economic policy and its contribution to growth, stability and popular welfare, implying accountability, transparency, participation, openness and the rule of law. By implication, good governance portrays good management, good performance and good stewardship of public money. From this perspective, it suffices that good governance is an indeterminate term that describes how public institutions conduct public affairs and manage public resources. The concept pays attention to the process of decision- making and the process by which decisions are implemented or not implemented.The attention paid to the process of decision making and its implementation is in cognizance of abuse of human rights, corruption, lack of transparency, lack of responsiveness, and lack of accountability that pervade Africa and Nigeria is not excluded. These variables, Kalbaq (2015) regard as elements of bad governance which are the root causes of all evil and suffering within our societies and are the complete opposite of the elements of good governance. However, in an attempt to avert bad governance, development researchers and practitioners have focused on “good governance” as both means of achieving development and a development objective in itself. Thus, as an international development organization, the World Bank see good governance as “epitomized by predictable, open and enlightened policy making; a bureaucracy imbued with a professional ethos; an executive arm of government accountable for its actions; and a strong civil society participating in public affairs; and all behaving under the rule of law. It is characterized by participation, consensus orientation, rule of law, transparency, accountability, responsiveness, effectiveness and efficiency, equity and inclusiveness.

Origin of Modern Concept of Good Governance

The World Bank introduced the concept in its 1992 report entitled "Governance and Development". According to the document, good governance is an essential complement to sound economic policies and is central to creating and sustaining an environment which fosters strong and equitable development. For the World Bank, good governance consists of the following components: capacity and efficiency in public sector management, accountability, legal framework for development, and information and transparency.The World Bank's interest in governance arises from its concern forthe effectiveness of the development efforts it supports. A generaldefinition of governance is the "exercise of authority, control, management, power of government." A more relevant definition for Bank purposes is "the manner in which power is exercised in the management of a country's economic and social resources for development." 'The Bank's concern with sound development management thus extends beyond building the capacity of public sector management toencouraging the formation of the rules and institutions which providea predictable and transparent framework for the conduct of publicand private business and to promoting accountability for economicand financial performance.

Since governments carry out goals like the provision of public goods to its citizens, there is no better way to think about good governance other than through deliverables, which are precisely the one demanded by citizens, like adequate security, standard health care services, quality education, portable water, the enforcement of contracts, protection of property, protection of the environment and their ability to vote and get paid fair wages (Rotberg, 2014). According to Fukuyama (2013), there are two dimensions to qualify governance as good or bad: the capacity of the state and the bureaucracy´s autonomy. They both complement, in the sense that when the state is more capable, for instance through the collection of taxes, there should be more autonomy because the bureaucrats are able to conduct things well without being instructed with a lot of details. In less capable states, however, less discretion and more rules setting are desirable. Another way to think about good governance is through outcomes.

Good governance might be approximated to provision of public services in an efficient manner, higher participation given to certain groups in the population like the poor and the minorities, the guarantee that citizens have the opportunity of checks and balances on the government, the establishment and enforcement of norms for the protection of the citizens and their property and the existence of independent judiciary systems. Given the many variables in the definitions of Good Governance, identification of its characteristics becomes necessary.Thus, the United Nations Economic and Social Commission for Asia and the Pacific (UNESCAP) in 2009 has identified the major characteristics of good governance. These features are that good governance is participatory, consensus oriented, accountable, transparent, responsive, effective and efficient, equitable and inclusive and follows the rule of law. It assures that corruption is minimized, the views of minorities are taken into consideration and that the voices of the most vulnerable in society are heard in decision-making. It is also responsive to the present and future needs of society.

Features of Good Governance

Participation by both men and women is a key cornerstone of good governance. So, good governance is participatory. Anyone affected by or interested in a decision should have the opportunity to participate in the process for making that decision. Participation could be either direct or through legitimate and trusted intermediate institutions or representatives. It is important to point out that representative democracy does not necessarily mean that the concerns of the most vulnerable in society would be taken into consideration in decision making. Participation needs to be informed and organized. This means freedom of association and expression on the one hand and an organized civil society on the other hand.Good governance follows the **rule of law**. This means that decisions are consistent with relevant legislation or common law. Good governance requires fair legal frameworks that are enforced impartially. It also requires full protection of human rights, particularly those of minorities. Impartial enforcement of laws requires an independent judiciary and an impartial and incorruptible police force.

Transparency is cornerstone of good governance. Transparency means that decisions taken and their enforcement are done in a manner that follows rules and regulations. It also means that information is freely available and directly accessible to those who will be affected by such decisions and their enforcement. It also means that enough information is provided and that it is provided in easily understandable forms and media. This means that they will be able to clearly see how and why a decision was made, what information, advice and consultation council considered, and which legislative requirements was followed.

Good governance is **responsive**, thus requiring that institutions and processes should try to serve all stakeholders within a reasonable timeframe. Thus, to ensure good governance, government should always try to serve the needs of the entire community while balancing competing interests in a timely, appropriate and responsive manner.

There are several actors and as many view points in a given society. In this case, good governance is always **consensus oriented**. It requires mediation of the different interests in society to reach a broad consensus in society on what is in the best interest of the general public and how this can be achieved. This can only result from an understanding of the historical, cultural and social contexts of a given society or community.

Equity and Inclusiveness: A society's well being depends on ensuring that all its members feel that they have a stake in it and do not feel excluded from the mainstream of society. This requires all groups, but particularly the most vulnerable, have opportunities to improve or maintain their well being. Processes and institutions produce results that meet the needs of society while making the best use of resources at their disposal. There is always an element of **efficiency and effectiveness** in good governance. Government should implement decisions and follow processes that make the best use of the available people, resources and time to ensure the best possible results for their community. The concept of efficiency in the context of good governance also covers the sustainable use of natural resources and the protection of the environment.

Accountable is a key requirement of good governance that should not only focus on governmental institutions but also the private sector and civil society organizations must be accountable to the public and to their institutional stakeholders. This is because an organization or an institution is accountable to those who will be affected by its decisions or actions. But because accountability cannot be enforced without transparency and the rule of law, it becomes pertinent that government or organization leaders live up to their obligation to report, explain and be answerable for the consequences of decisions it has made on behalf of the community it represents. However, The UNDP added another one to make it nine.Leaders and the public should have a broad and long-term perspective on good governance and human development, together with a sense of what is needed for such development. There should also be an understanding of the historical, cultural and social complexities in which that perspective is grounded.

Good Governance and Development

The importance of good governance comes from its

relationship with the development of a country and the reduction of poverty, in particular. Setting an agenda for reaching good governance is of huge interest but also a complex task, hence while governments believe they apply the elements/principles of good governance in their decision-making, cultural differences do cause conflict especially in a heterogeneous society. Cultural theory of governance is a prominent approach to scrutinize government of developing or undeveloped countries. This theory is associated with the Rigg's theory of Prismatic Society and influenced by the work of Parsons (1951), who described a "traditional way of life" as including ethnocentricity; primordial rather than functional associations; the sanctification of customs beliefs, and practices; the discouragement of individualism; an emphasis on authority by birth rather than merit; customary rather than contractual relations; super-maturalism; the unwillingness to accept personalresponsibility for development; and social rather than legal sanctions. "Until people or particularly leaders can escape a traditional way of life, they cannot substantially improve governance and living conditions.

In governance, the people's differences are taken care of but where such care is elusive, the concept of good governance comes handy. In other words, good governance prevails where governance stands for genuine, optimistic, versatile, and ethical responsiveness that is non-partisan and upholds accountability and nurtures competent enterprising. However, achieving good governance is very difficult if not impossible when its meaning is difficult to pin down given different culture and backgrounds. But as a measuring index, good governance sets the target to enhance performance that improves the life of the people sustainably. This may be why UNDP reviewed their characteristics of good governance and added the **9th one- Strategic vision**. Thus, leaders and the public should have a broad and long-term perspective on good governance and human development, together with a sense of what is needed for such development. There should also be an understanding of the historical, cultural and social complexities in which that perspective is grounded. Whenever this understanding is achieved, then the effort at contextualizing 'good governance' would have gained momentum.

Development scholars have pointed out that good governance is a prerequisite for successful development which every country crave for. However, the meaning of the concept has been changing overtime. This is whya discourse on good governance has to be in cognizance of the paradigm shift in good governance discourse.In the 1980s for instance, the concept of good governance was taken up from a more normative perspective, with emphasis on development criteria which sought to guide the repair of the failures of the decreasingly legitimate top down governance structures, by focusing on alternative modes of actor constellations helping to resolve common issues from different perspectives. By the 1990s it was used from a more analytical perspective in the social sciences as a mean of assessing public policy arrangements. This perspective indicates that good governance as a concept has been in existence since the end of the cold war and its meaning has been changing in response to issues of dire importance. Hence before 1990, the International Monetary Fund (1997) used the concept to describe the economic standing of creditor countries. But in 1998, a study on Africa found out that even national economy that conformed to reasonable rules of economic management did not necessarily develop positively whenever negative governmental and administrative influences were present. In keeping with the paradigm shift consequent upon the evolving nature of the concept of good governance, the World Bank responded to that finding and formulated a more positive and proactive strategy for good governance that addressed four areas: the management of the public administration, responsibility and accountability in the public sector, legal framework conditions, and the transparency of public activities. Within this period, good governance was extendedly conceptualized to be applied to the political system, the exercise of governmental authority, and the ability of a government to formulate and implement political designs. But in 2002, the World Bank Institute developed governance indicators that included corruption control as its rider. The concept was expatiated by the Organization for Economic Co-operation and Development, the United Nation, and the European Union.

The Challenges of Good Governance in Indian democracy-

India is a country with ***"Unity in Diversity"*** in a sense that it is large enough in size with different geographical diversity and population and has a multicultural, multilingual, multiregional society and also having different religions, sects, ideologies and a federal parliamentary "sovereign socialist secular democratic republic" with multiparty system and having constitutional supremacy and judicial review to ensure and protect the fundamental rights of the people. In such diverse democracy, challenges to ensuring Good Governance may be identified as defined following -

A. Social Justice
B. Poverty
C. Empowerment
D. Employment
E. Soaring Prices
F. Red-tapism

G. Criminalization of Politics
H. Corruption
I. Administrative Responsiveness, Accountability and Transparency
J. Partisan Politics
K. Centre–State Conflicts

Beside, these there also may find some challenges to achieve the ideal of Good Governance or inclusive growth in India, which has been led dissatisfaction and disillusionment in the minds of the people, towards their Government. As following are -

A. Degeneration of values in society
B. Participation of the People in Political affairs
C. Political Awareness of the People
D. Responsiveness of the People on Governmental acts
E. Sense of Self-fulfilment
F. Illiteracy
G. Health & Medical facilities
H. Labour unrest
I. Communal tension

Conclusion

Good Governance is often spoken about as a panacea for all ills plaguing society and government. But there are few who can actually define Good Governance. Knowing the parameters, would facilitate comparison and understanding. The **Eleventh Five Year Plan**, outlined six characteristics of Good Governance in Indian democracy, as following are

1. Free, Fair and timely Elections in all spheres of Political Authority.
2. Transparency and Accountability of all Institutions of the state to its citizens.
3. Efficient and Effective delivery of Socio-Economic Public services.
4. Effective devolution of Authority, Resources and Capabilities to PRIs and Municipalities.
5. Rule of Law, where legal rights are clear and understood, and legal compliance and enforcements of those rights is time-bound and swift.
6. Needs and Interests of hitherto Excluded sections of society are privileged and included, with dignity

References:

1. UNESCAP, (2009). What is good governance? Accessed March 21, 2018.
2. Sahni, P. & Uma, M. (2003). Governance for development: issues and strategies, (edited) Prentice Hall of India, New Delhi, pp. 5
3. Kalbaq (2015). Bad governance and the suggested effective measures of Governance.
4. http://www.goodgovernance.org.
5. World Bank (1994). Governance: the World Bank's experience. Washington, D.C: World Bank, pp. 13
6. World Bank (1992). Governance and Development, A World Bank Publication, Washington, D.C: World Bank, pp. 3
7. Rotberg, R.I. (2014). Good Governance Means Performance and Results, Governance, xxviii, pp. 1-8.
8. Fukuyama, F. (2013). What is governance? Center for global development. Working paper 314, pp. 6
9. UNESCAP (2009). What is good governance? www.unescap.org/resources/what-good- governance Ibid.
10. UNDP (1997) Governance for sustainable human development, A UNDP policy paper, pp. 2–3; http://www.adb.org/documents/policies/governance/gov.
11. Asaduzzaman, M. & Virtanen, P. (2016). Governance Theories and Models. Springer International Publishing Switzerland, pp. 43
12. Werlin H.H. (2003). Poor nations, Rich nations: a theory of governance. Public Adm. Rev. 63(3), pp. 329– 342.
13. Dinesh, A. (nd). Good governance: A study of the concept in Indian context. paper room.ipsa.org/papers/paper_33195.pdf.
14. Pierre, J. (2000). Debating governance. Oxford: Oxford University Press, pp. 54
15. Anton, B. (n.d). Good Governance the paradigm of contemporary development policy. Bad governance and difficult partnerships – the challenges of the 21st Century. KAS, pp. 42-43
16. Boix, Carles and Stokes, Susan C. (2007)*The Oxford Handbook of Comparative Politics*, Oxford University Press, New York.

Ashish Alok
Research Scholar
Department of Political Science
Dr. Shyama Prasad Mukherjee University

44

एकता एवं समता के पोषकः संत रविदास

डॉ0 संजय कुमार

सारांश

तीन सजावत देश को,सती संत और शूर।
तीन लजावत देश को,कपटी,कायर, क्रूर।

भारत संतों, सतियों और शूर वीरों का देश रहा है।इनके कारण भारत विश्व गुरु बना और विश्व में सम्मानित हुआ।कपटी,कायर और क्रूर लोगों के कारण भारत पराजित और लज्जित हुआ।यूनान के सुप्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तू ने कभी कहा था कि परम पिता परमेश्वर को जब अपने द्वारा निर्मित सृष्टि के लोगों से वार्तालाप करना होता है तो वह केवल दो को माध्यम बनाता है–या तो वह संतों के मुखारविंद से बोलता है या कवियों के मुखारविंद से। भारतवर्ष में अनेक संत महात्मा हुए हैं और भविष्य में भी होंगे लेकिन संत रविदास के समकक्ष होंगे या नहीं यह विचारणीय पहलू है।

संत गुरु रविदास भारत के महान संतों में से एक परम संत शिरोमणि रहे हैं, जिन्होंने अपना जीवन समाज सुधार कार्य के लिए समर्पित कर दिया। समाज से जाति विभेद को दूर करने में रविदास जी का महत्वपूर्ण योगदान रहा। वो ईश्वर को पाने का एक ही मार्ग जानते थे और वो है 'भक्ति', इसलिए तो उनका एक मुहावरा आज भी बहुत प्रसिद्ध है कि, 'मन चंगा तो कठौती में गंगा'।

रविदास जी का जन्म
==========

रविदास जी के जन्म को लेकर कई मत हैं। लेकिन रविदास जी के जन्म पर एक दोहा खूब प्रचलित है–

चौदस सो तैंसीस की,माघ सुदी पन्दरास।
दुखियों के कल्याण हित,प्रगटे श्री गुरु रविदास।

इस पंक्ति के अनुसार गुरु रविदास का जन्म माघ मास की पूर्णिमा को रविवार के दिन संवत् 1433 (यानि सन् 1376 ई)को हुआ था। रविवार के दिन इनका जन्म हुआ, इसीलिए इनका नाम रविदास पड़ा। उत्तर प्रदेश मध्यप्रदेश और राजस्थान में इन्हें रैदास भी कहा जाता है। हर साल माघ मास की पूर्णिमा तिथि को रविदास जयंती के रूप में मनाया जाता है जो कि इस वर्ष 24 फरवरी 2024 को है।इनका निधन अनुमानतः 1518 में वाराणसी में हुआ।

संत रविदास जी का जन्म 15 वीं शताब्दी में उत्तर प्रदेश के वाराणसी जिले में गोवर्धन पुर गांव में एक मोची परिवार में हुआ था। इनकी माता का नाम करमा देवी (कलसा) और पिता का नाम संतोख दास (रग्घू) था। इनके दादा का नाम श्री कालूराम और दादी का नाम श्रीमती लखपति देवी और पत्नी का नाम लोना देवी और पुत्र का नाम विजय दास है।इनके पिता श्री जाति के अनुसार जूते बनाने का पारंपरिक पेशा करते थे, जो कि उस काल में निम्न जाति का माना जाता था। लेकिन अपनी सामान्य पारिवारिक पृष्ठभूमि के बावजूद भी रविदास जी भक्ति आंदोलन, हिंदू धर्म में भक्ति और समतावादी आंदोलन में एक प्रमुख व्यक्ति के रूप में उजागर हुए। 15 वीं शताब्दी में रविदास जी द्वारा चलाया गया भक्ति आंदोलन उस समय का एक बड़ा आध्यात्मिक आंदोलन था,जो समता मूलक था।

समाज के लिए संत गुरु रविदास का योगदान
==========

संत शिरोमणि श्री गुरु रविदास जी एक महान संत और समाज सुधारक थे। भक्ति, सामाजिक सुधार, मानवता के योगदान में उनका जीवन समर्पित रहा।

धार्मिक योगदानरू– भक्ति और ध्यान में गुरु रविदास का जीवन समर्पित रहा। उन्होंने भक्ति के भाव से कई गीत, दोहे और भजनों की रचना की, आत्मनिर्भरता, सहिष्णुता और एकता उनके मुख्य धार्मिक संदेश थे। हिंदू धर्म के साथ ही सिख धर्म के अनुयायी भी गुरु रविदास के प्रति श्रद्धा भाव रखते हैं। रविदास जी की 41 कविताओं को सिखों के पांचवे गुरु अर्जुन देव ने पवित्र ग्रंथ आदिग्रंथ या गुरुग्रंथ साहिब में शामिल कराया था।

सामाजिक योगदानः– समाज सुधार में भी गुरु रविदास जी का विशेष योगदान रहा। इन्होंने समाज से जातिवाद, भेदभाव और सामाजिक असमानता के खिलाफ होकर समाज को समानता और न्याय के प्रति प्रेरित किया।संत रविदास के विचार धर्म,समाज और मानवता से जुड़े थे। उन्होंने समाज में असमानता, भेद–भाव, उत्पीड़न, उच्छृंखलता और अन्यान्य के खिलाफ लड़ाई लड़ी थी। उनके विचारों में धर्म और समाज के संबंधों का विस्तार पूर्वक उल्लेख मिलता है।संत रविदास के विचारों के मुख्य संदर्भों में श्रद्धा,सेवा, एकता,नेता, समानता,संयम, आदर्शों का पालन, प्रेम और समझौता शामिल हैं।वे सभी लोगों के साथ एक जैसे बराबरी की मांग करते थे।उनके अनुयायियों का कहना है कि संत रविदास जी के धर्म के महत्व का सभी लोगों तक पहुंचाने के लिए कई प्रचार यात्राएं भी की थी।वे एकता,समता, स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय के पोषक थे।सच तो यह है कि आधुनिक भारत के आध्यात्मिक नेपोलियन कहे जाने वाले विवेकानंद, राष्ट्रपिता महात्मा गांधी और संविधान निर्माता डा बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर पर उनके विचारों का गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है।

शिक्षा और सेवाः– गुरु रविदास जी ने शिक्षा के महत्व पर जोर दिया और अपने शिष्यों को उच्चतम शिक्षा पाने के लिए प्रेरित किया।अपने शिष्यों को शिक्षित कर उन्होंने शिष्यों को समाज की सेवा में समर्थ बनाने के लिए प्रेरित किया। मध्यकाल की प्रसिद्ध संत मीराबाई भी रविदास जी को अपना आध्यात्मिक गुरु मानती थीं।

रविदासजी अत्यंत धार्मिक प्रवृत्ति के तथा अत्यंत दयालु थे वे

जूते बनाने का कार्य करते थे ,ऐसा करने में उन्हें बहुत खुशी मिलती थी और वे पूरी लगन तथा परिश्रम से अपना कार्य करते थे।

रविदास का वैशिष्ट्यः—उनका जन्म ऐसे समय में हुआ था जब उत्तर भारत के कुछ क्षेत्रों में मुगलों का शासन था, चारों ओर अत्याचार, गरीबी, भ्रष्टाचार व अशिक्षा का बोलबाला था। उस समय मुस्लिम शासकों द्वारा प्रयास किया जाता था कि अधिकांश हिन्दुओं को मुस्लिम बनाया जाए। संत रविदास की ख्याति लगातार बढ़ रही थी जिसके चलते उनके लाखों भक्त थे जिनमें हर जाति के लोग शामिल थे। यह सब देखकर एक मुस्लिम श्सदना पीरश उनको मुसलमान बनाने आया था। उसका सोचना था कि यदि रविदास मुसलमान बन जाते हैं तो उनके लाखों भक्त भी मुस्लिम हो जाएंगे। ऐसा सोचकर उनपर हर प्रकार से दबाव बनाया गया था, लेकिन संत रविदास तो संत थे उन्हें किसी हिन्दू या मुस्लिम से नहीं मानवता से मतलब था।

संत रविदासजी बहुत ही दयालु और दानवीर थे। संत रविदास ने अपने दोहों व पदों के माध्यम से समाज में जातिगत भेदभाव को दूर कर सामाजिक एकता पर बल दिया और मानवतावादी मूल्यों की नींव रखी। रविदासजी ने सीधे—सीधे लिखा किः—

श्रैदास जन्म के कारने, होत न कोई नीच।
नर कूं नीच कर डारि है, ओछे करम की नीच।

यानी कोई भी व्यक्ति सिर्फ अपने कर्म से नीच होता है। जो व्यक्ति गलत काम करता है वो नीच होता है। कोई भी व्यक्ति जन्म के हिसाब से कभी नीच नहीं होता। संत रविदास ने अपनी कविताओं के लिए जनसाधारण की ब्रजभाषा का प्रयोग किया है। साथ ही इसमें अवधी, राजस्थानी, खड़ी बोली और रेख्ता यानी उर्दू—फारसी के शब्दों का भी मिश्रण है। रविदासजी के लगभग चालीस पद सिख धर्म के पवित्र धर्मग्रंथ श्गुरुग्रंथ साहबश में भी सम्मिलित किए गए है।

स्वामी रामानंदाचार्य वैष्णव भक्तिधारा के महान संत रहे हैं। संत रविदास उनके शिष्य थे। संत रविदास तो संत कबीर के समकालीन व गुरु भाई माने जाते हैं। स्वयं कबीरदास जी ने श संतन में रविदास श कहकर इन्हें मान्यता दी है। राजस्थान की कृष्ण—भक्त कवयित्री मीराबाई उनकी शिष्या थीं। यह भी कहा जाता है कि चित्तौड़ के राणा सांगा की पत्नी झाली रानी उनकी शिष्या बनीं थीं। वहीं चित्तौड़ में संत रविदास की छतरी बनी हुई है। मान्यता है कि वे वहीं से स्वर्गारोहण कर गए थे। कहते हैं कि वाराणसी में 1540 ई. में उन्होंने देह छोड़ दी थी। वाराणसी में संत रविदास का भव्य मंदिर और मठ है। जहां सभी जाति के लोग दर्शन करने के लिए आते हैं। वाराणसी में श्री गुरु रविदास पार्क है, जो नगवा में उनकी स्मृति के रुप में बनाया गया है। ईश्वर के प्रति उनकी भक्ति अभिन्नता और अद्वैत की भक्ति है। उनका यह पद उनकी इसी भावना का डिम डिम महाघोष हैरू—

अब तो राम नाम रट लागी।
प्रभु जी तुम चंदन हम पानी।
जाकी अंग अंग वास समानी।
प्रभु जी तुम घन वन हम मोरा।
जैसे चितवत चंद चकोरा।
प्रभु जी तुम दीपक हम बाती।
जाकी जोत बरै दिन राती।
प्रभु जी तुम मोती हम धागा।
जैसे सोनहि मिलत सोहागा।
प्रभु जी तुम स्वामी हम दासा।
ऐसी भक्ति करै रैदासा।

संदर्भ ग्रंथः—

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल —हिंदी साहित्य का इतिहास,नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी,1995
2. डा नगेंद्र सं हिंदी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली 2005
3. डा विनय कुमार सं.मध्यकालीन काव्य,भारती भवन , पटना 1990

डॉ0 संजय कुमार
हिंदी विभाग
संत जेवियर्स कालेज, रांची
चलभाष —9431902923

45

जयशंकर प्रसाद की कालजयिता

डॉ0 चंद्र मणि किशोर

सारांश

आधुनिक हिंदी साहित्य के उन्नायकों में जयशंकर प्रसाद का नाम अग्रगण्य है। हिंदी के अधिकांश समालोचकों ने उन्हें आधुनिक युग का सर्वश्रेष्ठ महाकवि घोषित किया है। छायावाद नामक हिंदी के नवीन काव्यान्दोलन के उन्मेष का श्रेय उन्हें दिया जाता है। इसमें संदेह नहीं कि वे एक बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार रहे हैं। आधुनिक हिन्दी के जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के बाद प्रसाद जी का ही एकमात्र ऐसा व्यक्तित्व और कृतित्व रहा है,जिसने साहित्य के सभी पक्षों को अपनी तूलिका से अलंकृत किया। विशेष रूप से काव्य और नाटक के क्षेत्रों में तो उनकी समकक्षता का दावा कम ही मिलेंगे। उनकी कुछ प्रमुख कृतियां (कामायनी , स्कंदगुप्त आदि) साहित्य का प्रतिमान बनी बैठी हैं।

शिव पक्ष को साहित्य में साहित्य का मूलाधार मानकर चलने वाले द्विवेदी युग के चरमोत्कर्ष के समय उपदेशात्मक रूप का निषेद्ध कर प्रेम,सत्य और सौंदर्य के महत्व को प्रतिष्ठापित करने वाले जय शंकर प्रसाद जी का जन्म 31 जनवरी 1889 (सोमवार,माघ शुक्ल पक्ष दशमी) को उत्तर प्रदेश के वाराणसी के एक प्रतिष्ठित वैश्य परिवार (सुंघनी साहु) में हुआ था और अल्पायु में (47 वर्ष) ही क्षय रोग के कारण उनका वाराणसी में 15 नवंबर 1937 में निधन हो गया। उन्होंने तीन विवाह किये। प्रथम विवाह 1909 में विंध्यवासिनी देवी के साथ हुआ, जिनका आकस्मिक निधन 1916 में क्षय रोग से हो गया।दूसरा विवाह 1917 में सरस्वती देवी के साथ हुआ, उनका निधन भी क्षय रोग से 1919 में हो गया।अब वे अपने वैवाहिक जीवन से हताश और निराश हो गये थे, लेकिन वंश वृद्धि और अपनी भाभी के विशेष आग्रह पर उन्होंने तीसरा विवाह कमला देवी के साथ 1919 में किया; जिससे शिव कृपा से उनके एकलौते पुत्र रत्न शंकर प्रसाद का जन्म 1922 में हुआ।

प्रसाद जी की स्कूली शिक्षा आठवीं कक्षा तक हुई, लेकिन उन्होंने अपने घर पर स्वाध्याय से हिंदी, संस्कृत , फारसी और अंग्रेजी की शिक्षा अपने गुरुओं के सौजन्य से प्राप्त की। प्रसाद जी के आरंभिक गुरु मोहिनी लाल गुप्त रसमय थे, जिससे उन्होंने हिंदी पढ़ी। प्रसाद जी के व्यक्तित्व निर्माण में अनेक गुरुओं का योगदान रहा है। उन्होंने गोपाल बाबा और हरिहर महाराज से संस्कृत और दीनबंधु ब्रह्म चारी से संस्कृत और उपनिषदों का ज्ञान प्राप्त किया। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के संस्कृत प्राध्यापक महा महोपाध्याय पंडित देवी प्रसाद शुक्ल कवि चक्रवर्ती को प्रसाद जी का काव्य गुरु माना जाता है। प्रसाद जी ने इस तथ्य को झूठला दिया कि वास्तविक ज्ञान केवल विद्यालयों में ही प्राप्त किया जा सकता है।

प्रसाद जी का समय जागृति और नवचेतना का समय था। एक ओर खड़ी बोली काव्य–धारा में सुधार वाद की आवाज बुलंद थी,तो दूसरी ओर आधुनिक कवि रीतिकालीन श्रृंगार का आंचल छोड़ने को तैयार न थे। खड़ी बोली के सामने ब्रजभाषा चुनौती बनकर खड़ी थी और प्रेम के समकक्ष द्विवेदी युगीन सुधार वाद।बढ़ती हुई राष्ट्रीय चेतना के प्रभाव में खड़ी बोली गद्य की भाषा बनने की दिशा में डगमगाती हुई सी आगे बढ़ रही थी,ऐसे समय जय शंकर प्रसाद ने साहित्य जगत में प्रवेश किया।

हिंदी में बहुमुखी प्रतिभा संपन्न कलाकारों का अभाव नहीं है। परंतु प्रसाद जी उनमें शीर्ष स्थानीय माने जा सकते हैं। साहित्य की प्रायः सभी प्रमुख विधाओं पर उनकी लेखनी साधिकार चली हैरू–यथा कविता, कहानी, उपन्यास,नाटक, एकांकी, निबंध और आलोचना।पृथक –पृथक विधाओं की दृष्टि से उनके संपूर्ण रचना संसार को निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता हैरू–

(क) कवितारू–प्रेम –पथिक (खंड काव्य) चित्राधार (ब्रजभाषा काव्य संकलन) कानन–कुसुम,महाराणा का महत्व,प्राण–मादन,रस कण कनक ढरे,झरना,आंसू ,लहर और कामायनी (महाकाव्य 1936)

(ख) नाटकरू–1 सज्जन((1910–11) 2 प्रायश्चित (1914)3 राज्य श्री (1915) 4 विशाख (1921) 5 अजातशत्रु (1922) 6 जनमेजय का नागयज्ञ (1926)7 कामना (1927) 8 स्कंदगुप्त (1928) 9 एक घूंट (1930) 10 चंद्र गुप्त (1931) 11 ध्रुवस्वामिनी (1933)

(ग) गीति नाट्यरू–करुणालय (1912)

(घ) एकांकीरू–अग्नि–मित्र।

(ड़)चंपू काव्यरू– उर्वशी

(च) उपन्यास रू–ककांल, तितली और इरावती (अपूर्ण)।

(छ) कहानी संग्रहरू–छाया, प्रतिध्वनि,आकाश –दीप,आंधी, इंद्रजाल,देवरथ।

(ज) निबंध एवं आलोचनारू काव्य और कला तथा अन्य निबंध।

प्रसाद जी के समग्र साहित्य को देखें तो एक बात स्पष्ट है कि उन्होंने साहित्य में बराबर नये प्रयोग किये।काव्य की दृष्टि से वे सही अर्थों में छायावाद के उद्भावक थे।उनकी कविताओं में सर्वप्रथम छायावाद की विशिष्टताएं उजागर हुईं। इसीलिए झरनाश को छायावाद की प्रथम प्रयोग शाला कहा गया है।उनकी कृति आंसू भी बेहद चर्चित हुई। आंसू की ये पंक्तियां कितनी मार्मिक और संवेदना पूर्ण हैंरू–

जो घनीभूत पीड़ा थी,
मस्तक में स्मृति सी छाई।
दुर्दिन में आंसू बनकर,
वह आज बरसने आई।

प्रेम संदर्भों में वेदना की गहराई में जितना प्रसाद डूबे, उतना कोई अन्य छायावादी कवि नहीं। सुमित्रानंदन पंत विरह में प्रेम के विभिन्न सामाजिक संदर्भों को अभिव्यक्त करने लगते हैं। महादेवी वर्मा वियोग में तन्मय होकर संयोग की कल्पना करने लगती हैं। सूर्य कांत त्रिपाठी निराला आध्यात्म में डूबे जाते हैं, लेकिन प्रसाद की वेदना अनुभूति को कोई आध्यात्मिक अर्थ न दिया जाए तो भी उसकी उत्कृष्टता में किसी

प्रकार का व्याघात नहीं पहुंचता।

संदर्भ ग्रंथः–

1. हिंदी साहित्य का इतिहास –आचार्य राम चंद्र शुक्ल,नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी,1990
2. हिंदी साहित्य का इतिहास सं.डा नगेंद्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली 2005
3. कामायनी विमर्श –डा किशोर साहु, अरविन्द प्रकाशन, पटना 2015
4. प्रसाद के नाटक –डा सिद्ध नाथ कुमार,अनुपम प्रकाशन पटना 1990
5. कामायनी का प्रवृत्ति मूलक अध्ययन –डा कामेश्वर प्रसाद सिंह, अनुसंधान प्रकाशन आचार्य नगर कानपुर 1965
6. प्रसाद की गद्य भाषा का अर्थ सौंदर्य –डा बलराम मिश्र,समीक्षा प्रकाशन, मुजफ्फरपुर 2017

डॉ0 चंद्र मणि किशोर
वरीय हिंदी शिक्षक
जिला स्कूल, रांची
चलभाषरू7979852019
9431595318